जीवन-यात्रा

(पूज्य श्री १०५ क्षुल्लक गणेशप्रसादजी वर्णी द्वारा लिखित)

'मेरी जीवन गाथा' प्रथम-द्वितीय भाग का

(संक्षिप्त संस्करण)

संक्षेपकार—

विद्यार्थी नरेन्द्र

एम० ए०, साहित्याचार्य

तथा

सौ० रमादेवी जैन

शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, ज्ञानचन्द्रिका

प्रकाशक—

सुषमा प्रकाशन सतना म० प्र०

अपनी अपनी बात

पूज्य श्री १०५ क्षुल्लक गणेशप्रसादजी वर्णी न्यायाचार्य महाराज भारत के आध्यात्मिक महामना सन्त हैं. उनके सम्बन्ध में जितना कहा जाय, जितना लिखा जाय; थोड़ा है. ८६ वर्ष के वयोवृद्ध जीवन में भी यह परहितकातर करुण हृदय लिये अपने प्रवचन से जन-कल्याण कर रहे हैं. यही उनका व्रत है, यही उनका नियम है और यही उनका करणीय कार्य है. ऐसे परम साधक सन्त के जीवन से लोग अधिकाधिक शिक्षा ग्रहण कर सकें यही सोचकर उनके द्वारा लिखित—'मेरी जीवन गाथा' नामक उनकी जीवनी के पूर्वार्द्ध तथा उत्तरार्द्ध – दोनों भागों का संक्षिप्त संस्करण—'जीवन यात्रा' तैयार की गई है १२०० पृष्ठों की दोनों भाग की सामग्री को पूज्य श्री के शब्दों में ही संक्षिप्त करते करते २३२ पृष्ठों में लाया गया है. विशेषता यह है कि (१) 'मेरी जीवन गाथा' में यत्र-तत्र बिखरी हुई घटनाओं को इसमें क्रमबद्ध कर दिया गया है, तथा (२) शीर्षक एवं उपशीर्षक प्रायः बदल कर रोचक रखे गये हैं. इसका अधिक श्रेय श्रीमती रमादेवी को है.

प्रकाशन भी जितना संभव हो सका है; सब तरह रोचक बनाने का प्रयत्न किया है. यह भी प्रयास किया है कि पुस्तक अधिक से अधिक संख्या में प्रकाशित होकर कम से कम मूल्य में प्रचारित की जाय. आशा है पाठक पूज्य श्री के आदर्श जीवन से सत्शिक्षा ग्रहण कर आत्म कल्याण करेंगे.

विनीत—

मकर संक्रान्ति, वि० सं० २०१६

विद्यार्थी नरेन्द्र,

नीरज जैन,

धर्म प्रेमी श्री लाला फिरोजीलालजी देहली

(संक्षिप्त जीवन परिचय)

श्री लाला फिरोजीलालजी का जन्म बैशाखसुदी १५ वि० सं० १९६३ को गोहाना में हुआ. आपके पिता लाला सीतारामजी का स्वर्गवास २४ वर्ष की स्वल्प आयु में हो जाने के कारण आपकी माता श्रीमती मनोहरी देवी जी की छत्रछाया में ही आपका तथा आपके बड़े भाई श्री लाला वसन्तलालजी का पालन-पोषण तथा शिक्षा हुई. श्री लाला फिरोजीलालजी का जन्म पितृ वियोग के २ माह बाद हुआ अतः माँ ही आपका सर्वस्व थीं. उन्ही की गोद इनका कल्पवृक्ष थी, उन्ही का पावन प्यार इनका चिन्तामणि रत्न था.

श्रीलाला फिरोजीलालजी को सन १९२४ में गवर्नमेन्ट हाई-स्कूल दिल्ली से मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद ही गृहस्थ बन जाने से आजीविका हेतु कर्मक्षेत्र में जुट जाना पड़ा. अनेक स्वीकृत कार्यों को सफलता के साथ निर्बाह करने के पश्चात् अब दिल्ली में लकड़ी के स्वतन्त्र व्यवसायी हैं. कुशल व्यापारी होने के साथ ही आप एक धर्मनिष्ठ, पूज्य श्रीवर्णीजी के अनन्य भक्त हैं. पूज्य श्री के शब्दों में "श्री लाला फिरोजीलालजी बहुत उदार और योग्य हैं. आप बहुत ही सरल और सज्जन प्रकृति के हैं. आपके कुटुम्ब का बहुत ही उदार भाव है." श्रीगणेशवर्णी अहिंसा प्रतिष्ठान दिल्ली, जनता अस्पताल गोहाना, छात्रवृत्ति फण्ड आदि पुनीत कार्यों में आपने अब तक लगभग डेढ़ लाख रुपये दान किये हैं. आपकी धर्मपत्नी श्रीमती वस्सी देवी तथा आपके दामाद श्रीबाबू ज्ञानचन्द्रजी एवं सुपुत्री श्रीमती सुशीला देवीजी आपको सदा ऐसे सत्कार्यों में सहयोग करते रहते हैं. यह सब चिरायु हों, यही हमारी शुभकामना है.

—प्रकाशक

पूज्य श्री के साथ लाला फिरोजी लाल जी दिल्ली वाले

कहाँ क्या है ?

पृष्ठ

'जीवन-यात्रा'

पर

पूज्य श्री वर्णीजी का अभिमत

'मेरी जीवन गाथा' पूर्वार्द्ध तथा उत्तरार्द्ध (प्रथम भाग-द्वितीय भाग) का यह संक्षिप्त संस्करण है. इसमें आज तक की सभी घटनाओं का प्रामाणिक ढंग से समावेश किया गया है.

मेरी जीवनी को विशेष ख्यापन मिले यह मैं नहीं चाहता. आशा है इससे पाठक गण मात्र मोक्ष मार्ग की शिक्षा लेंगे.

ईसरी
अगहन सुदी १०
सं० २०१६

आ० शु० चि०
गणेश वर्णी

श्री गणेश ही सतत साधना-पथिक तुम्हारा नाम है,
अतल ज्ञान गंगा के ओ-भागीरथ तुम्हें प्रणाम है.

—नीरज

जीवन–यात्रा

मङ्गलाचरण

नमः समयसाराय स्वानुभूत्या चकासते,
चित्स्वभावाय भावाय सर्वभावान्तरच्छिदे,

१

जीवन के प्रभात में

जन्म समय तथा पितृ परिचय—

मेरा नाम गणेश वर्णी है. विक्रम सम्वत् १६३१ के कुंवार वदि ४ को गाँव हसेरा जिला ललितपुर (झाँसी) में मेरा जन्म हुआ. पिता का नाम श्री हीरालाल जी तथा माता का नाम उजयारी था. पिता जी के दो भाई और थे. पिता जी की स्थिति सामान्य थी. वे साधारण दूकानदारीके द्वारा अपने कुटुम्ब का पालन करते थे. उस समय एक रुपया में एक मनसे अधिक गेहूँ, तीन सेर घी और आठ सेर तिल का तेल मिलता था. सब लोग कपड़ा प्रायः घर के काते सूतका पहिनते थे. सबके घर चरखा चलता था. घर-घर दूध दही की नदियाँ बहतीं थीं. अनाचार नहीं के बराबर था. मनुष्यों के शरीर सुदृढ़ और बलिष्ठ होते थे. वे अत्यन्त सरल प्रकृति के होते थे, प्रसन्न चित्त दिखाई देते थे. क्षय रोग का सर्वथा अभाव था. घर घर गाय रहती थीं. दूध और दहीकी नदियाँ बहती थीं.

देहातमें दूध और दही की बिक्री नहीं होती थी. तीर्थ-यात्रा सब पैदल करते थे. लोक प्रसन्नचित्त दिखाई देते थे.

मेरी जाति असाटी थी. यह प्रायः बुन्देलखण्ड में पाई जाती है. इस जाति वाले वैष्णव-धर्मानुयायी होते हैं. परन्तु हमारे पिता का आचरण जैनियोंके सदृश हो गया था. वे रात्रि भोजन नहीं करते थे. उनकी जैन धर्म में दृढ़ श्रद्धा थी. इसका कारण णमोकार मन्त्र था. वह एक बार दूसरे गाँव को जा रहे थे. साथ में बैल पर दूकानदारी का सामान था. मार्ग में भयङ्कर वन पार करके जाना था. ठीक बीच में जहाँ दो कोस इधर-उधर गाँव न था शेर शेरनी आ गये. २० गज का फासला था. मेरे पिताजी की आँखों के सामने अंधेरा छा गया. उन्होंने मनमें णमोकार मन्त्र का स्मरण किया, दैवयोग से शेर शेरनी मार्ग काट कर चले गये. यही उनकी जैनमत में श्रद्धा का कारण हुआ.

बचपन और विद्यार्थी जीवन—

बचपनमें मुझे असाताके उदयसे सुकी (सूखा) रोग हो गया था साथ ही लीवर आदि भी बढ़ गया था. फिर भी आयुष्कर्मके निषेकोंकी प्रबलताके कारण इस संकटसे मेरी रक्षा हो गई थी. मेरी आयु जब ६ वर्षकी हुई तब मेरे पिता मड़ावरा आगये थे. मैंने ७ वर्षकी अवस्थामें विद्यारम्भ किया और १४ वर्षकी अवस्थामें मिडिल पास हो गया. चूंकि यहाँ पर यहीं तक शिक्षा थी अतः आगे नहीं बढ़ सका. मेरे विद्यागुरु श्रीमान् पण्डित मूलचन्द्रजी ब्राह्मण थे जो बहुत सज्जन थे. उनके साथ मैं गाँवके बाहर श्रीरामचन्द्रजीके मन्दिरमें जाया करता था. वहाँ रामायण पाठ होता था. उसे मैं सानन्द श्रवण करता था किन्तु मेरे घर के सामने एक जिनालय था इसलिये वहाँ भी

आया करता था. उस मुहल्लेमें जितने घर थे सब जैनियोंके थे, उन लोगोंके सहवाससे प्रायः हमारे पिताका आचरण जैनियोंके सदृश हो गया था.

मैं १० वर्ष का था. सामने मन्दिरजी के चबूतरे पर प्रति दिन पुराण-प्रवचन होता था. एक दिन त्याग का प्रकरण आया. बहुत से भाईयोंने प्रतिज्ञा ली, मैंने भी उसी दिन आजन्म रात्रि भोजन त्याग दिया. इसी त्यागने मुझे जैनी बना दिया.

गुरुजी बहुत ही भद्र प्रकृतिके थे अतः वे मेरे श्रद्धानके साधक हो गये. एक दिन मैं उनका हुक्का भर रहा था, मैंने हुक्का भरनेके समय तमाखू पीनेके लिये चिलमको पकड़ा, हाथ जल गया. मैंने हुक्का जमीन पर पटक दिया और गुरुजीसे कहा, 'महाराज ! जिसमें ऐसा दुर्गन्धित पानी रहता है उसे आप पीते हैं ? मैंने तो उसे फोड़ दिया, अब जो करना हो सो करो.'

गुरुजी प्रसन्न होकर कहने लगे 'तुमने दस रुपयेका हुक्का फोड़ दिया, अच्छा किया, अब न पियेंगे, एक बला टली.' मेरी प्रकृति बहुत भीरु थी, मैं डर गया था परन्तु उन्होंने सान्त्वना दी 'कहा—भयकी बात नहीं.'

१२ वर्षकी अवस्था में मेरे कुल पुरोहित ने मेरा यज्ञोपवीत संस्कार कराया, मन्त्रका उपदेश दिया. साथमें यह भी कहा कि यह मन्त्र किसीको न बताना अन्यथा अपराधी होगे.

मैंने कहा-'महाराज ! आपके तो हजारों शिष्य हैं. आपको सबसे अधिक अपराधी होना चाहिये.

इस पर पुरोहितजी मेरे ऊपर बहुत नाराज हुए. माँने भी बहुत तिरस्कार किया, यहाँ तक कहा कि ऐसे पुत्रसे तो अपुत्रवती

मिडिल क्लासमें पढ़ते समय मेरे एक मित्र थे जिनका नाम तुलसीदास था. ये ब्राह्मण पुत्र थे. मुझे दो रुपया मासिक छात्रवृत्ति मिलती थी. वह रुपया मैं इन्हींको दे देता था. जब मैं मिडिल पास कर चुका तब मेरे गांवमें पढ़ने के साधन न थे अतः अधिक विद्याभ्याससे मुझे वञ्चित रहना पड़ा. ४ वर्ष मेरे खेल कूदमें गये. पिताजी ने बहुत कुछ कहा—'कुछ धंधा करो, परन्तु मुझसे कुछ नहीं हुआ.।

गृहस्थ-जीवन में प्रवेश तथा पितृ-वियोग—

मेरे दो भाई और थे, एक का विवाह हो गया था, दूसरा छोटा था. वे दोनों ही परलोक सिधार गये. मेरा विवाह १८ वर्ष में हुआ था. विवाह होनेके बाद ही पिताजी का स्वर्गवास हो गया था.

स्वर्गवास के समय उन्होंने मुझे यह उपदेश दिया—

'बेटा, संसार में कोई किसी का नहीं, यह श्रद्धान दृढ़ रखना, तथा मेरी एक बात और दृढ़ रीतिसे हृदयंगम कर लेना. वह यह कि मैंने णमोकार मन्त्रके स्मरणसे अपनेको बड़ी बड़ी आपत्तियोंसे बचाया है. तुम निरन्तर इसका स्मरण रखना. जिस धर्म में यह मंत्र है उस धर्म की महिमा का वर्णन करना हमारे से तुच्छ ज्ञानियों-द्वारा होना असम्भव है. तुमको यदि संसार बन्धनसे मुक्त होना इष्ट है तो इस धर्म में दृढ़ श्रद्धान रखना और इसे जाननेका प्रयास करना. बस, हमारा यही कहना है.'

जिस दिन उन्होने यह उपदेश दिया था उसी दिन सायंकाल को मेरे दादा जिनकी आयु ११० वर्ष की थी बड़े चिन्तित हो उठे. मेरी अपकीर्ति होगी—'बुड्ढा तो बैठा रहा पर लड़का मर गया.' इतना कह कर वे सो गये. प्रातःकाल मैं दादाको जगाने

गया पर कौन जागे ? दादाका स्वर्गवास हो चुका था. उनका दाह कर आये ही थे कि मेरे पिता का भी वियोग हो गया. हम सब रोने लगे, अनेक वेदनाएं हुई पर अन्त में सन्तोष कर बैठ गये.

कर्म क्षेत्र में मेरे पिता ही व्यापार करते थे, मैं तो बुद्धू था ही—कुछ नहीं जानता था. अतः पिताके मरनेके बाद मेरी माँ बहुत व्यथित हुई. इससे मैंने मदनपुर गाँवमें मास्टरी करली. वहाँ चार मास रहकर नार्मल स्कूल में शिक्षा लेने के अर्थ आगरा चला गया परन्तु वहाँ दो मास ही रह सका. इसके बाद अपने मित्र ठाकुरदासके साथ जयपुरकी तरफ चला गया. एक मास बाद इन्दौर पहुँचा, शिक्षा विभागमें नौकरी कर ली. देहातमें रहना पड़ा. वहाँ भी उपयोग की स्थिरता न हुई अतः फिर देश चला आया.

२

जीवन संग्राम

दो मासके बाद द्विरागमन हो गया. मेरी स्त्री भी माँ के बहकावेमें आ गई और कहने लगी 'तुमने धर्म परिवर्तन कर बड़ी भूल की, अब फिर अपने सनातन धर्ममें आ जाओ और सानन्द जीवन बिताओ. ये विचार सुनकर मेरा उससे प्रेम हट गया. मुझे आपत्तिसी जंचने लगी; परन्तु उसे छोड़नेमें असमर्थ था. थोड़े दिन बाद मैंने कारीटोरन गाँवकी पाठशालामें अध्यापकी करली और वहीं उसे बुला लिया. दो माह आमोद प्रमोदमें अच्छी तरह निकल गये, मेरे चचेरे भाई लक्ष्मणका

बिवाह आ गया. उसमें वह गई, मेरी माँ भी गईं, और मैं भी गया. वहाँ पंक्ति भोजमें मुझसे भोजन करनेके लिये आग्रह किया गया. मैंने काकाजीसे कहा कि 'यहाँ तो अशुद्ध भोजन बना है. मैं पंक्तिभोजन में सम्मिलित नहीं हो सकता.' इससे मेरी जातिवाले बहुत क्रोधित हो उठे, नाना अवाच्य शब्दोंसे मैं कोसा गया. उन्होंने कहा—'ऐसा आदमी जाति बहिष्कृत क्यों न किया जाय, जो हमारे साथ भोजन नहीं करता किन्तु जैनियोंके चौकोंमें खा आता है.'

मैंने उन सबसे हाथ जोड़कर कहा कि 'आपकी बात स्वीकार है, और दो दिन रहकर टीकमगढ़ चला आया. वहाँ आकर मैं श्रीराम मास्टरसे मिला. उन्होंने मुझे जतारा स्कूल का अध्यापक बना दिया.

यहाँ मेरी जैनधर्ममें और अधिक श्रद्धा बढ़ने लगी. दिन रात धर्मश्रवणमें समय जाने लगा. संसारकी असारता पर निरन्तर परामर्श होता था. यहां कड़ोरेलालजी भायजी अच्छे तत्त्वज्ञानी थे. पूजनके बड़े रसिक थे. मैं कुछ कुछ स्वाध्याय करने लगा था और खाने पीने के पदार्थोंके छोड़ने में ही अपना धर्म समझने लगा था. चित्त तो संसार से भयभीत था ही.

एक दिन हम लोग सरोवर पर भ्रमण करने के लिये गये. वहाँ मैंने भाईजी साहबसे कहा 'कुछ ऐसा उपाय बतलाइये जिस कारण कर्मबन्धन से मुक्त हो सकूँ.'

उन्होंने कहा—'उतावली करने से कर्मबन्धनसे छुटकारा न मिलेगा.

मैंने कहा—'आपका कहना ठीक है परन्तु मेरी स्त्री और माँ हैं जो कि वैष्णवधर्म की पालनेवाली हैं. मैंने बहुत कुछ उनसे आग्रह किया कि यदि आप जैनधर्म स्वीकार करें तो मैं आपके

सहवासमें रहूँगा अन्यथा मेरा आपसे कोई सम्बन्ध नहीं।' मेरी माता और स्त्री अत्यन्त दुखी होकर रोने लगीं पर मैं निष्ठुर होकर यहाँ चला आया.

यह बात जब भायजी ने सुनी तब उन्होंने बड़ा डांटा और कहा—'तुम बड़ी गलती पर हो. तुम्हें अपनी माँ और स्त्रीका सहवास नहीं छोड़ना चाहिये. एक पत्र डालकर उन दोनों को बुला लो. यहाँ आने से उनकी प्रवृत्ति जैनधर्ममें हो जायगी.

उनका आदेश था मैंने उसे शिरोधार्य किया और एक पत्र उसी दिन अपनी मांको डाल दिया. पत्रमें लिखा था—

'हे माँ! मैं आपका बालक हूँ, बाल्यावस्थासे ही बिना किसीके उपदेश तथा प्रेरणाके मेरा जैनधर्ममें अनुराग है. बाल्यावस्थामें ही मेरे ऐसे भाव होते थे कि हे भगवन्! मैं किस कुलमें उत्पन्न हुआ हूँ? जहाँ न तो विवेक है और न कोई धर्मकी ओर प्रवृत्ति ही है. ऐसी दुर्दशामें रहकर मेरा कल्याण कैसे होगा? हे प्रभो! मै किसी जैनीका बालक क्यों न हुआ? जहाँ पर छना पानी, रात्रि भोजनका त्याग, निरन्तर जिनेन्द्र देवकी पूजन, स्तवन, स्वाध्याय, शास्त्र सभा, व्रत नियमों के पालनेका उपदेश होना आदि धर्मके कार्य होते हैं. मैं यदि ऐसे कुलमें जन्मता तो मेरा भी कल्याण होता., परन्तु आपके भयसे मैं नहीं कहता था. आपने मेरे पालन पोषणमें कोई त्रुटि नहीं की. यह सब आपका मेरे ऊपर महोपकार है. मै हृदयसे वृद्धावस्थामें आपकी सेवा करना चाहता हूँ, अतः आप अपनी वधूको लेकर यहाँ आ जावें, मैं यहाँ मदरसामें अध्यापक हूँ मुझे छुट्टी नहीं मिलती, अन्यथा मैं स्वयं आपको लेनेके लिए आता. किन्तु आपके चरणोंमें मेरी एक प्रार्थना अब भी है. वह यह कि आपने अब तक जिस धर्म में अपनी ६० वर्षकी आयु पूर्ण की अब उसे बदल कर

श्रीजिनेन्द्रदेव द्वारा प्रकाशित धर्मका आश्रय लीजिये जिससे आपका जन्म सफल हो और आपकी चरणसेविका बहूका भी सस्कार उत्तम हो. आशा है, मेरी विनयसे आपका हृदय द्रवीभूत हो जायगा. मैं चार मास तक आपके चरणोंकी प्रतीक्षा करूंगा. मैंने यह नियम कर लिया है कि जिसके जिन धर्मकी श्रद्धा नहीं उसके हाथका भोजन नहीं करूंगा. अब आपकी जैसी इच्छा हो सो करें .'

पत्र डालकर मैं निःशल्य हो गया और श्रीभायजी तथा वर्णी मोतीलालजी के सहवाससे धर्म साधनमें काल बिताने लगा. तब मर्यादाका भोजन, देवपूजा, स्वाध्याय, तथा सामायिक आदि कार्योंमें सानन्द काल जाता था.

३

धर्म माता की गोद में

एक दिन श्रीभायजी व वर्णीजी ने कहा सिमरामें चिरौंजाबाई बहुत सज्जन और त्यागकी मूर्ति हैं, उनके पास चलो.'

मैं उन दोनों महाशयों के साथ सिमरा गया. जिनालयोंके दर्शन कर चित्त बहुत प्रसन्न हुआ. दर्शन करनेके बाद शास्त्र पढ़नेका प्रसङ्ग आया. भायजी ने मुझसे शास्त्र पढ़नेको कहा. मैं डर गया. मैंने कहा—'मुझे तो ऐसा बोध नहीं जो सभा में शास्त्र पढ़ सकूं' परन्तु भाई साहबके आग्रहसे शास्त्र की गद्दी पर बैठ गया. पद्मपुराण दस पत्र बांच गया. शास्त्र सुनकर जनता प्रसन्न हुई.

बाईजी हम तीनों को भोजन के लिये ले गईं. दोनों जनें बाईजीसे वार्तालाप करने लगे, परन्तु मैं नीची दृष्टि किये चुपचाप भोजन करता रहा. यह देख बाईजीसे न रहा गया. उन्होंने भायजी व वर्णीजीसे पूछा—'क्या यह मौनसे भोजन करता है ?' उन्होंने कहा—'नहीं यह आपसे परिचित नहीं है इसीसे इसकी ऐसी दशा हो रही है'.

इस पर बाईजीने कहा—'बेटा ! सानन्द भोजन करो, मैं तुम्हारी धर्ममाता हूँ, यह घर तुम्हारे लिए है, कोई चिन्ता न करो, मैं जब तक हूँ तुम्हारी रक्षा करूंगी.'

भोजन करके बाईजीकी स्वाध्यायशालामें चला गया. वहीं पर भायजी व वर्णीजी आ गये. बाईजी भी वहीं पर आ गईं. उन्होंने मेरा परिचय पूछा. मैंने जो कुछ था वह बाईजी से कह दिया. परिचय सुनकर प्रसन्न हुईं, और उन्होंने भायजी तथा वर्णीजी से कहा—'इसे देखकर मुझे पुत्र जैसा स्नेह होता है—इसको देखते ही मेरे भाव हो गये हैं कि इसे पुत्रवत् पालूँ.'

बाईजीके ऐसे भाव जानकर भायजीने कहा 'इसकी माँ और धर्मपत्नी दोनों हैं.'

बाईजीने कहा—'उन दोनोंको भी बुला लो, कोई चिन्ता की बात नहीं, मैं इन तीनों की रक्षा करूंगी.

भायजी साहबने कहा—'इसने अपनी माँ को एक पत्र डाला है. जिसमें लिखा है कि यदि तुम चार मास में जैनधर्म स्वीकार न करोगी तो मैं तुमसे सम्बन्ध छोड़ दूंगा.

यह सुन बाईजीने भायजी को डाँटते हुए कहा—'तुमने पत्र क्यों डालने दिया ? साथ ही मुझेभी डाँटा-'बेटा ! ऐसा करना तुम्हें उचित नहीं, इस संसारमें कोई किसी का स्वामी

नहीं, तुमको कौन सा अधिकार है जो उनके धर्मका परिवर्तन कराते हो ?'

मैंने कहा—'गलती तो हुई, परन्तु मैंने तो प्रतिज्ञा ले ली थी कि यदि वह जैनधर्म न मानेगी तो मैं उससे सम्बन्ध तोड़ दूंगा. बहुत तरहसे बाईजीने समझाया परन्तु यहाँ तो मूढ़ता थी, एक भी बात समझमें न आई.

यदि दूसरा कोई होता तो मेरे इस व्यवहारसे रुष्ट हो जाता. फिर भी बाईजी शान्त रहीं, और उन्होंने समझाते हुए कहा—'अभी तुम धर्म का मर्म नहीं समझते हो इसीसे यह गलती करते हो.'

मैं फिर भी जहाँ का तहाँ बना रहा. बाईजी के इस उपदेश-का मेरे ऊपर कोई प्रभाव न पड़ा. अन्तमें बाईजीने कहा—अविवेक का कार्य अंतमें सुखावह नहीं होता. अस्तु,

सांयकालको बाईजीने दूसरी बार भोजन कराया, परन्तु मैं अबतक बाईजीसे संकोच करता था. यह देख बाईजीने फिर समझाया—'बेटा ! माँ से संकोच मत करो.'

प्रातःकाल क्षुल्लक महाराजकी बन्दना करके बहुत ही प्रसन्न चित्तसे याञ्चा की—निवेदन किया—

'महाराज ! ऐसा उपाय बताओ जिससे मेरा कल्याण हो सके. मैं अनादिकालसे इस संसार बंधनमें पड़ा हूँ. आप धन्य हैं यह आपकी ही सामर्थ्य है जो इस पद को अङ्गीकार कर आत्महितमें लगे हो. क्या कोई ऐसा उपाय है जिससे मेरा भी हित हो ?

क्षुल्लक महाराजने कहा—हमारे समागममें रहो और शास्त्र लिखकर आजीविका करो. साथ ही व्रत नियमोंका पालन करते

हुए आनन्द से जीवन बिताओ. आत्महित होना दुर्लभ नहीं'.

मैंने कहा—'आपके साथ रहना इष्ट है परन्तु आपका यह आदेश कि शास्त्रोंको लिखकर आजीविका करो मान्य नहीं.'

यह सुन पहले तो महाराज अचरजमें पड़ गये बादमें उन्होंने कहा 'यदि तुमको मेरा कहना इष्ट नहीं तो जो तुम्हारी इच्छा हो सो करो.'

वहाँ पर बाईजी भी बैठी थीं सुनकर कुछ उदास हो गईं और बोली—'बेटा! घर पर चलो' मैं उनके साथ घर चला गया.

बाईजीने घर पहुँचने पर सान्त्वना देते हुए कहा—'बेटा! चिन्ता मत करो, मैं तुम्हारा पुत्रवत् पालन करूंगी. तुम निःशल्य होकर धर्मसाधन करो और दश-लक्षण पर्वमें यहीं आ जाओ; किसीके चक्करमें मत आओ, क्षुल्लक महाराज स्वयं पढ़े नहीं है तुम्हें वे क्या पढ़ायेंगे? यदि तुम्हें विद्याभ्यास करना ही इष्ट है तो जयपुर चले जाना.'

यह बात आजसे ६० वर्ष पहलेकी है. उस समय इस प्रान्त में कहीं भी विद्याका प्रचार न था. ऐसा सुनने में आता था कि जयपुरमें बड़े-बड़े विद्वान् हैं. मैं बाईजीकी सम्मतिसे सन्तुष्ट हो मध्याह्नोपरान्त जतारा चला आया.

भाद्रमास था, संयमसे दिन बिताने लगा, पर संयम क्या वस्तु है? यह नहीं जानता था. संयम समझ कर भाद्रमास भरके लिये छहों रस छोड़ दिये थे. रस छोड़नेका अभ्यास तो था नहीं इससे महान कष्टका सामना करना पड़ा. खुराक कम हो गई और शरीर शक्तिहीन हो गया.

व्रतोंमें बाईजीके यहाँ आने पर उन्होंने व्रतका पालन सम्यक

प्रकारसे कराया और अन्तमें यह उपदेश दिया—'तुम पहले ज्ञानार्जन करो पश्चात् व्रतों को पालना. शीघ्रता मत करो, जैनधर्म संसारसे पार करनेकी नौका है, इसे पाकर प्रमादी मत होना, कोई भी काम करो, समतासे करो. जिस कार्य में आकुलता हो उसे मत करो.'

मैंने उनकी आज्ञा शिरोधार्य की और भाद्र मासके बीतने पर निवेदन किया कि 'मुझे जयपुर भेज दो.'

बाईजीने कहा—'अभी जल्दी मत करो, भेज देंगे.'

मैंने पुनः कहा—'मैं तो जयपुर जाकर विद्याभ्यास करूंगा.'

बाईजी बोलीं—'अच्छा बेटा, जो तुम्हारी इच्छा हो सो करो.'

४

जयपुर की असफल यात्रा

जाते समय बाईजीने कहा 'भैया ! तुम सरल हो, मार्गमें सावधानीसे जाना, ऐसा न हो कि सब सामान खोकर फिर वापिस आ जाओ .' मैं श्री बाईजीके चरणोंमें प्रणाम कर यात्रा को चल पड़ा. ग्वालियर पहुँचा. चम्पाबागकी धर्मशालामें ठहर गया. यहाँके मन्दिरोंकी रचना और जिन बिम्बोंके दर्शन कर जो आनन्द हुआ वह वर्णनातीत है. दो दिन इसी तरह निकल गये. तीसरे दिन दो बजे दिनमें शौचकी बाधा होनेपर आदतके अनुसार गाँवके बाहर दो मील तक चला गया. धर्मशालामें लौटकर देखता हूँ कि जिस कोठरीमें ठहरा था उसका ताला टूटा

पड़ा है और पासमें जो कुछ सामान था वह सब नदारत है. केवल बिस्तर बच गया था. इसके सिवा अंटीमें पांच आना पैसे, एक लोटा, छन्ना, डोरी, एक छतरी और एक धोती जो बाहर ले गया था इतना सामान शेष बचा था. चित्त बहुत खिन्न हुआ. 'जयपुर जाकर अध्ययन करूंगा' यह विचार अब वर्षोंके लिए टल गया. शोक-सागरमें डूब गया. किस प्रकार सिमरा जाऊं ? इस चिन्तामें पड़ गया.

शामको भूखने सताया अतः बाजारसे एक पैसेके चने और एक छदामका नमक लेकर डेरेमें आया और आनन्द से चने चाबकर सायंकाल जिन भगवानके दर्शन किये तथा अपने भाग्य की निन्दा करता हुआ कोठरीमें सो गया. प्रातःकाल सोनागिरिके लिए प्रस्थान कर दिया पासमें न तो रोटी बनानेको बर्तन थे और न सामानही था. एक गांवमें जो ग्वालियरसे १२ मील होगा वहाँ आकर दो पैसेके चने और थोड़ासा नमक लेकर एक कुएंपर आया और उन्हें आनन्द से चाबकर विश्रामके बाद सायंकाल फिर चल दिया. बारह मील चल कर फिर दो पैसे के चने लेकर ब्यालू की फिर पंच परमेष्ठी का ध्यान कर सो गया. यही विचार आया कि जन्मान्तरमें जो कमाया था उसे भोगनेमें अब आनाकानी करनेसे क्या लाभ ?

इसी प्रकार ३ या ४ दिन बाद सोनागिरि आ गया. पुजारीके बर्तनोंमें भोजन बनाकर फिर पैदल चल दतिया आया. मार्गमें चने खाकर ही निर्वाह करता था. दतियामें एक पैसा भी पास न रहा, बाजारमें गया, पासमें कुछ न था। केवल छतरी थी. दूकानदारसे कहा 'भैया ! इस छतरीको ले लो.' उसने कहा 'चोरी की तो नहीं है ? मैं चुप रह गया. आंखोंमें अश्रु आ गये परन्तु उसने उन अश्रुओंको देख कुछ भी समवेदना प्रकट न

की. कहने लगा—'लो छह आना पैसे ले जाओ. मैंने कहा—छतरी नवीन है कुछ और देदो।' उसने तीव्र स्वरमें कहा 'छह आने ले जाओ नहीं तो चले जाओ. लाचार छह आना ही लेकर चल पड़ा.

दो पैसेके चने लेकर एक कुंए पर चावे फिर चल दिया, दूसरे दिन झांसी पहुँचा जिनालयोंकी वन्दना कर बाजारमें गया परन्तु पासमें तो साढ़े पांच आना ही थे अतः एक आने के चने लेकर गांवके बाहर एक कुंए पर आया और खाकर सो गया. दूसरे दिन बरुआसागर पहुँच गया. उन दिनों मेरा किसीसे परिचय नहीं था अतः जिनालयकी वन्दना कर बाजारसे एक आनेके चने लेकर गांवके बाहर चावे और बाईजी के गांवके लिये प्रस्थान कर दिया.

यहांसे चलकर कटेरा आया. थक गया. कई दिनसे भोजन नहीं किया था. पासमें कुल तीन आना ही शेष थे. यहां एक जिनालय है उसके दर्शन कर बाजारसे एक आनेका आटा, एक पैसेकी उड़दकी दाल, आध आने का घी और एक पैसेका नमक व धनियां आदि लेकर गांवके बाहर एक कुंए पर आया. पासमें बर्तन न थे, केवल एक लोटा और छन्ना था. कैसे दाल बनाई जाय ? यदि लोटामें दाल बनाऊं तो पानी कैसे छानूं ? अटा कैसे गूनूं ? 'आवश्याक्त आविष्कारकी जननी है' यह यहां चरितार्थ हुआ. आटाको तो पत्थर पर गून लिया. परन्तु दाल कैसे बने ? तब यह उपाय सूझा कि पहले उड़दकी दालको कपड़ेके पल्लेमें भिगो दी. इसके भींग चुकने पर आटेकी रोटी बनाकर उसके अन्दर उसे रख दिया. उसीमें नमक धनिया व मिर्च भी मिला दी. पश्चात् उसका गोला बनाकर और उस पर पलासके पत्ते लपेट कर जमीन खोद कर एक खड्डे में उसे

रख दिया. ऊपर कण्डा रख दिये. उनकी आग तैयार होने पर शेष आटेकी ४ बाटियां बनाईं और उन्हें सेंक कर घीसे चुपड़ दिया. उन दिनों दो पैसेमें एक छटाक घी मिलता था. इसलिये बाटियां अच्छी तरह चुपड़ी गईं. पश्चात् आगको हटाकर नीचेका गोला निकाल लिया. धीरे धीरे उसके ठण्डा होने पर उसके ऊपरसे अधजले पत्तोंको दूर कर दिया. फिर गोलेको फोड़कर छेवलेकी पत्तरमें दालको निकाल लिया. दाल पक गई थी उसको खाया. मैंने आजतक बहुत जगह भोजन किया है परन्तु उस दालका जो स्वाद था वैसी दाल आजतक भोजन में नहीं आई. इस प्रकार चार दिनके बाद भोजन कर जो तृप्ति हुई उसे मैं ही जानता हूँ. अब पासमें एक आना रह गया. यहांसे चलकर फिर वही चाल अर्थात् दो पैसेके चने चाबे और वहांसे चलकर पारके गांव पहुँच गया.

यहांसे सिमरा नौ मील दूर था परन्तु लज्जावश वहां न जाकर यहीं पर रहने लगा. यहीं एक जैनी भाईके घर आनन्दसे भोजन करता था और गांवके जैन बालकोंको प्राथमिक शिक्षा देने लगा.

दैव का प्रबल प्रकोप तो था ही—मुझे मलेरिया आने लगा. ऐसे वेगसे मलेरिया आया कि शरीर पीला पड़ गया. औषधि रोग को दूर न कर सकी. एक वैद्य ने कहा—'प्रातः काल वायु सेवन करो और ओसमें आध घंटा टहलो.'

मैंने वही किया. पन्द्रह दिनमें ज्वर चला गया. फिर वहां से आठ मील चलकर जतारा आ गया. यहाँ पर भाईजी साहब और वर्णीजीसे भेंट हो गई और उनके सहवासमें पूर्ववत् धर्म साधन करने लगा.

५

खुरई यात्रा

बाईजी ने बहुत बुलाया परन्तु मैं लज्जाके कारण नहीं गया. उस समय यहां पर स्वरूपचन्द्र बनपुरया रहते थे. उनके साथ उनके गांव माची चला गया. ये बड़े उत्साहसे मेरा अतिथि सत्कार करने लगे. मैंने बुधजन छहढाला कण्ठस्थ कर लिया. अन्तरङ्गसे जैनधर्मका मर्म कुछ नहीं समझता था.

मैं उनके साथ खुरई पहुँच गया. वे श्रीमन्तके यहां ठहर गये. मैं भी वहीं ठहर गया, यहां श्रीमन्त से तात्पर्य श्रीमान् श्रीमन्त सेठ मोहनलालजीसे है. आप जैन शास्त्रके मर्मज्ञ विद्वान् थे. आपके सब ठाट राजाओंके समान थे. आपके यहां पण्डित पन्नालालजी न्यायदिवाकर आते रहते थे. सायंकाल सबसे अधिक प्रसन्नता श्री १००८ देवाधिदेव पार्श्वनाथके प्रतिबिम्बको देखकर हुई.

श्रीप्रभु पार्श्वनाथके दर्शनके अनन्तर श्रीमान् पण्डितजीका प्रवचन सुना. पण्डितजी बहुत ही रोचक और मार्मिक विवेचन के साथ तत्त्वकी व्याख्या करते थे. मेरी आत्मामें विलक्षण स्फूर्ति हुई. जब शास्त्र विराजमान हो गये तब मैंने श्रीमान् वक्ताजीसे कहा—ऐसा भी कोई उपाय है जिससे मैं जैनधर्मका रहस्य जान सकूँ?'

आपने कहा—'तुम कौन हो?'

मैंने कहा—'मैं वैष्णव कुलके असाटी वंश में उत्पन्न हुआ हूँ, मेरे वंशके सभी लोग वैष्णव धर्मके उपासक हैं. मेरा वंश ही क्या जितने भी असाटी वैश्य हैं सब ही वैष्णव धर्मके उपासक हैं, किन्तु मेरी श्रद्धा भाग्योदय से इस जैनधर्म में दृढ़ हो गई है.

निरन्तर इसी चिंता में रहता हूँ कि जैनधर्मका कुछ ज्ञान हो जाय.

पण्डित जी महोदयने प्रश्न किया—कि 'तुमने जैनधर्ममें कौन सी विलक्षणता देखी ? जिससे कि तुम्हारी अभिरुचि जैनधर्म की ओर होगई है.'

मैंने कहा—'इस धर्मवाले दयाका पालन करते हैं, छानकर पानी पीते हैं, रात्रि भोजन नहीं करते, स्वच्छता पूर्वक रहते हैं, स्त्रीपुरुष प्रति-दिन मन्दिर जाते हैं, मन्दिरमें मूर्तियाँ बहुत सुन्दर होती हैं, प्रतिदिन मन्दिरमें शास्त्र प्रवचन होता है, इत्यादि शुभाचरणकी विशेषता देखकर मैं जैनधर्ममें दृढ़ श्रद्धावान् हो गया हूँ.'

पण्डित जीने कहा—'यह क्रिया तो हर धर्मवाले कर सकते हैं, हर कोई दया पालता है. तुमने धर्मका मर्म नहीं समझा. आजकल मनुष्य न तो कुछ समझें और न जानें केवल खान पानके लोभसे जैनी हो जाते हैं. तुमने बड़ी भूल की जो जैनी हो गये, ऐसा होना सर्वथा अनुचित है. वंचना करना महापाप है. जाओ, मैं क्या समझाऊं ? मुझे तो तुम्हारे ऊपर तरस आता है. न तो तुम वैष्णव ही रहे और न जैनी ही. व्यर्थ ही तुम्हारा जन्म जायगा.'

पण्डितजी की बात सुनकर मुझे बहुत खेद हुआ. मैंने कहा–महाराज ! आपने मुझे सान्त्वनाके बदले वाक्‌बाणों की वर्षा से आच्छन्न कर दिया. मैंने क्या आपसे चन्दा मांगा था ? या कोई याचना की थी ? या आजीविका का साधन पूछा था ? मेरे दुर्दैव का ही प्रकोप है. अस्तु, अब पण्डित जी ! आपसे शपथ पूर्वक कहता हूँ—उस दिन ही आपके दर्शन करूंगा जिस दिन धर्मका मार्मिक स्वरूप आपके समक्ष रख कर आपको सन्तुष्ट कर

सकूंगा. आज आप जो वाक्य मेरे प्रति व्यवहार में लाये हैं वे तब आपको वापिस लेने पड़ेंगे.'

यह प्रतिज्ञा की कि किसी तरह ज्ञानार्जन करना आवश्यक है. प्रतिज्ञा तो करली परन्तु ज्ञान उपार्जन करने का कोई भी साधन न था. पासमें न तो द्रव्य ही था और न किसी विद्वान का समागम ही था. कुछ उपाय नहीं सूझता था. रेवाके तट पर पर्वत है, वहां पर असहाय एक मृगका बच्चा खड़ा हुआ है, उसके सामने रेवा नदी है और पर्वत भी. दाएं बाएं दावानल की ज्वाला धंधक रही है, पीछे शिकारी हाथमें धनुष बाण लिये मारनेको दौड़ रहा है. ऐसी हालतमें वह हरिण का बालक विचार करता है कि कहां जावें और क्या करें ?

'पुरारे वापारे गिरिरतिदुरारोहशिखरो गिरी
सव्येऽसव्ये दवदहनज्वालाव्यतिकरः,
धनुःपाणिः पश्चान्मृगयुशतको धावति भृशं
क्व यामः किं कुर्यः हरिणशिशुरेवं विलपति.

क्या करें कुछ भी निर्णय नहीं कर सके. दो या तीन दिन सुरईमें रह कर मैं मड़ावरा मेरी माँ के पास चला गया. रास्तेमें तीन दिन लगे. लज्जावश रात्रिको घर पहुँचा.

मुझे आया हुआ देख माँ बड़ी प्रसन्न हुई. बोली 'बेटा ! आ गये ?'

मैंने कहा—'हाँ माँ ! आ गया.'

माँ ने उपदेश दिया—'बेटा ! आनन्द से रहो, क्यों इधर उधर भटकते हो ? अपना कौलिक धर्म पालन करो, और कुछ व्यापार करो, तुम्हारे काका समर्थ हैं. वे तुम्हें व्यापारकी पद्धति सिखा देंगे.'

मैं माँ की शिक्षा सुनता रहा परन्तु जैसे चिकने घड़े पर पानी का असर नहीं होता वैसे ही मेरे ऊपर उस शिक्षाका कोई भी असर नहीं हुआ. मैं तीन दिन वहां रहा पश्चात् माँ की आज्ञा से बमराना चला गया.

यहां श्री सेठ ब्रजलाल, चन्द्रभान व श्री लक्ष्मीचन्द्रजी साहब रहते थे. तीनों भाई धर्मात्मा थे. इन तीनों में लक्ष्मीचन्द्र जी सेठ प्रखरबुद्धि थे. आपकी चित्तवृत्ति भी निरन्तर परोपकार में रत रहती थी.

उन्होंने मुझसे कहा 'आपका शुभागमन कैसे हुआ ?'

मैं किंकर्त्तव्यविमूढ़ था अतः सारी बातें तो न बता सका, केवल लौट जानेकी इच्छा जाहिर की. यह सुन श्रीसेठ लक्ष्मीचन्द्र जीने बिना मांगे ही दस रुपया मुझे दिये और कहा आनन्दसे जाइये. साथ ही यह आश्वासन भी दिया कि यदि कुछ व्यापार करने की इच्छा हो तो सौ या दो सौ की पूँजी लगा देंगे.

६

तीर्थ यात्रा

रेशंदी गिरि—

मैं दस रुपया लेकर बमराना से मड़ावरा आ गया. पांच दिन रहकर माँ तथा स्त्री की अनुमति के बिना ही कुण्डलपुरकी यात्राके लिये प्रस्थान कर दिया. मड़ावरासे चलकर चौदह मील बरायठा नगरमें आया. वहां से श्री सिद्धक्षेत्र नैनागिरि के लिये चल पड़ा. मार्गमें महती अटवी थी, जहां पर वनके हिंसक

पशुओं का संचार था. मैं एकाकी चला जाता था. कोई सहायी न था. केवल आयु कर्म सहायी था. क्षेत्र पर दिनके दस बजे पहुँच गया. स्नानादिसे निवृत्त हो श्री जिन मन्दिरोंके दर्शनके लिये उद्यमी हुआ. प्रथम तो सरोवर के दर्शन हुए जो अत्यन्त रम्य था. चारों ओर सारस आदि पक्षीगण शब्द कर रहे थे. चकवा आदि अनेक प्रकारके पक्षीगणोंके कलरव हो रहे थे. कमलोंके फूलों से वह ऐसा सुशोभित था मानों गुलाबका बाग ही हो. सरोवरका बंधान चंदोल राजाका बंधाया हुआ है. इसी पर से पर्वत पर जानेका मार्ग था. पर्वत बहुत उन्नत न था. दस मिनट में ही मुख्य द्वार पर पहुँच गया.

यहां पर एक अत्यन्त मनोहर देवीका प्रतिबिम्ब देखा जिसे देखकर प्राचीन सिलावटोंकी कर कुशलताका अनुमान सहजमें हो जाता था. यह वही पर्वतराज है जहां श्री १००८ देवाधिदेव पार्श्वनाथ प्रभुका समवसरण आया था और वरदत्तादि पांच ऋषि राजोंने निर्वाण प्राप्त किया था.

यहां मैं तीन दिन रहा. चित्त जानेको नहीं चाहता था. चित्तमें यही आता था कि 'सर्व विकल्पोंको त्यागो और धर्म साधन करो.' परन्तु साधनोंके अभावमें दरिद्रोंके मनोरथोंके समान कुछ न कर सका. चार दिनके बाद श्री अतिशय क्षेत्र-कुण्डलपुरके लिये प्रस्थान किया. प्रस्थानके समय आंखोंमें अश्रु धारा आगई. चलनेमें गतिका वेग न था, पीछे-पीछे देखता जाता था और आगे-आगे चला जाता था. मार्गको तय करता हुआ तीन दिन बाद कुण्डलपुर पहुँच गया.

कुण्डलपुर—

अवर्णनीय क्षेत्र है. यहाँ पर कई सरोवर तथा आमके बगीचे हैं. एक सरोवर अत्यन्त सुन्दर है. उसके तटपर अनेक

जैन मन्दिर गगनचुम्बी शिखरोंसे सुशोभित एवं चारों तरफ आमके वृक्षोंसे वेष्टित भव्य पुरुषोंके मनको विशुद्ध परिणामोंके कारण बन रहे हैं. उनके दर्शन कर चित्त अत्यन्त प्रसन्न हुआ. प्रतिमाओंके दर्शन करनेसे जो आनन्द होता है उसे प्रायः सब ही आस्तिक जन जानते हैं और नित्य प्रति उसका अनुभव भी करते हैं. अनन्तर पर्वतके ऊपर श्री महावीर स्वामीके पद्मासन प्रतिबिम्बको देखकर तो साक्षात् श्री वीरदर्शनका ही आनन्द आगया. ऐसी सुभग पद्मासन प्रतिमा मैंने तो आज तक नहीं देखी. यह प्रतिमा 'बड़े बाबा' के नामसे विख्यात हैं. तीन दिन इस क्षेत्र पर रहा और तीनों ही दिन श्री वीर प्रभुके दर्शन किये.

रामटेक—

श्री कुण्डलपुरसे यात्रा करनेके पश्चात् श्री रामटेकके वास्ते प्रयाण किया. मार्गमें अनेक जैन मन्दिरोंके दर्शन किये चार दिनमें जबलपुर पहुँच गया. यहाँके जैन मन्दिरोंकी अवर्णनीय शोभा देखकर जो प्रमोद हुआ उसे कहनेमें असमर्थ हूँ. यहाँसे रामटेकके लिये चल दिया. छह दिनमें सिवनी पहुँचा. यहाँ भी मन्दिरोंके दर्शन किये. दर्शन करनेसे मार्गका श्रम एकदम चला गया. दो दिन बाद श्री रामटेकके लिये चल दिया. कई दिवसोंके बाद रामटेक क्षेत्रपर पहुँच गया.

यहाँके मन्दिरोंकी शोभा अवर्णनीय है. यहाँ पर श्री शान्तिनाथ स्वामीके दर्शन कर बहुत आनन्द हुआ. यह स्थान अति रमणीक है. ग्रामसे क्षेत्र तीन फर्लाङ्ग होगा. निर्जन स्थान है. यहाँ चारों तरफ बस्ती नहीं है. दो मील पर एक पर्वत है जहाँ श्री रामचन्द्र जी महाराजका मन्दिर है. जैन मन्दिरोंके पास ही जो धर्मशाला थी उसीमें निवास कर लिया. धर्मशाला आदिका प्रबन्ध उत्तम है परन्तु जिससे यात्रियोंको आत्मलाभ हो

उसका साधन कुछ नहीं, क्षेत्रोंपर ज्ञानके साधन कुछ नहीं, केवल रुपये इकट्ठे करनेके साधन हैं. कल्पना करो यह धन यदि एकत्रित होता रहे और व्यय न हो तो अन्तमें नहींके तुल्य ही हुआ. अस्तु, इस कथासे क्या लाभ ? यहाँ चार दिन रहा.

मुक्तागिरि—

चार दिन बाद यहाँ से चल दिया, बीचमें कामठी के जैन मन्दिरोंके दर्शन करता हुआ नागपुर पहुँचा. यहां दो या तीन दिन रहकर मैंने अमरावतीको प्रस्थान कर दिया. कई दिवसोंके बाद अमरावती पहुँच गया, और यहांसे श्री सिद्ध क्षेत्र मुक्तागिरिके लिये उत्सुकता पूर्वक चल पड़ा. दूसरे दिन मुक्तागिरि पहुँच गया. क्षेत्रकी शोभा अवर्णनीय है. सर्वतः वनोंसे वेष्टित पर्वत है. ऊपर अनेक जिनालय हैं. नीचे भी कई मन्दिर और धर्मशालाएं हैं. तपोभूमि है, परन्तु अब तो न वहाँ कोई त्यागी है और न साधु. जो अन्य क्षेत्रों की व्यवस्था है वही व्यवस्था यहां की है. सानन्द वन्दना की.

गजपन्था—

पास में पांच रुपये मात्र रह गये. कपड़े विवर्ण हो गये. शरीरमें खाज हो गई. एक दिन बाद ज्वर आने लगा. सहायी कोई नहीं. केवल दैव ही सहायी था. क्या करूं ? कुछ समझ में नहीं आता था—कर्तव्यमूढ़ हो गया. कहाँ जाऊं ? यह भी निश्चय नहीं कर सका. किससे अपनी व्यथा कहूँ ? यह भी समझमें में नहीं आया. कहता भी तो सुननेवाला कौन था ? खिन्न होकर पड़ गया. रात्रिको स्वप्न आया—'दुःख करनेसे क्या लाभ ?' कोई कहता है—'श्रीगिरिनारजी चले जाओ.' 'कैसे जावें ? साधन तो कुछ हैं नहीं...' मैंने कहा. यही उत्तर मिला—'नारकी जीवोंकी अपेक्षा तो अच्छे हो.'

प्रातःकाल हुआ. श्री सिद्धक्षेत्रकी वन्दना कर बैतूल नगरके लिये चल दिया. तीन कोस चलकर एक हाट मिली. वहाँ एक स्थानपर पत्तोका जुआ हो रहा था. १) के ५) मिलते थे. हमने विचार किया—'चलो ५) लगा दो २५) मिल जावेंगे, फिर आनन्दसे रेलमें बैठकर श्रीगिरिनारजीकी यात्रा सहजमें हो जावेगी, इत्यादि. १) के ५) मिलेंगे इस लोभसे ३) लगा दिये पत्ता हमारा नहीं आया. ३) चले गये. अब बचे दो रुपया सो विचार किया कि अब गलती न करो अन्यथा आपत्ति में फंस जाओगे. मनमें संतोष कर वहाँसे चल दिया. किसी तरह कष्टोंको सहते हुये बैतूल पहुँचे.

उन दिनों अन्न सस्ता था. दो पैसे में ऽ।। जवारी का आटा मिल जाता था. उस की रोटी खाते हुए मार्ग तय करते थे. जब बैतूल पहुँचे तब ग्रामके बाहर सड़क पर कुली लोग काम कर रहे थे हमने विचार किया कि यदि हम भी इस तरहका काम करें तो हमें भी कुछ मिल जाया करेगा. मेट से कहा—'भाई! हमको भी लगालो' दयालु था, उसने हमको भी एक गेंती दे दी और कहा कि 'मिट्टी खोदकर इन औरतोंकी टोकनीमें भरते जाओ. तीन आने शामको मिल जावेंगे.' मैंने मिट्टी खोदना आरम्भ किया और एक टोकनी किसी तरहसे भर कर उठा दी, दूसरी टोकनी नहीं भर सका. अन्तमें गेंतीको वहीं पटक कर रोता हुआ आगे चल दिया. मेटने दया कर बुलाया—'रोते क्यों हो? मिट्टीको ढोओ दो आना मिल जावेंगे.' परन्तु—वह भी न बन पड़ा तब मेटने कहा—'आपकी इच्छा सो करो.' मैंने कहा—'जनाब बन्दगी, जाता हूँ.' उसने कहा—'जाइये, यहाँ तो हट्टे कट्टे पुरुषोंका काम है.'

उस समय अपने भाग्यके गुण गान करता हुआ आगे बढ़ा.

कुछ दिन बाद ऐसे स्थान पर पहुँचा जहाँ पर जिनालय था. जिनालयमें श्री जिनेन्द्र देवके दर्शन किये. पश्चात् यहांसे गजपन्था के लिए प्रस्थान कर दिया. मार्गमें कैसे कैसे कष्ट उठाये उनका इसीसे अनुमान कर लो कि जो ज्वर एक दिन बाद आता था वह अब दो दिन बाद आने लगा. इसको हमारे देशमें तिजारी कहते हैं. उसमें इतनी ठंडी लगती है कि चार सोड़रोंसे भी नहीं जाती, पर पास में एक भी नहीं थी. साथमें पकनूं खाज हो गई, शरीर कृश हो गया. इतना होने पर भी प्रति दिन २० मील चलना और खाने को दो पैसेका आटा. वह भी कभी जवारका और कभी बाजरे का और वह भी बिना दाल सागका. केवल नमक की कंकरी साग थी. घी क्या कहलाता है ? कौन जाने, उसके दो माससे दर्शन भी न हुये थे. दो मास से दालका भी दर्शन न था किसी दिन रूखी रोटी बनाकर रक्खी और खानेकी चेष्टा की कि तिजारी महारानीने दर्शन देकर कहा—'सो जाओ, अनधिकार चेष्ठा न करो, अभी तुम्हारे पाप कर्मका उदय है, समतासे सहन करो.'

पापके उदयकी पराकाष्ठाका रूप यदि देखा तो मैंने देखा. एक दिनकी बात है—सघन जङ्गलमें जहां पर मनुष्योंका संचार न था. एक छायादार वृक्ष के नीचे बैठ गया. वहीं बाजरे के चूनकी लिट्टी लगाई, खाकर सो गया. निद्रा भङ्ग हुई, चलनेको उद्यमी हुआ इतने में भयङ्कर ज्वर आ गया बेहोश पड़ गया. रात्रिके नौ बजे होश आया. भयानक वनमें था. सुध बुध भूल गया. रात्रि भर भयभीत अवस्थामें रहा. किसी तरह प्रातःकाल हुआ. श्री भगवान् का स्मरण कर मार्गमें अनेक कष्टोंकी अनुभूति करता हुआ श्री गजपन्था जी पहुँच गया और आनन्दसे धर्मशालामें ठहर गया.

वहीं पर आरवी के एक सेठ ठहरे थे. प्रातःकाल उनके साथ पर्वतकी वन्दनाको चला. आनन्दसे यात्रा समाप्त हुई धर्मकी चर्चा भी अच्छी तरह से हुई. आपने कहा—'कहां जाओगे ?' मैंने कहा–'श्री गिरिनारजी की यात्राको जाऊंगा.' 'कैसे जाओगे ?' 'पैदल जाऊंगा.' उन्होंने मेरे शरीरकी अवस्था देखकर बहुत ही दयाभावसे कहा—'तुम्हारा शरीर इस योग्य नहीं अच्छा इस विषयमें फिर बातचीत होगी, अभी तो चलें भोजन करें, आज तुम्हें मेरे ही डेरे में भोजन करना होगा' स्थान पर आकर उनके यहां आनन्द से भोजन किया. तीन माससे मार्गके खेदसे खिन्न था तथा जबसे माँ और स्त्री को छोड़ा मड़ावरा से लेकर मार्गमें आज ही वैसा भोजन किया दरिद्रको निधि मिलने में जितना हर्ष होता है उससे भी अधिक हर्ष मुझे भोजन करने में हुआ

भोजनके अनन्तर वह मन्दिरके भण्डारमें द्रव्य देनेके लिये गये. पांच रुपये मुनीम को देकर उन्होंने जब रसीद ली तब मैं भी वहीं बैठा था. मेरे पास केवल एक आना था और वह इस लिये बच गया था कि आज के दिन आरवीके सेठके यहाँ भोजन किया था. मैंने विचार किया कि यदि आज अपना निजका भोजन करता तो यह एक आना खर्च हो जाता और ऐसा मधुर भोजन भी नही मिलता, अतः इसे भण्डारमें दे देना अच्छा है. निदान, मैंने वह एक आना मुनीम को दे दिया. मैंने अन्तरङ्गसे दिया था अतः उस एक आनाके दानने मेरा जीवन पलट दिया.

७

मोहमयी की माया में

सेठजी कपड़ा खरीदने बम्बई जारहे थे. उन्होंने मुझसे कहा—'बम्बई चलो वहांसे गिरनारजी चले जाना' उनके आग्रह करने पर मैंने भी उन्हींके साथ बम्बईके लिये प्रस्थान कर दिया. नासिक होता हुआ रात्रिके नौ बजे बम्बई की स्टेशन पर पहुँचा. सेठजीके साथ घोड़ागाड़ीमें बैठ कर जहां सेठ साहब ठहरे उसी मकानमें ठहर गया. प्रातःकाल सामान लेकर मन्दिर गया, नीचे धर्मशालामें सामान रखकर ऊपर दर्शन करने गया. सेठजी आठ आने देकर चले गये.

मैं किंकर्तव्यविमूढ़की तरह स्वाध्याय करने लगा. इतनेमें ही एक बाबा गुरुदयालसिंह जो खुरजाके रहनेवाले थे मेरे पास आये और पूछने लगे—'कहांसे आये हो ? और बम्बई आकर क्या करोगे ?' मुझसे कुछ नहीं कहा गया प्रत्युत गद्गद हो गया. श्रीयुत बाबा गुरुदयालसिंहजीने कहा—'हम आध घंटा बाद आवेंगे तुम यहीं मिलना.' मैं शान्तिपूर्वक स्वाध्याय करने लगा.

उनकी अमृतमयी वाणीसे इतनी तृप्ति हुई कि सब दुःख भूल गया. आध घंटाके बाद बाबाजी आगये और दो धोती, दो जोड़े दुपट्टे, रसोईके सब बर्तन, आठ दिनका भोजनका सामान, सिगड़ी कोयला तथा दस रुपया नकद देकर बोले आनन्दसे भोजन बनाओ कोई चिन्ता न करना हम तुम्हारी सब तरह से रक्षा करेंगे. अशुभ कर्मके विपाकमें मनुष्यों को अनेक विपत्तियों का सामना करना पड़ता है और जब शुभ कर्मका विपाक आता है तब अनायास जीवोंको सुख सामग्री का लाभ हो जाता है. कोई न कर्ता है, न हर्ता है. देखो, हम खुरजाके निवासी हैं,

आजीविकाके निमित्त बम्बई रहते हैं. दलाली करते हैं तुम्हें मन्दिरमें देख स्वयमेव हमारे यह परिणाम हो गये कि इस जीव की रक्षा करना चाहिये. आप न तो हमारे सम्बन्धी है, और न हम तुमको जानते ही हैं. तुम्हारे आचारादि से भी भिन्न नहीं हैं फिर भी हमारे परिणामोंमें तुम्हारी रक्षा के भाव हो गये. इससे अब तुम्हें सब तरह की चिन्ता छोड़ देना चाहिये तथा श्रीजिनेन्द्र देवके प्रतिदिन दर्शनादि कर स्वाध्यायमें उपयोग लगाना चाहिये. तुम्हारी जो आवश्यक्ता होगी हम उसकी पूर्ति करेंगे. इत्यादि वाक्यों द्वारा मुझे संतोष कराके चले गये.

तीन घण्टे बाद बाबा गुरुदयालजी आ गये और १०० कापियाँ देकर यह कह गये कि इन्हें बाजार में जाकर फेरी में बेच आना. छह आना से कम में न देना. यह पूर्ण हो जानेपर मैं और ला दूंगा. उन कापियोंमें रेशम आदि कपड़ों के नमूने विलायत से आते थे.

मैं शामको बाजार में गया और एक ही दिनमें बीस कापी बेच आया. कहने का यह तात्पर्य है कि छः दिनमें वे सब कापियाँ बिक गईं और उनकी बिक्रीके मेरे पास ३१।≈) हो गये. अब मैं एकदम निश्चिन्त हो गया.

यहां पर मन्दिर में एक जैन पाठशाला थी. जिसमें श्री जीवाराम शास्त्री गुजराती अध्यापक थे. वे संस्कृतके प्रौढ़ विद्वान् थे. साथमें श्री गुरुजी पन्नालाल बाकलीवाल सुजानगढ़वाले आनरेरी धर्म शिक्षा देते थे. कातन्त्र व्याकरण श्रीयुत शास्त्री जीवारामजीसे पढ़ना प्रारम्भ कर दिया, और रत्नकरण्ड श्रावकाचार श्री पण्डित पन्नालालजीसे पढ़ने लगा. मैं पण्डितजीसे गुरुजी कहता था.

बाबा गुरुदयालजीसे मैंने कहा—'बाबाजी ! मेरे पास ३१।=) कापियोंके आगये. १०) आप दे गये थे. अब मैं भाद्रमास तक के लिये निश्चिन्त हो गया. आपकी आज्ञा हो तो मैं संस्कृत अध्ययन करने लगं.' उन्होंने हर्ष पूर्वक कहा—'बहुत अच्छा विचार है, कोई चिन्ता मत करो, सब प्रबन्ध कर दूंगा, जिस किसी पुस्तककी आवश्यक्ता हो.हमसे कहना.'

मैं आनन्दसे अध्ययन करने लगा और भाद्रमासमें रत्नकरण्ड श्रावकाचार तथा कातन्त्र व्याकरणकी पञ्चसन्धिमें परीक्षा दी. उसी वर्ष बम्बई परीक्षालय खुला था. रिजल्ट निकला. मैं दोनों विषयोंमें उत्तीर्ण हुआ साथमें पच्चीस रुपये इनाम भी मिला. समाज प्रसन्न हुई.

श्रीमान स्वर्गीय पण्डित गोपालदास जी बरैया उस समय वहीं पर रहते थे. आप बहुत ही सरल तथा जैनधर्मके मार्मिक पण्डित थे. साथमें अत्यन्त दयालु भी थे. वह मुझसे बहुत प्रसन्न हुए और कहने लगे कि 'तुम आनन्दसे विद्याध्ययन करो, कोई चिन्ता मत करो. वह एक साहबके आफिसमें काम करते थे. साहब इनसे अत्यन्त प्रसन्न था. पण्डितजीने मुझसे कहा 'तुम शामको मुझे आफिसमें बियालू ले आया करो तुम्हारा जो मासिक खर्च होगा मैं दूंगा. यह न समझना कि मैं तुम्हें नौकर समझूंगा.' मैं उनके समक्ष कुछ नहीं कह सका.

परीक्षाफल देख कर देहलीके एक जवेरी लक्ष्मीचन्द्रजीने कहा कि—'दस रुपया मासिक हम बराबर देंगे तुम सानन्द अध्ययन करो.' मै अध्ययन करने लगा किन्तु दुर्भाग्यका उदय इतना प्रबल था कि बम्बईका पानी मुझे अनुकूल न पड़ा. शरीर रोगी हो गया.

पूना चला गया. धर्मशालामें ठहरा. एक जैनीके यहां भोजन

करने लगा. वहां की जलवायु सेवन करनेसे मुझे आराम हो गया. पश्चात् एक मास बाद मैं बम्बई आ गया. यहां कुछ दिन ठहरा कि फिरसे ज्वर आने लगा.

श्री गुरुजीने मुझे अजमेरके पास केकड़ी है, वहां भेज दिया. यहां पर औषधालयमें जो वैद्यराज दौलतरामजी थे वह बहुत ही सुयोग्य थे. वैद्यराजने मूंगके बराबर गोली दी और कहा इसे खालो तथा ऽ४ दूधकी एक छटाक चावल डालकर खीर बनाओ और जितनी खाई जावे खाओ. कोई विकल्प न करना.' मैंने दिन भर खीर खाई. पेट खूब भर गया. रात्रिको आठ बजे वमन हो गया. उसी दिनसे रोग चला गया. पन्द्रह दिन केकड़ीमें रह कर जयपुर चला गया.

८

पुनः विद्यार्थी वेष में

जयपुर—

जमुनाप्रसादजी कालाने श्री वीरेश्वर शास्त्रीके पास—जो कि राज्य के मुख्य विद्वान् थे—मेरा पढ़नेका प्रबन्ध कर दिया. मैं आनन्द से जयपुरमें रहने लगा. यहां पर सब प्रकारकी आपत्तियोंसे मुक्त हो गया. यहां श्रीनेकरजी की दूकान का कलाकन्द भारतमें प्रसिद्ध था. मैंने एक पाव कलाकन्द लेकर खाया. अत्यन्त स्वाद आया फिर दूसरे दिन भी एक पाव खाया. कहनेका तात्पर्य यह है कि मैं बारह मास जयपुरमें रहा परन्तु एक दिन भी उसका त्याग न कर सका. अतः मनुष्योंको

उचित है कि ऐसी प्रकृति न बनावें जो कष्ट उठानेपर भी उसे त्याग न सकें. जयपुर छोड़नेके बाद ही वह आदत छूट सकी

यहाँ पर मैंने बारह मास रहकर श्रीवीरेश्वरजी शास्त्रीसे कातन्त्र व्याकरणका अभ्यास किया और श्रीचन्द्रप्रभ चरित भी पांच सर्ग पढ़ा. श्रीतत्वार्थसूत्रजीका अभ्यास किया और एक अध्याय श्री सर्वार्थसिद्धिका भी अध्ययन किया. इतना पढ़ कर बम्बई की परीक्षामें बैठ गया.

जब कातन्त्र व्याकरणका प्रश्नपत्र लिख रहा था तब एक पत्र मेरे ग्रामसे आया. उसमें लिखा था कि तुम्हारी स्त्रीका देहावसान हो गया. मुझे अपार आनन्द हुआ मैंने मन ही मन कहा—हे प्रभो ! आज मैं बन्धन से मुक्त हुआ. यद्यपि अनेक बन्धनोंका पात्र था परन्तु यह बन्धन ऐसा था जिससे मनुष्यकी सर्व सुध-बुध भूल जाती है. उसी दिन श्रीबाईजीको एक पत्र सिमरा दिया कि अब मै निशल्य होकर अध्ययन करूंगा.

जयपुर एक महान नगर है, मैंने तीन दिन पर्यन्त श्री जैन मन्दिरोंके दर्शन किये तथा बहुत शान्त भाव रहे. यहां पर बड़े-बड़े दिग्गज विद्वान् उन दिनों थे—जयपुर में इन दिनों विद्वानों का ही समागम न था किन्तु बड़े-बड़े गृहस्थों का भी समागम था जो अष्टमी चतुर्दशी को व्यापार छोड़ कर मन्दिरमें धर्मध्यान द्वारा समय का सदुपयोग करते थे. श्रीमान् स्वर्गीय अर्जुनदास जी अत्यन्त प्रखर बुद्धि थे. साथ ही आपमें जातिके उत्थान की भी प्रबल भावना थी. आपने एक सभा स्थापित की थी. मैं भी उसका सदस्य था.

उन दिनों जयपुरमें एक महान् मेला हुआ था. जिसमें भारतवर्षके सभी प्रान्तके विद्वान् और धनिक वर्ग तथा सामान्य

जनताका वृहत्समारोह हुआ था. गायक भी अच्छे-अच्छे आये थे. मेलाको भरानेवाले श्री स्वर्गीय मूलचन्द्रजी सोनी अजमेर वाले थे. यह बहुत ही धनाढ्य और सद्गृहस्थ थे. आप केवल मन्दिरों के ही उपासक न थे पण्डितोंके भी बड़े प्रेमी थे. श्रीमान् स्वर्गीय पण्डित बलदेवदासजी आपही के मुख्य पण्डित थे.

पण्डितजीकी सम्मतिके बिना कोई भी धार्मिक कार्य सेठजी नहीं करते थे. जो जयपुरमें मेला हुआ था वह पण्डितजीकी सम्मतिसे ही हुआ था. मेला इतना भव्य था कि मैंने अपनी पर्यायमें वैसा अन्यत्र नहीं देखा. उस मेला में विद्वानों, सेठों आदि प्रमुख व्यक्तियों का सद्भाव था. श्री महाराजाधिराज जयपुर नरेश भी पधारे थे. आपने मेलाकी सुन्दरता देख बहुतही प्रसन्नता व्यक्त की थी, तथा श्रीजिन बिम्बको देखकर स्पष्ट शब्दों में यह कहा था कि—'शुभ ध्यानकी मुद्रा तो इससे उत्तम संसार में हो ही नहीं सकती. जिसे आत्मकल्याण करनाहो वह इस प्रकारकी मुद्रा बनानेका प्रयत्न करे. मैं यही भावना भाता हूँ कि मैं भी इसी पदको प्राप्त होऊं.'

द्रव्यका होना तो पूर्वोपार्जित पुण्योदयसे होता है परन्तु उसका सदुपयोग बिरले ही पुण्यात्माओंके भाग्यमें होता है. जो वर्तमानमें पुण्यात्मा हैं वही मोक्षमार्गके अधिकारी हैं. संपत्ति पाकर मोक्षमार्गका लाभ जिसने लिया उसी नर-रत्नने मनुष्य जन्मका लाभ लिया.

बम्बई परीक्षाफल निकला. श्री जीके चरणोंके प्रसादसे मैं परीक्षामें उत्तीर्ण हो गया. महती प्रसन्नता हुई. श्रीमान् पण्डित गोपालदासजी का पत्र आया कि मथुरा में दिगम्बर जैन महाविद्यालय खुलनेवाला है यदि तुम्हें आना हो तो आ सकते हो. मुझे बहुत प्रसन्नता हुई.

आगरा—

मैं श्री पण्डितजी की आज्ञा पाते ही आगरा चला गया और श्री गुरु पन्नालालजी वाकलीवाल भी आ गये. आप श्रीमान् पं० बलदेवदासजीसे सर्वार्थसिद्धिका अभ्यास करने लगे. मैं भी आपके साथमें जाने लगा.

उन दिनों छापेका प्रचार जैनियोंमें न था. मुद्रित पुस्तक का लेना महान् अनर्थ का कारण माना जाता था अतः हाथसे लिखे हुये ग्रन्थों का पठन-पाठन होता था. हम भी हाथ की लिखी सर्वार्थसिद्धि पर ही अभ्यास करते थे.

गर्मीके दिन थे. पण्डितजीके घर जानेमें प्रायः पत्थरोंसे पटी हुई सड़क मिलतीं थी. पण्डितजीका मकान एक मीलसे अधिक दूर था अतः मैं जूता पहिने ही हस्त लिखित पुस्तक लेकर पण्डितजीके घर पर जाता था. यहाँ पर श्रीमान् पं० नन्दरामजी रहते थे जो कि अद्वितीय हकीम थे. जैनधर्मके विद्वान् तथा सदाचारी भी थे.

एक दिन मैं पण्डितजीके पास पढ़नेको जा रहा था. दैवयोग से आप मिल गये. कहने लगे—'कहां जाते हो ?' मैंने कहा—'महाराज ! पण्डितजीके पास पढ़नेको जा रहा हूँ.' 'बगलमें क्या है ?' मैंने कहा—'पाठ्य पुस्तक सर्वार्थसिद्धि है.' आपने मेरा वाक्य श्रवण कर कहा—'पञ्चम काल है, ऐसा ही होगा, तुमसे धर्मोन्नति की क्या आशा हो सकती है ? और पण्डितजीसे क्या कहें ?' मैंने कहा—'महाराज निरुपाय हूँ.' उन्होंने कहा—'इससे तो निरक्षर अच्छा.' मैंने कहा—'महाराज ! अभी गर्मीका प्रकोप है पश्चात् यह अविनय न होगी.'

ऐसी ही एक गलती और हो गई वह यह कि मथुरा विद्यालयमें पढ़ानेके लिए श्रीमान् पं० ठाकुरप्रसादजी शर्मा उन्हीं दिनों

यहां पर आये थे. आपके भोजनादिकी व्यवस्था श्रीमान बरैयाजीने मेरे जिम्मे कर दी. चतुर्दशी का दिन था. पण्डितजीने कहा—'बाजारसे पूड़ी साग लाओ. मैं बाजार गया और हलवाई के यहांसे पूड़ी तथा साग ले आ रहा था कि मार्ग में दैवयोगसे वही श्रीमान् पं० नन्दरामजी साहब पुनः मिल गये. पण्डितजी साहब अत्यन्त कुपित हुए. बोले—हम पं० गोपालदासजीसे तुम्हारे अपराधोंका दण्ड दिलाकर तुम्हें मार्गपर लावेंगे. यदि मार्गपर न आये तो तुम्हें पृथक् करा देंगे.

मैं उनकी मुद्रा देखकर बहुत खिन्न हुआ परन्तु हृदयने यह साक्षी दी कि 'भय मत करो तुमने कोई अपराध नहीं किया—तुमने तो नहीं खाया, गुरुजीकी आज्ञासे तुम लाये हो. श्रीमान् पं० गोपालदासजी महान् विवेकी और दयालु जीव हैं वह तुम्हें पृथक् न करेंगे. ऐसे-ऐसे अपराधों पर यदि छात्र पृथक् किये जाने लगे तो विद्यालयमें पढ़ेगा ही कौन?' इत्यादि ऊहापोह चित्तमें होता रहा पर अन्तमें सब शांत हो गया.

एक दिन मैंने कह ही दिया कि 'महाराज ! मुझसे दो अपराध बन गये हैं—एक तो यह है कि मैं दोपहरीके समय जूता पहिने धर्मशास्त्रकी पुस्तक लेकर पण्डितजीके यहां पढ़नेके लिए जाता हूँ और दूसरा यह कि चतुर्दशीके दिन श्रीमान् पं० ठाकुरप्रसादजीके लिये आलू तथा बैंगनका साग लाया. क्या इन अपराधोंके कारण आप मुझे खुलनेवाले विद्यालयमें न रक्खेंगे ?

पण्डितजी सुनकर हँस गये और मधुर शब्दोंमें कहने लगे कि, क्या श्री पं० नन्दरामजीने तुम्हें साग लाते हुए देख लिया है ?' मैंने कहा—'हां महाराज ! बात तो यही है.' 'तूने तो नहीं खाया'—उन्होंने पूछा. 'नहीं महराज ! मैंने नहीं खाया और न मैं कभी खाता ही हूँ'—मैंने स्पष्ट शब्दोंमें उत्तर दिया. पण्डित

जीने प्रेम प्रदर्शित करते हुए कहा कि 'सन्तोष करो, चिन्ता छोड़ो, जो पाठ दिया जावे उसे याद करो, तुम्हारे वह सब अपराध माफ किये जाते हैं. आगामी यदि अष्टमी या चतुर्दशी का दिन हो तो कहारको साथ ले जाया करो और जो भी काम करो विवेकके साथ करो. जैन धर्मका लाभ बड़े पुण्योदयसे होता है.

मथुरा—

श्रीमान् पं० गोपालदासजी बरैया स्वाभिमानी एवं प्राचीन पद्धतिके संरक्षक थे. आप ही के प्रभावसे बम्बई परीक्षालयकी स्थापना हुई, आपके ही सदुपदेशसे महा विद्यालयकी स्थापना हुई तथा आपके ही प्रयत्न और पूर्ण हस्तदानके द्वारा ही महासभा स्थापित एवं पल्लवित हुई.

आपका ध्येय इतना उच्चतम था कि चूंकि जैनियोंमें प्राचीन विद्या व धार्मिक ज्ञानकी महती त्रुटि हो गई है अतः उसे पुनरुज्जीवित करना चाहिये. आपका निरन्तर यही ध्येय रहा कि जैनधर्ममें सर्व विषयके शास्त्र हैं अतः पठनक्रममें जैनधर्मके ही शास्त्र रक्खे जावें. आपका यहां तक सदाग्रह था कि व्याकरण भी पठनक्रममें जैनाचार्यकृत ही होना चाहिये. यही कारण था कि आपने प्रथमांक कोर्समें व्याकरणमें कातन्त्रको, न्यायमें न्याय दीपिकाको और साहित्यमें चन्द्रप्रभचरितको ही स्थान दिया था.

आपकी तर्कशैली इतनी उत्तम थी कि अन्तरङ्ग कमेटीमें आपका ही पक्ष प्रधान रहता था. आपको शिक्षा खातेसे इतना गाढ़ प्रेम था कि आगरा रहकर भी विद्यालयका कार्य सुचारुरूपसे चलाते थे.

आप धर्मशास्त्रके अपूर्व विद्वान् थे. केवल धर्मशास्त्रके ही नहीं, द्रव्यानुयोगके भी अपूर्व विद्वान् थे. पञ्चाध्यायीके पठन

पाठनका प्रचार आप ही के प्रयत्नका फल है. आप विद्वान् ही न थे, लेखक भी थे. और परीक्षक भी प्रथम श्रेणीके थे. एक बारका जिक्र है—मैंने मथुरासे एक पत्र श्रीमान् पण्डितजीको इस आशयका लिखा कि 'बाईजीका स्वास्थ्य अत्यन्त खराब है अतः उन्होंने मुझे १५ दिनके लिये सिमरा बुलाया है.' आपने उत्तर दिया कि 'बाईजीका जो पत्र आया है उसे हमारे पास भेज दो.' मैंने क्या किया ? एक पत्र बाईजी के हस्ताक्षर का लिखकर मथुरामें डाल दिया. दूसरे दिन वह पत्र चौरासी में मुझे मिल गया. मैंने उसे ही लिफाफामें बन्दकर श्री पण्डित जी के पास भेज दिया. उन्होंने बांचकर उत्तर लिखा कि 'तुम शीघ्र ही चले जाओ परन्तु जब देशसे लौटो तब आगरासे हमसे मिलकर मथुरा जाना.'

मैं जतारा गया और १५ दिन बाद आगरा आ गया. जब पण्डितजी से मिला तब उन्होंने मुसकराते हुए पूछा 'बाईजी का स्वास्थ्य अच्छा है ?' मैंने कहा 'हां महाराज ! अच्छा है.' पण्डित जी ने कहा 'अच्छा यह श्लोक याद कर लो और फिर विद्यालय चले जाओ.' श्लोक यह था—

> उपाध्याये नटे धूर्ते, कुट्टिन्यां च तथैव च,
> माया तत्र न कर्तव्या माया तैरेव निर्मिता.'

एक ही बारमें श्लोक याद हो गया साथ ही भाव भी समझ में आ गया. मैंने गुरुजी से महती नम्र प्रार्थना की कि 'महाराज मैंने बड़ी गलती की है जो आपको मिथ्या पत्र देकर असभ्यताका व्यवहार किया.' गुरुजी ने कहा—'जाओ हम तुमसे खुश हैं, यदि इस प्रकारकी प्रकृतिको अपनाओगे तो आजन्म आनन्दसे रहोगे. हम तुम्हारे व्यवहारसे सन्तुष्ट हैं और तुम्हारा अपराध क्षमा करते हैं. तुम्हें जो कष्ट हो हमसे कहो हम निवारण

करेंगे. जितने छात्र हैं हम उन्हें पुत्रसे भी अधिक समझते हैं. यदि अब जैनधर्मका विकास होगा तो इन्हीं छात्रोंके द्वारा होगा, इन्हीं के द्वारा धर्मशास्त्र तथा सदाचारकी परिपाटी चलेगी. मैं तुम्हें दो रुपया मासिक अपनी ओरसे दुग्ध—पान के लिये देता हूँ.' मैं मथुरा चला गया.

आज जो जयधवलादि ग्रन्थोंकी भाषा टीका हो रही है वह आपके द्वारा व्युत्पन्न-शिक्षित विद्वानोंके द्वारा ही हो रही है. वह आपका ही भगीरथ प्रयत्न था जो आज भारतवर्षके जैनियों में करणानुयोगका प्रचार हो रहा है. अस्तु, आपके विषयमें कहां तक लिखूं. आपने मेरा जो उपकार किया है उसे मैं आजन्म नहीं भूल सकता.

खुरजा—

मैं मथुरा विद्यालयमें अध्ययन करता था यहां दो वर्ष रहा पश्चात् कारणवश खुरजा चला गया. उस समय जैन समाजमें श्री रानीवालों की कीर्ति दिगदिगन्त तक फैल रही थी. आपके यहां संस्कृत पढ़ानेका पूर्ण प्रबन्ध था. श्रीमान् स्वर्गीय मेवारामजी साहब रानीवाले संस्कृत विद्याके अपूर्व प्रेमी थे.

खुरजामें एक ब्राह्मणों की भी संस्कृतपाठशाला थी, छात्रों को सब प्रकारकी सुविधा थी. यहां पर मैं दो वर्ष पढ़ा. बनारस की प्रथमा परीक्षा तथा न्यायमध्यमा का प्रथम खण्ड यहींसे पास किया. यद्यपि मुझे यहाँ सब प्रकार की सुविधा थी परन्तु फिर भी खुरजा छोड़ना पड़ा.

शिखरजी की यात्रा—

एक दिनकी बात है—मैंने एक ज्योतिषीसे पूछा—'बतलाइये, मैंने न्याय मध्यमाके प्रथम खण्डमें परीक्षा दी है, पास ही

जाऊंगा ?' ज्योतिषीने कहा—'पास हो जाओगे पर यह निश्चित है कि तुम बैशाख सुदी १३ के ६ बजेके बाद खुरजा नहीं रह सकोगे—चले जाओगे.' 'मैं आपके निर्णयको मिथ्या कर दूंगा'...मैंने हंसते हुए कहा. उस दिनसे मुझे निरन्तर यह चिन्ता रहने लगी कि बैशाख सुदि १३ की कथाको मिथ्या करना है.

बैशाख सुदि १२ के दोपहरका समय था, अचानक बहुत ही भयानक स्वप्न आया. निद्रा भंग होते ही मनमें चिन्ता हुई कि यदि असमयमें मरण हो जावेगा तो शिखरजी की यात्रा रह जावेगी अतः शिखरजी अवश्य ही जाना चाहिये. कुछ देर बाद विचार आया कि कैसे जाऊं ? गर्मीके दिन हैं, एकाकी जानेमें अनेक आपत्तियां हैं. मैं विचारमें मग्न ही था कि सेठ मेवारामजी आ गये. बोले गर्मी के दिन हैं, १८ मील की यात्रा कैसे करोगे ? मैंने कहा—जिस दिन हमारी यात्रा होगी उसके पहले रात्रिको मेघराज कृपा करेंगे ? मेरा तो पूर्ण विश्वास है कि यात्राके ४ घंटा पहले अखंड जलधारा गिरेगी.

श्री सेठजी हँस गये और हंसते-हंसते बोले—'अच्छा, पानी बरसै तो हमें भी पत्र देना.' प्रातःकाल हमने श्री जिनेन्द्रदेवके दर्शन पूजन कर भोजन किया और साढ़े आठ बजे स्टेशन पर पहुँच गये. ६ बजे जब गाड़ी छूटने लगी तब याद आई कि ज्योतिषीने कहा था कि 'तुम बैशाख सुदि १३ को ६ बजेके बाद खुरजा न रह सकोगे तथा साथमें यह भी कहा था कि फिर खुर्जा नहीं आओगे.'

दूसरे दिन अलाहाबाद पहुँच गये. गंगा यमुना का संगम देखने के लिए गये. हमारा जो साथी था, उसने कहा—चलो हम तुम भी स्नान करलें, हम दोनोंने गङ्गास्नान किया. घाटके पण्डेके पास वस्त्रादि रख दिये. जब स्नान कर चुके तब पंडा

महाराजने दक्षिणा मांगी. हमने कहा—आपको कौन सा दान दिया जाय? आप त्यागी तो हैं नहीं जिससे कि पात्र दान दिया जावे. करुणा दानके पात्र मालूम नहीं होते' क्योंकि आपके शरीरमें रईसोंका प्रत्यय होता है फिर भी यदि आप नाराज होते हैं तो लीजिये यह एक रुपया है.'

शामको हम दोनों वहां से चले और पटना—सुदर्शन सेठके निर्वाणस्थान पर पहुँच गये. श्री सुदर्शन निर्वाण क्षेत्रकी वन्दना की. मध्याह्नमें भोजनादिसे निवृत्त होकर गिरेडीके लिए चल दिया

श्री पार्श्वप्रभुकी निर्वाणभूमिका साधारण दर्शन तो गिरेडीसे ही हो गया था पर ज्यों ज्यों आगे बढ़ते थे त्यों त्यों स्पष्ट दर्शन होते जाते थे. श्री पार्श्वप्रभुके मन्दिर पर सर्व प्रथम दृष्टि पड़ती थी. मनमें ऐसी उमङ्ग आई कि यदि पङ्ख होते तो उड़कर इसी क्षण प्रभुके दर्शन करते. चित्त में ऐसी भावना उत्पन्न हो रही थी कि कब प्रभुके चरणोंका स्पर्श करें. पैर उतावली के साथ आगे बढ़ रहे थे, एक एक क्षण, एक एक दिन सा प्रतीत होता था.

अन्तमें मधुवन पहुँच गये, श्री पार्श्वप्रभुके दर्शन कर परम आनन्दका अनुभव किया रात्रिके नौ बजेसे लेकर दस बजे तक अखण्ड वर्षा हुई. मन अह्लादसे भर गया और हम दोनों पार्श्व-प्रभुके गुण गाने लगे. हृदयमें इस बातकी दृढ़ श्रद्धा हो गई कि 'अब तो पार्श्व प्रभुकी वन्दना सुख पूर्वक होगी. निद्रा नहीं आई, हम दोनों ही श्री पार्श्वके चरित्रकी चर्चा करते रहे. चर्चा करते करते ही एक बज गया उसी समय शौचादि क्रियासे निवृत्त होकर स्वच्छ वस्त्र पहिने और एक आदमी साथ लेकर श्रीगिरिराजकी वन्दनाके लिये प्रस्थान कर दिया. मार्गमें स्तुति पाठ किया.

स्तुतिपाठके अनन्तर मैं मन ही मन कहने लगा कि 'हे प्रभो ! यह हमारी वन्दना निर्विघ्न हो जावे इसके उपलक्ष्यमें हम आपका पञ्चकल्याणक पाठ करेंगे. ऐसा सुनते हैं कि अधम जीवोंको वन्दना नहीं होती. यदि हमारी वन्दना नहीं हुई तो हम अधम पुरुषोंकी श्रेणीमें गिने जावेंगे; इत्यादि—कहते कहते श्री कुन्थु-नाथ स्वामीके शिखर पर पहुँच गया. हम दोनों ने बड़े ही उत्साह के साथ श्री कुन्थुनाथ स्वामीकी टोंक पर देव, शास्त्र गुरु का पूजन किया और वहांसे अन्य टोंकोंकी वन्दना करते हुए श्री चन्द्रप्रभकी टोंक पर पहुँचे. अपूर्व दृश्य था. मन में आया कि धन्य है उन महानुभावों को जिन्होंने इन दुर्गम स्थानों से मोक्ष लाभ लिया.

श्री चन्द्रप्रभ स्वामीकी पूजन कर शेष तीर्थंकरोंकी वन्दना करते हुए जलमन्दिर आये. वहांसे वन्दना कर श्रीपार्श्वनाथकी टोंकपर पहुँच गये. पहुँचतेही ऐसी मन्द मन्द सुगन्धित वायु आई कि मार्गका परिश्रम एकदम चला गया. आनन्दसे पूजा की पश्चात् मनमें अनेक विचार आये परन्तु शक्तिकी दुर्बलतासे सब मनोरथ विफल हुए.

वन्दना निर्विघ्न होनेसे अनुपम आनन्द आया और मनमें जो यह भय था कि यदि वन्दना न हुई तो अधम पुरुषोंमें गणना की जावेगी, वह मिट गया. फिर वहांसे चल कर ग्यारह बजे श्री मधुवनकी तेरापन्थी कोठीमें आगये. एक दिन आराम किया, फिर यह विचार हुआ कि परिक्रमा करना चाहिये, साथी ने भी स्वीकार किया, एक आदमीको भी साथ लिया और प्रातः काल होते होते तीनोंने परिक्रमाके लिये प्रस्थान कर दिया. मार्ग भूल गये, तृषाने बहुत सताया, जो आदमी साथ था उसे भी मार्गका पता नहीं था, बड़े असमञ्जसमें पड़ गये. हे भगवन् ! यह क्या आपत्ति आगई ?

जेठका महीना, मध्याह्नका समय, मार्गका परिश्रम, नीरस भोजनका प्रभाव आदि कारणोंसे पिपासा बढ़ने लगी, कण्ठ सूखने लगा, बेचैनीसे चित्तमें अनेक प्रकारके विचार आने लगे, कुछ स्थिर भाव नहीं रहा. फिर यह विचार आया कि श्री पार्श्वप्रभु संसारके विघ्नहर्ता हैं. हमें पानीके लिये भक्ति करना उचित न था परन्तु क्या करें? उस समय तो हमें पानीकी प्राप्ति मुक्तिसे भी अधिक भान हो रही थी. अतः हमने याचना पार्श्व प्रभुसे की कि 'हे प्रभो! जब कि आपकी भक्तिसे वह निर्वाणपद मिलता है जहां कि यह कोई रोग ही नहीं है, तब केवल पानी मांगनेवाले मनुष्यको पानी न मिले यह क्या न्याय है? यदि इस समय मेरी अपमृत्यु हो गई तो यह लांछन किसे लगेगा? आखिर जनसमुदाय यही तो कहेगा कि शिखरजीकी परिक्रमा में तीन आदमी पानीके बिना प्राण विहीन हो गये. मेरी यह भावना थी कि एकबार आपकी यात्रा करके मनुष्यजन्म सफल करूं. मुझे सम्पत्तिकी इच्छा नहीं, एक लोटा पानी मिल जावे यही विनय है. हे दीनबन्धो! कृपा कीजिये जिससे कि पानीका कुण्ड मिल जावे, इत्यादि विकल्पोंने आत्माकी दशा चिन्तातुर बना दी. इतनेमें अन्तरात्मासे उत्तर मिला यह पार्श्वनाथ का दरबार है, इसमें कष्ट होनेका विकल्प छोड़ो. जो बीचमें गली है उसीसे प्रस्थान करो अवश्य ही मनोभिलाषितकी पूर्ति हो जावेगी.

हम तीनों एक फर्लाङ्ग चले होंगे कि सामने पानीसे लबालब भरा हुआ एक कुण्ड दिखाई पड़ा. देखकर हर्षका पारावार न रहा, मानों अन्धेको नेत्र मिल गये हों या दरिद्रको निधि. एकदम तीनों आदमी कुण्डके तटपर बैठ गये. देखकर ही तृषाकी शान्ति हो गई. थोड़ी देर बाद जलपान किया फिर प्रभु पार्श्वके गुण गान करने लगे—'धन्य है प्रभु तेरी महिमा' जब

कि आपकी महिमा प्राणियोंको संसार बन्धनसे मुक्त कर देती है तब उससे यह क्षुद्र बाधा मिट गई इसमें आश्चर्य ही क्या है? हम मोही जीव संसारकी बाधाओंके सहनेमें असमर्थ हैं अतः इन क्षुद्र कार्योंकी पूर्तिमें ही भक्तिके अचिन्त्य प्रभावोंको खो देते हैं.

आनन्दसे कुण्डके किनारे आराम में तीन घण्टे बिता दिये. पश्चात् भोजन कर श्री णमोकर मन्त्रकी माला फेरी. दिन अस्त हो गया. तीनों आदमी वहांसे मधुवनको चल दिये और डेढ़ घंटेमें मधुवन पहुँच गये. सुखपूर्वक वन्दना और परिक्रमा कर हम बहुत ही कृतकृत्य हुए. मनमें यह निश्चय किया कि एक बार फिर पार्श्वप्रभु के निर्वाण क्षेत्रकी वन्दना करूंगा.

मैंने प्रायः बहुतसे सिद्ध क्षेत्रोंकी वन्दना की है परन्तु परिणामों की जो निर्मलता यहां हुई उसकी उपमा अन्यत्र नहीं मिलती. प्रातःकाल प्रभु पार्श्वनाथके दर्शन पूजन कर मैं मऊ चला गया और साथी खुरजा को. श्री शिखरजीकी मेरी यह यात्रा सम्वत् १६५६ में हुई थी.

मऊसे श्री बाईजीके यहां सिमरा पहुँच गया. डेढ़ मास सिमरामें सानन्द बिताया.

टीकमगढ़—

अनन्तर यह सुना कि टीकमगढ़में मैथिल देशके बड़े भारी विद्वान् दुलार झा राजाके यहां प्रमुख विद्वान् हैं और न्याय शास्त्रके अपूर्व विद्वान् हैं. मैं उनके पास चला गया, दुलार झा बहुत ही व्युत्पन्न और प्रतिभाशाली विद्वान् थे. उन्होंने लगातार पचीस वर्ष तक नवद्वीप (नदिया-शान्तिपुर) में न्यायशास्त्रका अध्ययन किया था.

उनके पास मैंने मुक्तावली, पञ्चलक्षणी, व्यधिकरणादि ग्रन्थों-का अध्ययन किया. उनकी मेरे ऊपर बहुत अनुकम्पा थी परन्तु उनके एक व्यवहारसे मेरी उनमें अरुचि हो गई. चूंकि वे मैथिल थे अतः बलि प्रथाके पोषक थे—देवीको बकरा चढ़ानेका पोषण करते थे. मैंने कहा—'जीवोंकी रक्षा करना ही तो धर्म है. जहां जीव घातमें धर्म माना जावे वहां जितनी भी बाह्य क्रियायें हैं सब विफल हैं. धर्म तो वह पदार्थ है जिसके द्वारा यह प्राणी संसार बन्धनसे मुक्त हो जाता है. जहां प्राणीका वध धर्म बताया जावे वहां दयाका अभाव निश्चित है, जहां दयाका अभाव है वहां धर्म का अंश नहीं, जहां धर्म नहीं वहां संसारसे मुक्ति नहीं अतः महाराज! आप इतने विद्वान् होकर भी इन असत् कर्मोंकी पुष्टि करते हैं—यह सर्वथा अनुचित है.'

बहुत कुछ बात हुई पर उनका प्रभाव न हमपर पड़ा और न हमारा प्रभाव उनपर पड़ा. अन्तमें मैंने यही निश्चय किया कि यहांसे अन्यत्र चला जाना ही उत्तम है. बश, क्या था? वहांसे चलकर सिमरा आ गया.

हरिपुर—

सम्वत् १९६० की बात है. बाईजीसे आज्ञा लेकर श्रीमान् पं० ठाकुरदासजीके यहां हरिपुर चला गया. आनन्दसे प्रमेय-कमलमार्तण्ड पढ़ने लगा. सिद्धान्तकौमुदी का भी कुछ अंश पढ़ा था. पण्डितजी इसी समय योगवाशिष्ठकी हिन्दी टीका करते थे मैंने भी कुछ उसे पढ़ा, वेदान्त विषयक चर्चा उसमें थी. पण्डितजीके घर पर मैं तीन या चार मास रहा. एक दिन पण्डितजीने कहा—हाथसे भोजन मत बनाया करो, तुम्हारी माँ बना देंगी.

माँजीने भी कहा—बेटा! क्यों कष्ट उठाते हो? हमारे

यहां भोजन कर लिया करो. मैंने कहा—माँजी ठीक है, परन्तु आपके यहां न तो पानी छाना जाता है और न ढीमरके जलका परहेज ही है साथ ही हमें शामको भोजन न मिल सकेगा. माँजीने बड़े प्रेमसे उत्तर दिया—जिसप्रकार तुम कहोगे उसी प्रकार भोजन बना दूंगी और हम लोग भी रात्रिका भोजन शामको ही कर लिया करेंगे, अतः तुम्हें शामका भोजन मिलनेमें कठिनाई न होगी. लाचार, मैंने उनके यहां भोजन करना स्वीकार कर लिया.

एक दिनकी बात है—पण्डितजीका एक शिष्य भङ्ग पीता था, उसने मुझसे कहा कि महादेवजीके साक्षात् दर्शन करना हो तो तुम भी एक गोली खा लो. मैंने विचार किया कि मुझे भी श्रीजिनेन्द्रदेवके साक्षात् दर्शन होने लगेंगे ऐसा विचार कर मैंने भांगकी एक गोली खा ली. एक घण्टा बाद जब भांगका नशा आ गया, जाकर खाटपर लेट गया. पण्डितजीने माँजीसे कहा 'देखो, आज इसने भंग खा ली है अतः इसे दही और खटाई खिला दो.' मैंने उस नशाकी दशामें भी विचार किया कि मैं तो रात्रिके समय पानीके सिवाय कुछ लेता नहीं पर आज प्रतिज्ञा भंग होती दिखती है. उक्त विचार मनमें आया था कि पण्डितजी महाराज दही और खटाई लेकर पहुँच गये तथा कहने लगे—'लो, यह खटाई व दही खालो, तुम्हारा नशा उतर जावेगा.' मैंने कहा—'महाराज! मैं तो रात्रिके समय पानीके सिवाय कुछ भी नहीं लेता, यह दही-खटाई कैसे ले लूं?' पण्डितजीने डांटते हुए कहा—'भंग पीनेको जैनी न थे.' मैंने कहा—'महाराज मैं शास्त्रार्थ नहीं करना चाहता, कृपा कर मुझे शयन करने दीजिये.' पण्डितजी विवश होकर चले गये, मैं पछताता हुआ पड़ा रहा—बड़ी गल्ती की जो भंग पीकर पण्डितजीका अविनय की. किसी तरह रात्रि बीत गई प्रातः-

काल खोकर उठा. पण्डितजीके चरणों मैं पर गया और बड़े दुःखके साथ कहा कि महाराज! मुझसे बड़ी गलती हुई.

वहां पर कुछ दिन रहकर सं. १९६१ में बनारस चला गया.

काशी—

उस समय क्वीन्स कालेजमें न्यायके मुख्य अध्यापक जीवनाथ मिश्र थे. बहुत ही प्रतिभाशाली विद्वान् थे. आपकी शिष्य मण्डलीमें अनेक शिष्य प्रखर बुद्धिके धारक थे. एक दिन मैं उनके निवास स्थानपर गया और प्रणाम कर महाराजसे निवेदन किया कि महाराज! मुझे न्यायशास्त्र पढ़ना है, यदि आपकी आज्ञा हो तो आपके बताये हुए समयसे आपके पास आया करूं. मैंने एक रुपया भी उनके चरणोंमें भेंट किया. पण्डितजीने पूछा—कौन ब्राह्मण हो?' निर्भीक होकर कहा—'महाराज! मैं ब्राह्मण नहीं हूँ और न क्षत्रिय हूँ, वैश्य हूँ, यद्यपि मेरा कौलिक मत श्रीरामका उपासक था, परन्तु मेरे पिता तथा मेरा विश्वास जैनधर्ममें दृढ़ हो गया.

श्रीमान् नैयायिकजी एकदम आवेगमें आगये और रुपया फेंकते हुए बोले—'चले जाओ, हम नास्तिक लोगोंको नहीं पढ़ाते. तुम्हारे साथ सम्भाषण करना भी प्रायश्चितका कारण है, जाओ यहां से.'

मैंने कहा—'महाराज! इतना कुपित होनेकी बात नहीं. आखिर हम भी तो मनुष्य हैं, इतना आवेग क्यों? आप विद्वान् हैं, राजमान्य हैं, ब्राह्मण हैं तथा उस देशके हैं जहां ग्राम-ग्राममें विद्वान् हैं, फिर भी प्रार्थना करता हूँ कि आप शयन समय विचार कीजियेगा कि मनुष्यके साथ ऐसा अनुचित व्यवहार करना क्या सभ्यताके अनुकूल था. समयकी बलवत्ता है कि जिस

धर्मके प्रवर्तक वीतराग सर्वज्ञ थे और जिस नगरीमें श्री पार्श्व-नाथ तीर्थंकरका जन्म हुआ था आज उसी नगरीमें जैनधर्मके माननेवालों का इतना तिरस्कार ?

अन्त में उन्होंने यही उत्तर दिया कि यहाँसे चले जाओ इसीमें तुम्हारी भलाई है. मै चुपचाप वहांसे चल दिया और मार्गमें भाग्यकी निन्दा तथा पञ्चम कालके दुष्प्रभावकी महिमाक स्मरण करता हुआ श्री मन्दाकिनी आकर कोठरीमें रुदन करने लगा पर सुननेवाला कौन था ?

मनमें आता—कि हे प्रभो! क्या करें ? कहां जावें ? कोई उपाय नहीं सूझता. क्या आपको जन्म नगरीसे मैं विफल मनोरथ ही देशको चला जाऊं ? इस तरहके विचार करते-करते कुछ निद्रा आ गई. स्वप्नमें क्या देखता हूँ कि—

एक सुन्दर मनुष्य सामने खड़ा है, कहता है—'क्यों भाई! उदास क्यों हो ?' मैंने कहा—'आपको क्या प्रयोजन ? न आपसे हमारा परिचय है और न आपसे हम कुछ कहते हैं, फिर आपने कैसे जान लिया कि मैं उदासीन हूँ ?' उस भले आदमीने कहा कि 'तुम्हारा मुख वैवर्ण्य तुम्हारे शोकको कह रहा है. मैंने उसे इष्ट समझकर नैयायिक महाराजकी पूरी कथा सुना दी. उसने सुनकर कहा—'रोनेसे किसी कार्यकी सिद्धि नहीं होती, पुरुषार्थ करनेसे मोक्षलाभ हो जाता है फिर विद्याका लाभ कौनसी भारी बात है.' तुम्हारे परम हितैषी बाबा भागीरथजी हैं उन्हें बुलाओ, उनके द्वारा तुमको बहुत सहायता मिलेगी. तुम दोनों यहां पर एक पाठशाला खोलनेका प्रयत्न करो, मैं विश्वास दिलाता हूँ कि तुम्हारा मनोरथ श्रुतपञ्चमी तक नियमसे पूर्ण होगा.'

विशुद्ध परिमाणों से पुरुषार्थ करो, सब कुछ होगा, अच्छा, हम जाते हैं. इतने में निद्रा भङ्ग हो गई, देखा तो कहीं कुछ

नहीं. प्रातःकालके ५ बजे होंगे, हाथ पैर धोकर श्रीपार्श्वप्रभुकी स्मृतिके लिये बैठ गया और इसीमें सूर्योदय होगया. उठकर विश्वनाथजीके मन्दिरका दृश्य देखनेके लिये चला गया. जाते-जाते मार्गमें एक श्वेताम्बर विद्यालय मिल गया. मैं उसमें चला गया. वहां देखा कि अनेक छात्र संस्कृत अध्ययन कर रहे हैं मैंने पाठशालाध्यक्ष श्री धर्मविजय सूरिको विनयके साथ प्रणाम किया. आपने पूछा 'कौन हैं ?' यहां किस प्रयोजनसे आये ?' मैंने कहा—बनारस इस उद्देश्यसे आया हूँ कि संस्कृतका अध्ययन करूं.' कल मैं एक नैयायिक महोदयके समीप गया था उन्होंने पढ़ाना स्वीकार भी कर लिया परन्तु जैनका नाम सुनते ही उन्होंने मर्मभेदी शब्दोंका प्रयोग कर अपने स्थानसे निकाल दिया यही मेरी रामकथा है. आज इसी चिन्तामें भटकता-भटकता यहां आगया हूँ.'

उन्होंने कहा—हमारे साथ चलो हम तुमको न्यायशास्त्रमें अद्वितीय व्युत्पन्न शास्त्रीके पास ले चलते हैं. वे हमारे यहां अध्यापक है.' मै श्रीधर्मविजय सूरिके साथ श्री अम्बादासजी शास्त्रीके पास पहुंच गया. आप छात्रोंको अध्ययन करा रहे थे, मैंने बड़ी नम्रताके साथ महाराजको प्रणाम किया. उन्होंने आशीर्वाद देते हुए बैठनेका आदेश दिया और मेरे आनेका कारण पूछा. मैंने जो कुछ वृत्तान्त था अक्षरशः सुना दिया. शास्त्रीजी ने कहा कि अभी ठहरो, एक घण्टा बाद हम यहां से चलेंगे तुम हमारे साथ चलना. शास्त्रीजी अध्ययन कराने लगे, मैं उनकी पाठन प्रणालीको देखकर मुग्ध हो गया. मनमें आया कि यदि ऐसे विद्वान् से न्यायशास्त्रका अध्ययन किया जावे तो अनायास ही महती व्युत्पत्ति हो जावे.

एक घण्टाके बाद श्री शास्त्रीजी के साथ पीछे-पीछे चलता

हुआ उनके घर पहुँच गया. उन्होंने बड़े स्नेहके साथ बातचीत की और कहा कि तुम हमारे यहां आओ हम तुम्हें पढ़ावेंगे. उनके प्रेमसे ओत-प्रोत वचन श्रवणकर मेरा समस्त क्लेश एक-साथ चला गया. वहांसे भदैनीके मन्दिर में जो अस्सीघाटके ऊपर है चला आया, और एक पत्र श्री बाबाजी को डाल दिया उस समय आप आगरा में रहते थे.

महाराज पत्र पाते ही बनारस आ गये.

६

स्याद्वाद विद्यालय

विद्यालय का जन्म—

माघका महीना था, सर्दी खूब पड़ती थी, हम दोनों यही चर्चा करते थे कि कौनसे उपायों से काशी में एक दिगम्बर विद्यालय स्थापित हो जावे. इसे सुनकर झम्मनलालजी कामावालोंने एक रुपया विद्यालयकी सहायताके लिये दिया. मैंने बड़ी प्रसन्नतासे वह रुपया ले लिया. मैंने श्री झम्मनलालजीको सहस्रों धन्यवाद दिये और मार्गमें ही पोस्टआफिससे ६४ पोष्टकार्ड ले लिये. रात्रिको ही ६४ पोष्टकार्ड लिखकर ६४ स्थानों पर भेज दिये. उनमें यह लिखा था कि—

वाराणसी जैसी विशाल नगरी में जहां हजारों छात्र संस्कृत विद्याका अध्ययन कर अपने अज्ञानान्धकारका नाश कर रहे हों वहां पर हम जैन छात्रोंको पढ़नेकी सुविधा न हो, जहां पर छात्रोंको भोजन प्रदान करनेके लिये सैकड़ों भोजनालय विद्यमान हों वहां अधिककी बात जाने दो पाँच जैन छात्रोंके लिये भी

निर्वाह योग्य स्थान न हो, क्या हमारी दिगम्बर समाज १० या २० छात्रोंके अध्ययनका प्रबन्ध न कर सकेगी ? आशा है आप लोग हमारी वेदनाका प्रतिकार करेंगे. यह मेरी एक की ही वेदना नहीं है किन्तु अखिल समाजके छात्रोंकी वेदना है.

एक मासके भीतर बहुतसे महानुभावोंके आशाजनक उत्तर आगये साथ ही १००) मासिक सहायता के भी वचन मिल गये. हम लोगोंके हर्षका ठिकाना न रहा, मारे हर्षके हृदय कमल खिल गये. अब श्रीमान् गुरु पन्नालालजी वाकलीवालको भी एक पत्र लिखा १० दिनके बाद आपका भी शुभागमन होगया. रात्रिदिन इसी विषयकी चर्चा होती थी, और इसी विषयका आन्दोलन प्रायः समस्त दिगम्बर जैन पत्रोंमें कर दिया गया कि काशीमें एक जैन विद्यालय की महती आवश्यक्ता है.

कितने ही स्थानोंसे इस आशयके भी पत्र आये कि आप लोगोंने यह क्या आन्दोलन मचा रक्खा है. काशी जैसे स्थानमें दिगम्बर जैन विद्यालयका होना अत्यन्त कठिन है. जहांपर कोई सहायक नही, जैनमतके प्रेमी विद्वान् नहीं वहां क्या आप लोग हमारी प्रतिष्ठा भंग कराओगे. परन्तु हम लोग अपने प्रयत्नसे विचलित नहीं हुए. श्रीमान् स्वर्गीय बाबू देवकुमारजी रईस आराको भी एक पत्र इस आशयका दिया. एक पत्र श्रीमान् स्वर्गीय सेठ माणिकचन्द्रजी जे० पी० बम्बई को भी लिखा. आठ दिन बाद सेठजी साहबका पत्र आ गया कि हम उद्‌घाटनके समय अवश्य काशी आवेंगे. श्री सर्राफ मूलचन्द्रजी बरुआसागर ने कहाकि १५००) कल्दार हम देवेंगे, हमारा साहस दृढ़तम हो गया.

विद्यालय का उद्‌घाटन—

यह निश्चय किया गया कि ज्येष्ठ सुदी पञ्चमीको स्याद्वाद विद्यालयका उद्‌घाटन किया जावे. कुंकुमपत्रिका सर्वत्र वितरण कर दी. ज्यों ज्यों मूहूर्त निकट आया अनुकूल कारणकूट मिलते गये. महरौनीसे श्रीयुत बंशीधरजी, श्रीयुत् गोबिन्दराय जी तथा एक और छात्रके आनेकी सूचना आ गई. बम्बईसे सेठजी साहब, आरासे बाबू देवकुमारजी, देहलीसे श्रीमान लाला मोतीलालजी तथा श्रीमान् एडवोकेट अजितप्रसादजी जेठ सुदि ४ के दिन ये सब नेतागण आ गये.

पञ्चमी को प्रातःकाल विद्यालय का उद्‌घाटन होना है. पण्डितों का क्या प्रबन्ध है ?'...उपस्थित लोगोंने पूछा. मैंने कहा—'मैं श्रीशास्त्री अम्बादासजीसे न्यायशास्त्रका अध्ययन करता हूँ, १५) मासक स्कालर्शिप मुझे बम्बईसे श्रीसेठजी साहबके पाससे मिलती है वही उनके चरणोंमें अर्पित कर देता हूँ. अब २५) मासिक उन्हें देना चाहिये वे तीन घण्टेको आ जावेंगे.' सबने स्वीकार किया. २०) मासिक पर एक व्याकरणाचार्य और इतने पर ही एक साहित्याध्यापक भी मिल गया. सुपरिन्टेन्डेन्ट पदके लिए वर्णी दीपचन्द्रजी नियत हुये. उस समय मुझे मिलाकर केवल चार छात्र थे.

जेठ सुदि ५ वीरनिर्वाण सं० २४३२ और विक्रम सं० १९६२ के दिन प्रात.काल श्रीमैदागिनीमें सर्व प्रथम श्रीपार्श्वनाथ स्वामी का पूजन काय सम्पन्न हुआ अनन्तर गाजे बाजेके साथ श्रीस्याद्वाद विद्यालयका उद्‌घाटन श्रीमान् सेठ माणिकचन्द्रजीके करकमलों द्वारा सम्पन्न हुआ.

बाबू शीतलप्रसादजीने प्रतिज्ञा की थी कि मैं आजीवन हर तरह से इस विद्यालयकी सहायता करूंगा और वर्षमें दो चार

बार यहां आकर निरीक्षण द्वारा इसकी उन्नतिमें पूर्ण सहयोग दूंगा. आपने अपनी उक्त प्रतिज्ञाका आजीवन निर्वाह किया. कुछ दिन बाद आप ब्रह्मचारी हो गये परन्तु विद्यालयको न भूले—उसकी सहायता निरन्तर करते रहे. वर्षों तक आप विद्यालयके अधिष्ठाता रहे. इस तरह विद्यालयका उद्‌घाटन सानन्द सम्पन्न हो गया. पठनक्रम क्वीन्स कालेज बनारसका रहा. विद्यालयको सहायता भी अच्छी मिलने लगी, भारतवर्ष के प्रत्येक प्रान्तसे छात्र आने लगे.

इसी विद्यालय के मुख्य छात्र पण्डित बंशीधरजी साहब हैं आप बड़े ही प्रतिभाशाली हैं, विद्वान ही नहीं त्यागी भी हैं, श्रीमान् पं० माणिकचन्द्रजी न्यायाचार्य और श्रीमान् पं० देवकी नन्दनजी व्याख्यानवाचस्पति भी इसी विद्यालयके छात्र थे.

कुछ दिन बाद पं० दीपचन्द्रजी वर्णी मुझसे रुष्ट हो गये. विद्यालय को छोड़ कर इलाहाबाद चले गये. उनके अनन्तर श्रीमान् बाबा भागीरथजी अधिष्ठाता हो गये. आप विलक्षण त्यागी थे, मैं आपका अनन्य भक्त प्रारम्भसे ही था. आपका शासन इतना कठोर था कि अपराधके अनुकूल दण्ड देनेमें आप स्नेहको तिलाञ्जलि दे देते थे. सब छात्र बाबाजीकी आज्ञा पालन करते थे. यद्यपि मैं बाबाजी के मुँह लगा था तथापि भयभीत अवश्य रहता था.

बाबाजी के शासन में—

गङ्गाके उस तट पर रामनगरमें आश्विन मास भर रामलीला होती है और अयोध्या आदिसे बड़ी बड़ी साधुमण्डली आती हैं. आश्विन सुदि ६ को मेरे मनमें आया कि रामलीला देखनेके लिए रामनगर जाऊं. सैकड़ों नौकाएं गङ्गामें रामनगरको जा रही थीं. मैंने भी जानेका विचार कर लिया ५ या ६ छात्रोंको

भी साथमें लिया. उचित तो यह था कि बाबाजी महाराजसे आज्ञा लेकर जाता परन्तु महाराज सामायिकके लिये बैठ गये, बोल नहीं सकते थे अतः मैंने सामने खड़े होकर प्रणाम किया और निवेदन किया कि महाराज ! आज रामलीला देखनेके लिए रामनगर जाते हैं, आप सामायिकमें बैठ चुके हैं अतः आज्ञा न ले सके

गङ्गा के घाट पर पहुँचे और नौकामें बैठ गये. नौका घाट से कुछ ही दूर पहुँची थी कि इतनेमें वायुका वेग आया और नौका डगमगाने लगी. बाबाजी की दृष्टि नौका पर गई और उनके निर्मल मनमें एकदम यह विकल्प उठा कि अब नौका डूबी, बड़ा अनथ हुआ, इस नादान को क्या सूझी, जो आज इसने अपना सर्वनाश किया और छात्रोंका भी. नौका पार लग गई. रात्रिके दस बजे हम लोग रामनगरसे वापिस आगये. आते ही बाबा जी नेकहा—'पण्डितजी ! कहाँ पधारे थे ?'

यह शब्द सुन कर हम तो भयसे अवाक् रह गये, महाराज कभी तो पण्डितजी कहते नहीं थे, आज कौनसा गुरुतम अपराध होगया जिससे महाराज इतनी नाराजी प्रकट कर रहे हैं ? मैंने कहा—'महाराज ! रामलीला देखने गये थे.' उन्होंने कहा—'किससे छुट्टी लेकर गये थे ?' मैंने कहा—'उस समय सुपरिन्टे-न्डेन्ट साहब तो मिले न थे और आप सामायिक करने लग गये थे अतः आपको प्रणाम कर आज्ञा ले चला गया था. मुझसे अपराध अवश्य हुआ है अतः क्षमा की भिक्षा मांगता हूँ '

महाराज बोले—'यदि नौका डूब जाती तो क्या होता ?' मैंने कहा—'प्राण जाते.' उन्होंने कहा—'फिर क्या होता ?' मैंने मुसकराते हुए कहा—'महाराज ! जब हमारे प्राण ही जाते तब क्या होता वह आप जानते या जो यहां रहते वे जानते, मैं क्या

कहूँ ?' अब जीवित बच गया हूँ यदि आप पूंछें कि अब क्या होगा ? तो उत्तर दे सकता हूँ. 'अच्छा कहो'...बाबाजीने शान्त होकर कहा. मैं कहने लगा—'मेरे मनमें तो यह विकल्प आया कि आज तुमने महान् अपराध किया है जो बाबाजीकी आज्ञाके बिना रामलीला देखनेके लिये रामनगर गये. यदि आज नौका डूब जाती तो पाठशालाध्यक्षोंकी कितनी निन्दा होती ? अतः इस अपराधमें बाबाजी तुम्हें पाठशालासे निकाल देवेंगे. आपके मनमें यह है, ऐसा मुझे भान होता होता है. बाबाजीने कुछ विस्मयके साथ कहा कि 'अक्षरशः सत्य कहते हो.'

उन्होंने सुपरिन्टेन्डेन्ट साहबको बुलवाया और शीघ्र ही पत्र लिख कर उसी समय लिफाफामें बन्द किया और उसके ऊपर लेटफीस लगाकर चपरासीके हाथमें देते हुए कहा कि तुम इसे इसी समय पोष्ट आफिसमें डाल आओ. मैंने बहुत ही विनय के साथ प्रार्थना की कि महाराज ! अबकी बार माफी दी जावे आयति-कालमें अब ऐसा अपराध न होगा. बाबाजी एकदम गरम हो गये—जोरसे बोले—तुम नहीं जानते मेरा नाम भागीरथ है और मैं ब्रजका रहनेवाला हूँ. अब तुम्हारी इसीमें भलाई है कि यहांसे चले जाओ.'

'अच्छा महाराज ! जाता हूँ' कह कर शीघ्र ही बाहर आया और चपरासीसे, जो कि बाबाजीकी चिट्ठी डांकमें डालनेके लिये जा रहा था, मैंने कहा—भाई क्यों चिट्ठी डालते हो, बाबाजी महाराज तो क्षणिक रुष्ट हैं, अभी प्रसन्न हो जावेंगे, यह एक रुपया मिठाई खाने को लो और चिट्ठी हमें दे दो. वह भला आदमी था चिट्ठी हमें दे दी और दस मिनट बाद आकर बाबा जीसे कह गया कि चिट्ठी डाल आया हूँ. बाबा जी बोले—'अच्छा किया पाप कटा.' मैं इन विरुद्ध वाक्योंको श्रवण कर

सहम गया. हे भगवन्! क्या आपत्ति आई? जो मुझे हार्दिक स्नेह करते थे आज उन्हींके श्रीमुखसे यह निकले कि पाप कटा, अर्थात् यह इस स्थानसे चला जावेगा तो पाठशाला शान्तिसे चलेगी.

एक भाषण—

मैंने कहा—'महाराज! यदि आज्ञा हो तो छात्रसमुदायमें कुछ भाषण करूं और चला जाऊं.' बाबाजीने कहा—'अच्छा जो कहना हो शीघ्रतासे कह कर १५ मिनटमें चले जाना.' अन्तमें साहस बटोर कर भाषण करनेके लिये खड़ा हुआ. महानुभाव बाबाजी महोदय! श्रीसुपरिन्टेन्डेन्ट महाशय! तथा छात्रवर्ग! कर्मोंकी गति विचित्र है. जैसे देखिये, प्रातःकाल श्रीरामचन्द्रजी महाराजको युवराज तिलक होनेवाला था जहां बड़े से बड़े ऋषिलोग मुहूर्त शोधन करनेवाले थे, किसी प्रकारकी सामग्रीकी न्यूनता न थी पर हुआ क्या, सो पुराणोंसे सबको विदित है. किसी कविने कहा भी है—

यच्चिन्तितं तदिह दूरतरं प्रयाति
यच्चेतसापि न कृतं तदिहाभ्युपैति.
प्रातर्भवामि वसुधाधिपचक्रवर्ती
सोऽहं व्रजामि विपिने जटिलस्तपस्वी.'

इत्यादि बहुत कथानक शास्त्रोंमें मिलते हैं. जिन कार्योंकी सम्भावना भी नहीं वह आकर हो जाते हैं और जो होनेवाले हैं वह क्षणमात्रमें विलीन हो जाते हैं. कहां तो यह मनोरथ कि इस वर्ष अष्टसहस्रीमें परीक्षा देकर अपनी मनोवृत्तिको पूर्ण करेंगे एवं देहातमें जाकर पद्मपुराणके स्वाध्याय द्वारा ग्रामीण जनताको प्रसन्न करनेकी चेष्टा करेंगे और कहां यह बाबाजीका

मर्मघाती उपदेश. कहां तो बाबाजी से यह घनिष्ट सम्बन्ध कि बाबाजी मेरे बिना भोजन न करते थे और कहां यह आज्ञा कि निकल जाओ...पाप कटा. यह उनका दोष नहीं, जब अभाग्य-का उदय आता है तब सबके यही होता है. अब इस रोनेसे क्या लाभ ? आप लोगोंसे हमारा घनिष्ट सम्बन्ध रहा, आप लोगोंके सहवाससे अनेक प्रकारके लाभ उठाये अर्थात् ज्ञानार्जन, सिंहपुरी-चन्द्रपुरीकी यात्रा, पठन पाठनका सौकर्य और सबसे बड़ा लाभ यह हुआ कि आज स्याद्वाद पाठशाला विद्यालयके रूपमें परिणत हो गई, जिन ग्रन्थोंके नाम सुनते थे वे आज पठन पाठनमें आगये. जहां काशी में जैनियोंके नामसे पण्डित-गण नास्तिक शब्दका प्रयोग कर बैठते थे आज उन्हीं लोगों द्वारा यह कहते सुना जाता है कि जैनियोंमें प्रत्येक विषयका उच्चकोटिका साहित्य विद्यमान है. हम लोग इनकी व्यर्थ ही नास्तिकोंमें गणना करते थे.

यह सब आप छात्र तथा बाबाजी का उपकार है जिसे समाजको हृदयसे मानना चाहिये. मैने इस योग्य अपराध नहीं किया है कि निकाला जाऊं. प्रथम तो मैंने आज्ञा ले ली थी. हां, इतनी गलती अवश्य हुई कि सामायिकके पहले नहीं ली थी.

बाबाजी महाराजसे कहा कि 'आज इस रामलीला को देख-कर मेरे मनमें यह भावना हो गई कि पापके फलसे कितना ही वैभवशाली क्यों न हो अन्तमें पराजित हो ही जाता है. जितने दर्शक थे सबने रामचन्द्रजीकी प्रशंसा और रावण तथा उसके अनुयायीवर्गकी निन्दा की. वह बात प्रत्येक दर्शक के हृदयमें समा गई कि परस्त्री विषयक इच्छा सर्वनाशका कारण होती है कहा भी है—

'जाही पाप रावणके न छौना रहो भौना मांहि,
ताही पाप लोकन खिलौना कर राख्यो है.'

मेरे कोमल हृदयमें तो यह अच्छी तरह समा गया कि पाप करना सर्वथा हेय है. रामचन्द्रजीके सदृश व्यवहार करना रावणके सदृश असत्कार्यमें नहीं पड़ना. जो श्री रामचन्द्रजी महाराजका अनुकरण करेगा वही संसारमें विजयी होगा और जो रावणके सदृश व्यवहार करेगा वह अधःपतनका भागी होगा. अस्तु किसीका दोष नहीं, हमारा तीव्र पापका उदय आ गया जिससे बाबाजी जैसे निर्मल और सरल परिणामी भी न्यायमार्ग की अवहेलना कर गये.

बाबाजी महाराज बोले—'रात्रि अधिक हो गई, सब छात्रोंको निद्रा आती है.

मैं बोला—'महाराज ! इन छात्रोंको तो आज ही निद्रा जाने का कष्ट है परन्तु मेरी तो सर्वदाके लिये निद्रा भङ्ग हो गई. तथा आपने कहा कि रात्रि बहुत हो गई सो ठीक है परन्तु रात्रिके बाद दिन तो आवेगा, मुझे तो सदाके लिए रात्रि हो गई.' महाराज !—

'अपराधिनि चेत्क्रोधः क्रोधे क्रोधः कथं न हि,
धर्मार्थकाममोक्षाणां चतुर्णां परिपन्थिनि.'

'यदि आप अपराधी पर ही क्रोध करते हो तो सबसे बड़ा अपराधी क्रोध है क्योंकि वह धर्म ,अर्थ, काम और मोक्ष का शत्रु है उसी पर क्रोध करना चहिये.' मैं सानन्द यहांसे जाता हूँ. न आपके ऊपर मेरा कोई बैरभाव है और न छात्रों के ही ऊपर.

अन्तमें महाराजजीको प्रणाम और छात्रोंको सस्नेह जय-जिनेन्द्र कर जब चलने लगा तब नेत्रोंसे अश्रु पात होने लगा.

न जाने बाबाजी को कहाँसे दयाने आ दबाया आप सहसा बोल उठे—

'तुम्हारा अपराध क्षमा किया जाता है, तथा इस आनन्दमें कल विशेष भोजन कराया जावेगा.

सुपरिन्टेन्डेन्ट साहब से कहने लगे कि एक पत्र फिर मन्त्री जी को लिख दो कि आज मैंने गणेशप्रसाद को पाठशाला से पृथक् करनेकी आज्ञा दी थी परन्तु जब यह जाने लगा और सब छात्रोंसे व्याख्यान देने लगा तब मेरा चित्त द्रवीभूत हो गया अतः मैंने इसका अपराध क्षमा कर दिया.

एक प्रायश्चित—

अनन्तर मैंने निवेदन किया—महाराज ! महाराज ! आप ने जो पत्र चपरासीके हाथ पोस्ट आफिसमें डालनेके लिये दिया था उसे मैंने किसी प्रकार उससे ले लिया था. इस अपराधका दण्ड चाहता हूँ.

बाबाजी बोले कि—'आपत्ति कालमें मनुष्य क्या क्या नहीं करता, इसका आज प्रत्यक्ष हो गया. मैं तुम्हें परम मित्र समझता हूँ क्योंकि तुम्हारे ही निमित्त से आज मैंने आत्मीय पद को समझा है. इस अपराध का दण्ड स्वयं ले लो.'

मैं बोला—'महाराज ! कल जो सामूहिक भोजन होगा मैं उसमें छात्रोंकी पंक्तिसे बाह्य स्थान पर बैठ कर भोजन करूंगा और भोजनोपरान्त छात्रगणके भोजन का स्थान पवित्र करूंगा पश्चात् स्नान कर श्री पार्श्वप्रभुका वन्दन करूंगा तथा एक मास पर्यन्त मधुर भोजन न करूंगा.'

बाबाजी बहुत प्रसन्न हुए और छात्र गण भी हर्षित हो धन्यवाद देने लगे. अनन्तर हम सब लोग सो गये. प्रातःकाल

विशेष भोजन हुआ सब लोग आनन्दसे पंक्ति भोजन में एकत्रित हुए, मैंने जैसा प्रायश्चित लिया था उसीके अनुकूल कार्य किया.

इसके बाद मैं आनन्दसे अध्ययन करने लगा और महाराज दूसरे ही दिन इस्तीफा देकर चले गये.

एक पथ भ्रान्त पथिक—

कुछ दिनके बाद सहारनपुरसे स्वर्गीय लाला रूपचन्द्रजी रईसके सुपुत्र श्रीप्रकाशजी बनारस विद्यालयमें अध्ययनके लिए आये. जहां मैं रहता था उसीके सामनेकी कोठरीमें रहने लगे. आप रईसके पुत्र थे, तथा पढ़ने में कुशाग्रबुद्धि थे. आपकी भोजनादि क्रिया रईसोंके समान थी.

आपको विद्यालयका भोजन रुचिकर नहीं हुआ अतः आपकी पृथक् रसोई बनने लगी. एक दिन आप बोले—'चलो नाटक देख आवें.' हम छात्र लोगोंने कहा—'प्रथम तो हम लोगोंके पास पैसा नहीं, दूसरे सुपरिन्टेन्डेट साहबसे छुट्टी नहीं लाये हम लोग तो साथ नहीं चले गये पर आप नाटक देखकर रात्रिमें दो बजे भदैनीघाट पहुँचे.

लाला प्रकाशचन्द्रजी केवल साहित्यग्रन्थ पढ़ते थे. जिस दिनसे आप नाटक देखकर आये, न जाने क्यों उस दिनसे आपकी प्रवृत्ति एकदम विरुद्ध हो गई. एक दिन बड़े आग्रह के साथ हमसे बोले—'नाटक देखने चलो. मैंने कहा—'मैं नहीं जाता, आप तो ३) की कुर्सी पर आसीन होंगे और हम ।।) के टिकटमें गंवार मनुष्योंके बीच बैठकर सिगरेट तथा बीड़ीकी गन्ध सूंघेंगे...यह हमसे न होगा. आप बोले 'अच्छा ३) की टिकट पर देखना.' मैंने कहा—'एक दिन देखनेसे क्या होगा?' आपने झट १०००) का नोट मेरे हाथमें देते हुए कहा—'लो बारह मासका जिम्मा मैं लेता हूँ.'

मैं डर गया, मैंने उनका नोट उन्हें देते हुए कहा कि जब रात्रिभर नाटक देखेंगे तब पाठ्य पुस्तक कब देखेंगे. आपको भी उचित है कि यदि बनारस आये हो तो विद्यार्जन द्वारा पण्डित बनकर जाओ जिसमें आपके पिताको आनन्द हो और आपके द्वारा जैनधर्मका प्रचार भी हो.

मैंने सब कुछ कहा परन्तु सुनता कौन था ? जब आदमी मदान्ध हो जाता है तब हितकी बात कहनेवालेको भी शत्रु समझने लगता है. निरन्तर प्रतिरात्रि नाटक देखनेके लिये जाना और रात्रिके दो बजे वापिस आना यह उनका मुख्य कार्य जारी रहा. कभी-कभी तो प्रातःकाल आते थे, अतः अन्य पापकी भी शङ्का होने लगी और वह भी सत्य ही निकली. उनके पिता व भाई साहब आदि सबको उनका कृत्य विदित हो गया.

जब एक बार मैं सहारनपुर लाला जम्बूप्रसाद जीके यहां गया था तब अचानक आपसे भेंट हो गई, आप मुझे अपने भवनमें ले गये और नाना प्रकारके उपालम्भ देने लगे. 'तुम्हें उचित था कि हमें सुमार्ग पर लानेका प्रयत्न करते परन्तु तुमने हमारी उपेक्षा की. आज हमारी यह दशा हो गई कि हमारा १०००) मासिक व्यय है फिर भी त्रुटि रहती है, ये व्यसन ऐसे हैं कि इनमें अरबोंकी सम्पत्ति बिला जाती है.'

मैंने कहा—'मैंने तो काशीमें आपको बहुत ही समझाया था परन्तु आपने एक न मानी और मुझे ही डांटा कि तुम लोग दरिद्र हो, तुम्हें इन नाटकादि रसोंका क्या स्वाद ? मैं चुप रह गया, भवितव्य दुर्निवार है. कहनेका तात्पर्य यह है कि जो मनुष्य बालकपनसे अपनी प्रवृत्तिको सुमार्ग पर नहीं लाते उनकी यही गति होती है जो कि हमारे अभिन्न मित्रकी हुई. मां बाप सहस्रों-लाखों रुपया बालक बालिकाओं के विवाह आदि कार्योंमें

पानीकी तरह बहा देते हैं परन्तु जिसमें उनका जीवन सुखमय बीते ऐसी शिक्षामें पैसा व्यय करनेके लिये कृपण ही रहते हैं यही कारण है कि भारतके बालक प्रायः बालकपनसे ही कुसंगतिमें पड़कर अपना सर्वस्व नष्ट कर लेते हैं.

अन्तमें लाला प्रकाशचन्द्रजीका जीवन राग रङ्गमें गया, आपके कोई पुत्र नहीं हुआ. इस प्रकार संसारकी दशा देखकर उत्तम पुरुषोंको उचित है कि अपने बालकोंको सुमार्ग पर लानेके लिये स्कूली शिक्षाके पहले धार्मिक शिक्षा दें और उनकी कुत्सित प्रवृत्ति पर प्रारम्भसे ही नियन्त्रण रखें.

गुरु दक्षिणा—

मैं श्री शास्त्रीजीसे न्यायशास्त्रका अध्ययन करने लगा. अष्ट सहस्री ग्रन्थके ऊपर मेरी महती रुचि थी. श्रीशास्त्रीजीके अनुग्रह से मेरा यह ग्रन्थ एक वर्षमें पूर्ण हो गया. जिस दिन मेरा यह महान् ग्रन्थ पूर्ण हुआ उसी दिन मैंने श्रीशास्त्रीजीके चरण कमलों में ५००) की एक हीराकी अंगूठी भेंट कर दी. मैंने नम्र शब्दोंमें कहा कि महाराज ! आज मुझे इतना हर्ष है कि मेरे पास राज्य होता तो मैं उसे आपके चरणों में समर्पित करके भी तृप्त नहीं होता.

१०

हिंदू विश्वविद्यालय में जैन पाठ्यक्रम

इन्हीं दिनों भारतके नर-रत्न श्रीमालवीयजी द्वारा हिन्दू विश्वविद्यालयकी स्थापना हुई, उसमें सर्व दर्शनोंके शास्त्रोंके पठन पाठनके लिये बड़े-बड़े दिग्गज विद्वान रक्खे गये. शास्त्रीजी महाराज संस्कृत विभागके प्रिन्सपाल हुए. उन्होंने श्रीमालवीयजीसे

कहा कि जब इस यूनिवरसिटीमें सब मतोंके शास्त्रोंके अध्ययनका प्रबन्ध है तब एक चेयर जैनागमके प्रचारके लिये भी होना चाहिये. श्रीमालवीयजीने कहा—'अच्छा सीनेटमें यह प्रस्ताव रखिये जो निर्णय होगा वह किया जावेगा. सीनेटकी जिस दिन बैठक थी उस दिन शास्त्रीजीने कहा—'पुस्तकें लेकर तुम भी देखने चलो.'

मैं पुस्तकें लेकर शास्त्रीजी महाराजके पीछे-पीछे चलने लगा. बीचमें एक महाशयने, जो बहुत ही बृहत्काय एवं सुन्दर शरीर थे तथा सीनेटके भवनकी ओर जा रहे थे, मुझसे पूछा 'कहां जा रहे हो ?' मैंने कहा—'महानुभाव ! मैं श्री शास्त्रीजीकी आज्ञासे जैनन्यायकी पुस्तकें लेकर कमेटीमें जा रहा हूँ, आज वहां इस विषयपर ऊहापोह होगा.' आप बोले—'यद्यपि जैनधर्मके अनुकूल प्रायः बहुत मेम्बर नहीं हैं फिर भी मैं कोशिश करूंगा कि जैनागमको पठन-पाठनमें आना चाहिये क्योंकि यह मत अनादि है तथा इस मतके अनुयायी बहुत ही सच्चरित्र होते हैं. इस मतके माननेवालों की संख्या चूंकि अल्प रह गई है इसीलिये यह सर्वकल्याणप्रद होता हुआ भी प्रसारमें नहीं आ रहा है'...इत्यादि कहनेके बाद मुझसे कहा—'चलो.'

मैं भवनके अन्दर पहुँच गया. जो महाशय मुझे मार्गमें मिले थे वे भी पहुँच गये. पहुँचते ही उन्होंने सभापति महोदयसे कहा कि 'आज की सभामें अनेक विषयों पर विचार होना है, एक विषय जैनशास्त्रोंका भी है 'सूची-कटाहन्यायेन' सर्व प्रथम इसी विषय पर विचार हो जाना अच्छा है क्योंकि यह विषय शीघ्र ही हो जावेगा और यह छात्र जो कि पुस्तकें लेकर आया है चला जावेगा. चूंकि यह जैन छात्र है अतः रात्रिको नहीं खाता दिनको ही चले आनेमें इसका भोजन नहीं चूकेगा.' पश्चात्

श्रीअम्बादासजी शास्त्रीसे आपने कहा 'अच्छा शास्त्रीजी! आप बतलाइये कि प्रवेशिकामें पहले कौनसी पुस्तक रक्खी जावे?' शास्त्रीजीने न्यायदीपिका पुस्तक लेकर आपको दी.

पांच मिनटकी बहसके बाद प्रथम परीक्षामें वह पुस्तक रक्खी गई. इसके बाद १५ मिनट और बहस हुई होगी कि इतनेमें ही शास्त्री परीक्षा तकका कोर्स निश्चित हो गया. पाठकोंको यह उत्कण्ठा होगी कि वे महाशय कौन थे? जिन्होंने कि जैन ग्रन्थों-के विषयमें इतनी दिलचस्पी ली. वे महाशय थे श्रीमान स्वर्गीय मोतीलालजी नेहरू जिनके सुपुत्र जगत्प्रख्यात श्रीजवाहरलालजी नेहरू आज भारतके सरताज हैं.

११

सहस्रनामका अद्भुत प्रभाव

संवत् १९७७ की बात है. मैं श्री शास्त्रीजी महोदयसे न्याय-शास्त्रका अध्ययन विश्वविद्यालयमें करने लगा और वहांकी शास्त्रीय परीक्षाका छात्र हो गया. दो वर्षके अध्ययनके बाद शास्त्री परीक्षाका फार्म भर दिया.

उन्हीं दिनों हमारे प्रान्तके ललितपुर नगरमें गजरथ महोत्सव था, अतः फार्म भरनेके बाद वहां चला गया. बादमें दो स्थानोंमें और भी गजरथ थे इस तरह दो माससे अधिक समय लग गया. यही दिन अभ्यासके थे, शास्त्रीजी महाराज बहुत ही नाराज हुए. बीस दिन परीक्षाके रह गये थे, कई ग्रन्थ तो ज्योंके त्यों सन्दूकमें रखे रहे जैसे सन्मतितर्क आदि. फिर भी परीक्षाका साहस

किया. मेरा यह काम रह गया कि प्रातःकाल गङ्गास्नान करना, वहांसे आकर श्री पार्श्वप्रभुके दर्शन करना, इसके बाद महामन्त्र-की एक माला जपना इसके अनन्तर सहस्रनामका पाठ करना फिर पुस्तकोंका अवलोकन करना. सायंकालको महामन्त्रकी माला करनेके बाद सहस्रनामका पाठ करना इस तरह पन्द्रह दिन पूर्ण किये.

सम्वत् १६८० की बात है कि जिस दिन परीक्षा-थी उस दिन श्री मन्दिरजी गये और श्री पार्श्वप्रभुके दर्शन कर सहस्रनामका पाठ किया पश्चात् पुस्तक लेकर परीक्षा देनेके लिये विश्वविद्यालय चले गये. मार्गमें पुस्तकके ५-६ स्थल देख लिये. आठ बजे परीक्षा प्रारम्भ हो गई, परचा हाथमें आया, श्रीमहामन्त्रके प्रसाद से पुस्तकके जो स्थल मार्गमें देखे थे वे ही प्रश्न पत्रमें आ गये. फिर क्या था? आनन्दकी सीमा न रही. इसी प्रकार आठ दिनके परचे आनन्दसे किये और परीक्षाफलकी बाट जोहने लगा. सात सप्ताह बाद परीक्षाफल निकला, मैंने बड़ी उत्सुकताके साथ शास्त्रीजीके पास जाकर पूछा—'महाराज! क्या मैं पास हो गया?' महाराजजीने बड़ी प्रसन्नतासे उत्तर दिया—

'अरे बेटा! तेरा भाग्य जबर्दस्त निकला. तू फर्स्ट डिवीजन-में उत्तीर्ण हुआ, अरे इतना ही नहीं, फर्स्ट पास हुआ, तेरे ८०० नम्बरोंमें से ६४० नम्बर आये, अब तू शास्त्राचार्य परीक्षा पास कर, तुझे २५) मासिक छात्रवृत्ति मिलेगी. मैं बहुत ही प्रसन्न हूँ कि मेरे द्वारा एक वैश्य छात्रको यह सम्मान मिला. अब बेटा? एक बात मेरी मानना, शास्त्राचार्य परीक्षाका अभ्यास करना क्वीन्स कालेज बनारसकी न्याय मध्यमा तो मैं पहले ही संवत् १६६४ में उत्तीर्ण हो चुका था अतः आचार्य प्रथम खण्डके पढ़नेकी कोशिश करने लगा.

१२
बाईजीको सिरशूल

मुझे कोई व्यग्रता न हो, आनन्दसे पठन पाठन हो, इस अभिप्रायसे बाईजी भी बनारसके भेलूपुरमें रहा करती थीं. बाईजी के मस्तकमें शूलवेदना हो गई और इसी वेदनासे उनकी आंखमें मोतियाबिन्द भी हो गया इन कारणोंसे चित्तमें निरन्तर व्यग्रता रहने लगी. बाईजी बोलीं—'भैया ! व्यग्र मत हो, कर्म का विपाक है, जो किया है उसे भोगना ही पड़ेगा.

एक दिन बोलीं—'बेटा हमको शूलकी वेदना बहुत है अतः यहांसे देश चलो, वहां पर इसका प्रतिकार अनायास हो जायगा.' हम श्री बाईजीको लेकर बरुआसागर आगये. दवाईके प्रयोग से सिरोवेदना तो चली गई परन्तु आंखका मोतियाबिन्द नहीं गया. अन्तमें सबकी यही सम्मति हुई कि झांसी जाकर डाक्टर को आंख दिखा लाना चाहिये.

एक स्वदेशी बंगालीडाक्टर—

हम बाईजी को लेकर झांसी गये और बड़ी अस्पतालमें पहुँचे. वहांपर एक बंगाली डाक्टर आंखके इलाजमें बहुत ही निपुण था उसे बाईजी की आंख दिखलाई, उसने १० मिनटमें परीक्षा कर कहा कि मोतियाबिन्द है निकल सकता है, चिन्ता करनेकी कोई बात नहीं, १५ दिनमें आराम हो जावेगा, हमारी ५०) फीस लगेगी, पूँछा—कबसे आ जावें ?' उसने कहा—'कलसे आ जाओ. डाक्टर साहब बोले—'हमारा भारतवर्ष बहुत चालाक हो गया है.' बाईजीके चिन्हसे यह प्रतीत होता है कि इनके पास अच्छी सम्पत्ति होनी चाहिये परन्तु वे इस प्रकारका वस्त्र पहिन कर आई कि जिससे दूसरेको यह निश्चय हो

सके कि इनके पास कुछ नहीं, ऐसा असद्व्यवहार अच्छा नहीं.' बाईजी बोलीं—'भैया डाक्टर ! अब हम आपसे ऑपरेशन नहीं कराना चाहते, अन्धा रहना अच्छा परन्तु लोभी आदमीसे ऑपरेशन कराना अच्छा नहीं.'

डाक्टर साहबने बहुत कुछ कहा परन्तु बाईजीने ऑपरेशन कराना स्वीकार नहीं किया. वहांसे क्षेत्रपाल-ललितपुर को प्रस्थान कर गईं.

क्षेत्रपाल पहुँचकर बाईजी आनन्दसे रहने लगीं, उन्होंने कभी किसीसे यह नहीं कहा कि हमें बड़ा कष्ट है और न दैनिकचर्या में कभी शिथिलता की. मुझसे बोलीं—'बेटा ! अभी हमारा असाताका उदय है, अतः मोतियाबिन्दकी औषधि व ऑपरेशन न होगा, तुम मेरे पीछे अपना पढ़ना न छोड़ो और शीघ्र ही बनारस चले जाओ.

मैं बाईजीके विशेष आग्रहसे बनारस चला गया और श्री शास्त्रीजीसे पूर्ववत् अध्ययन करने लगा परन्तु चित्त बाईजीकी बीमारीमें था अतः अभ्यासकी शिथिलता रहती थी फल यह हुआ कि मैं परीक्षामें अनुत्तीर्ण हो गया. परीक्षा देनेके बाद शीघ्र ही मैं ललितपुर लौट आया.

एक विदेशी अंग्रेज डाक्टर—

एक दिन बाईजी बगीचेमें सामायिक पाठ पढ़नेके अनन्तर—

'राजा राणा छत्रपति हाथिन के असवार,
मरना सबको एक दिन अपनी-अपनी बार.

आदि बारह भावना पढ़ रहीं थीं अचानक एक अंग्रेज जो उसी बागमें टहल रहा था उनके पास आया और कहा—'हम झांसी की बड़ी अस्पतालके सिविलसर्जन हैं, आंखके डाक्टर हैं और

लन्दनके निवासी अंग्रेज हैं.' तुम्हारे नेत्रोंमें मोतियाबिन्द हो गया है एक आंखका निकालना तो अब व्यर्थ है क्योंकि उसके देखनेकी शक्ति नष्ट हो चुकी है पर दूसरी आंखमें देखनेकी शक्ति है उसका मोतियाविन्द दूर होनेसे तुम्हें दीखने लगेगा.' अब बाईजीने उसे अपनी आत्मकथा सुनाई, सुनकर डाक्टर साहब बहुत प्रसन्न हुए, बोले—'अच्छा हम अपना दौरा कैंसिल करते हैं, सात बजे डांकगाड़ीसे झांसी जाते हैं, तुम पेंसिजर गाड़ीसे झांसी अस्पतालमें कल नौ बजे आओ वहीं तुम्हारा इलाज होगा.'

बाईजीने कहा—'मैं अस्पतालमें न रहूँगी, शहरकी परवार धर्मशालामें रहूँगी और नौ बजे श्रीभगवान्का दर्शन पूजन कर आऊंगी. यदि आपकी मेरे ऊपर दया है तो मेरे प्रश्नका उत्तर दीजिये.' डाक्टर महोदय न जाने बाईजीसे कितने प्रसन्न थे. बोले—'तुम जहां ठहरोगी मैं वहीं आ जाऊंगा परन्तु आज ही झांसी जाओ, मैं जाता हूँ.'

डाक्टर साहब चले गये. हम, बाईजी और बिनिया रात्रि के ११ बजे की गाड़ीसे झाँसी पहुँच गये प्रातःकाल शौचादिसे निवृत्त होकर धर्मशालामें आ गये, इतने में ही डाक्टर साहब मय सामानके आ पहुँचे. आते ही साथ उन्होंने बाईजीको बैठाया और आँखमें एक औजार लगाया जिससे वह खुली रहे. जब डाक्टर साहबने आँख खुली रखनेका यन्त्र लगाया तब बाईजी ने कुछ सिर हिला दिया. डाक्टर साहबने एक हलकी सी थप्पड़ बाईजीके सिरमें दे दी, न जाने बाईजी किस विचारमें निमग्न हो गई. इतनेमें ही डाक्टर साहबने अस्त्रसे मोतियाबिन्द निकाल कर बाहर कर दिया आँखमें दवाई आदि लगाई पश्चात् सीधा पड़े रहनेकी आज्ञा दी. इसके बाद डाक्टर साहब १६ दिन और आये. प्रति दिन दो बार आते थे अर्थात् ३२ बार डाक्टर साहबका शुभागमन हुआ साथमें एक कम्पाउन्डर तथा

डाक्टर साहबका एक बालक भी आता था. बालककी उमर १० वर्षके लगभग होगी—बहुत ही सुन्दर था वह. प्रतिदिन डाक्टर साहबके साथ आता और पूड़ी तथा पापड़ खाता. बाइजीके साथ उसकी अत्यन्त प्रीति हो गई—आते ही साथ कहने लगता—'पूड़ी पापड़ मंगाओ.' अस्तु,

सोलहवें दिन डाक्टर साहबने बाईजीसे कहा कि आपकी आँख अच्छी हो गई कल हम चश्मा और एक शीशी में दवा देंगे. अब आप जहां जाना चाहें सानन्द जा सकती हैं. यह कहकर डाक्टर साहब चले गये. जो लोग बाईजीको देखनेके लिये आते थे वे बोले 'बाईजी! डाक्टर साहबकी एक बारकी फीस १६) है अतः ३२ बारके ५१२) होंगे. उन्होंने ५१२) रुपये व ४०) का मेवा फल आदि मंगाया और डाक्टर साहबके आने के पहले ही सबको थालियोंमें सजाकर रख दिया. दूसरे दिन प्रातः काल डाक्टर साहबने आकर आंखमें दवा डाली और चश्मा देते हुए कहा—'अब तुम आज ही चली जा सकती हो' जब बाईजीने नकद रुपयों और मेवा आदिसे सजी हुई थालियों की ओर संकेत किया तब उन्होंने विस्मय के साथ पूछा—'यह सब किसलिये?'

बाईजीने नम्रताके साथ कहा—'मैं आपके सदृश महापुरुष का क्या आदर कर सकती हूँ? पर यह तुच्छ भेंट आपको समर्पित करती हूँ आपने मुझे आंख दी जिससे मेरे सम्पूर्ण कार्य निर्विघ्न समाप्त हो सकेंगे. आपके निमित्तसे मैं पुनः धर्मध्यानके योग्य बन सकी. इसके लिये आपको जितना धन्यवाद दिया जावे उतना ही अल्प है. आप जैसे दयालु जीव बिरले ही होते हैं, मैं आपको यही आशीर्वाद देती हूँ कि आप के परिणाम इसी प्रकार निर्मल और दयालु रहें जिससे संसार का उपकार हो.

इतना कहकर बाईजीकी आंखोंमें हर्षके अश्रु छलक पड़े और कण्ठ अवरुद्ध हो गया. डाक्टर साहब बाईजी की कथा श्रवण कर बोले 'बाईजी ! किसीके कहनेसे तुम्हें भय हो गया है पर भयकी बात नहीं, हम तुम्हारे धार्मिक नियमोंसे बहुत खुश हैं, और यह जो मेवा फलादि रखे हैं इनमेंसे तुम्हारे आशीर्वाद रूप कुछ फल लिये लेते हैं शेष आपकी जो इच्छा हो सो करना तथा ११ रुपया कम्पाउन्डरको दिये देते हैं, अब आप किसीको कुछ नहीं देना.

बाईजीने कहा—मैं आपके व्यवहारसे बहुत ही प्रसन्न हूँ आप मेरे पिता हैं, अतः एक बात मेरी भी स्वीकार करेंगे.' डाक्टर साहबने कहा—'कहो, हम उसे अवश्य पालन करेंगे.' बाईजी बोलीं—'मैं और कुछ नहीं चाहती केवल यह भिक्षा मांगती हूँ कि रविवार आपके यहां परमात्माकी उपासनाका दिन माना गया है अतः उस दिन आप न तो किसी जीवको मारें, न खाने के वास्ते खानसामासे मरवावें और न खानेवालेकी अनुमोदना करें.'

डाक्टर साहबने बड़ी प्रसन्नतासे कहा हमें तुम्हारी बात मान्य है. न हम खावेंगे, न मेम साहबको खाने देवेंगे और यह बालक तो पहलेसे ही तुम्हारा हो रहा है, इसे भी हम इस नियम का पालन करावेंगे. आप निश्चिन्त रहिये मैं आपको अपनी माताके सामान मानता हूँ. इतना कहकर डाक्टर साहब चले गये. हम लोग आधा घंटा तक डाक्टर साहबके गुण गान करते रहे. पुण्यके सद्भावमें, जिनकी सम्भावना नहीं, वे कार्य भी आनायास हो जाते हैं, अतः जिन जीवोंको सुखकी कामना है उन्हें पुण्य कार्योंमें सदा उपयोग लगाना चाहिये.

१३

बुंदेलखण्डके दो महान् विद्वान्

बाईजीके स्वस्थ होनेके अनन्तर हम सब लोग बरुवासागर चले गये और आनन्दसे अपना समय व्यतीत करने लगे. बाईजीने कहा—'बेटा ! तुम्हारा पढ़ना छूट गया इसका रंज है अतः फिर बनारस चलो और अध्ययन प्रारम्भ कर दो. बाईजी की आज्ञा स्वीकार कर मैं बनारस चला गया और श्रीमान् शास्त्रीजीसे न्यायशास्त्रका अध्ययनकर तीन खण्ड न्यायाचार्यके पास होगया परन्तु सुपरिन्टेन्डेन्टसे मनोमालिन्य होनेके कारण मैं बनारस छोड़कर फिरसे टीकमगढ़ आगया और श्रीमान् दुलार झा जी से पढ़ने लगा.

इसी समय उनके सुपुत्र श्रीशान्तिलाल झा जो कि न्यायशास्त्र के प्रखर विद्वान थे अपने पिताके दर्शनार्थ आये उनसे हमारा अधिक स्नेह हो गया. मैं शान्तिलालजीको लेकर बरुआसागर चला आया. श्री सर्राफ मूलचन्द्रजी उन्हें ३० रुपया मासिक देने लगे मैं उनसे पढ़ने लगा. मैं जब यहांके मन्दिरमें जाता था तब श्री देवकीनन्दनजी भी दर्शनके लिये पहुँचते थे. इनके पिता बहुत बुद्धिमान और जातिके पञ्च थे. बहुत ही सुयोग्य व्यक्ति थे उनका कहना था कि यह बालक बुद्धिमान् तो है परन्तु दिन भर उपद्रव करता है अतः इसे आप बनारस ले जाइये. मैंने देवकीनन्दनसे कहा—'क्यों भाई ! बनारस चलोगे ?' बालकने कहा—'हां, चलेंगे.'

मैं जब उसे बनारस ले जानेके लिये राजी हो गया तब सर्राफजीने यह कहते हुए बहुत निषेध किया कि क्यों उपद्रवकी जड़ लिये जाते हो ? परन्तु मैंने उनकी एक न सुनी. उन्होंने

बाईजीसे भी कहा कि ये व्यर्थ ही उपद्रवकी जड़ साथ लिये जाते हैं पर बाईजीने भी कह दिया कि भैया ! तुम जिसे उपद्रवी कहते हो उसके लिये 'पण्डितजी' और 'महाराज' कहते-कहते तुम्हारा गला न सूखे तो हमारा नाम न लेना.

अन्तमें मैं उसे बनारस ले गया और विद्यालयमें प्रविष्ट करा दिया. बालक होनहार था अतः बहुत ही अल्प कालमें व्युत्पन्न हो गया. इसकी बुद्धिकी प्रखरता देख श्रीमान् स्वर्गीय पण्डित गोपालदासजी आगरावालोंने इसे मोरैनामें धर्मशास्त्रका अध्ययन कराया. कुछ दिन बाद ही यह धर्मशास्त्रमें विशिष्ट विद्वान् हो गया, और उसी विद्यालयमें अध्यापन कार्य करने लगा. श्रीमान् स्वर्गीय पण्डितजी जहांपर व्याख्यान देनेके लिये जाते थे वहां इन्हें भी साथ ले जाते थे. इनकी व्याख्यान कला देख पण्डितजी स्वयं न जाकर कहीं-कहीं इन्हींको भेज देते थे. यह व्याख्यान देनेमें इतने निपुण निकले कि समाजने इन्हें व्याख्यानवाचस्पतिकी उपाधिसे विभूषित किया.

इसी प्रकार समाजके प्रमुख विद्वान् और धर्मशास्त्रके अद्वितीय मर्मज्ञ पं० बंशीधरजी न्यायालंकार हैं जो कि महरौनीके रहनेवाले हैं, तथा वर्तमान में इन्दौर में निवास करते हैं.

१४

चकौती में

संवत् १६८४ की बात है—बनारससे मैं श्री शान्तिलाल नैयायिकके साथ चकौती जिला दरभंगा चला गया और वहीं पर पढ़ने लगा जिस चकौतीमें मैं रहता था वह ब्राह्मणोंकी

बस्ती थी, अन्य लोग कम थे, जो थे वे इन्हींके सेवक थे. इस ग्राममें बड़े-बड़े नैयायिक विद्वान होगये हैं, उस समय भी वहां चार नैयायिक, दो ज्योतिषी, दो वैयाकरण और २६ धर्मशास्त्रके प्रसिद्ध विद्वान थे. इन नैयायिकोंमें सहदेव झा भी एक थे, वह बड़े बुद्धिमान थे, इनके यहां कई छात्र बाहरसे आकर न्याय-शास्त्रका अध्ययन करते थे. मेरा भी चित्त इन्हींके पास अध्ययन करनेका होगया. यद्यपि यह बात श्री शान्तिलालजीको बहुत अनिष्टकारक हुई तो भी मैं उनके पास अध्ययन करने लगा. परन्तु यहांकी एक बात मुझे भी बहुत अनिष्टकर थी वह यह कि यहांके सब मनुष्य मत्स्य-मांस भोजी थे. प्रतिदिन लोग मत्स्य-मांस पकाते थे उसकी दुर्गन्धके मारे मुझसे भोजन नहीं खाया जाता था. मैंने आटा खाना छोड़ दिया केवल चावल और साग खाकर दिन काटता था. कभी-कभी भुने चने खाकर ही दिन निकाल देता था.

एक दिन मोहल्लाके एक वृद्ध ब्राह्मणने कहा—'बेटा! इतने दुर्बल क्यों होते जाते हो? क्या खानेके लिये नहीं मिलता? मैंने कहा—'बाबाजी! आपके प्रसादसे मेरे पास खानपान की सब सामग्री है परन्तु जब मैं खानेको बैठता हूँ तब मछलीकी गन्ध आती है अतः ग्रास भीतर नहीं जाता. मेरी कथा को श्रवण कर बुड्ढे ब्राह्मण महाराज को दया आ गई. उन्होंने मोहल्लाके सब ब्राह्मणों को जमा कर यह प्रतिज्ञा करायी कि जब तक यह अपने ग्राम में छात्र रूप से रहे तब तक आप लोग मत्स्य मांस न बनावें और न देवी को बलि प्रदान करें. यह भद्र प्रकृतिका बालक है इसके ऊपर हमें दया करना चाहिये. इस तरह वहां मेरा निर्वाह होने लगा. आटा आदि की भी व्यवस्था हो गई और आनन्द से अध्ययन चलने लगा.

पापी-पुण्यात्मा—बिहारी मुसहड़—

इस चकौती ग्राममें मेरी पीठमें अदृष्ट फोड़ा हो गया, रात दिन दाह होने लगी, एक मिनटको भी चैन नहीं पड़ती थी. 'हे भगवन्, के सिवाय कुछ नहीं उच्चारण होता था. रात्रि-दिन वेदनामें ही समय जाता था. मोहल्लाभर मेरी वेदनासे दुःखी हो गया. बिहारी मुसहड़ वहांसे जा रहा था उसने कहा— 'आप लोग औषधि नहीं जानते ?' लोगोंने कहा—'हमने तो बीसों दवाइयाँ की पर किसीसे आराम नहीं पहुँचा. वह गया और १५ मिनटमें औषध लेकर आ गया. दवाईके लगाते ही दाहकी वेदना शान्त हो गई और एकदम निद्रा आ गई. १२ घंटेके बाद निद्रा भंग हुई. पीठ पर हाथ रक्खा तो फोड़ा नदारत. चार बजे बिहारी मुसहड़ फिर आया मैंने उसे बहुत ही धन्यवाद दिया और दस रुपये देने लगा परन्तु उसने नहीं लिया. मैंने उससे कहा कि यह औषधि हमें बता दो उसने एकदम निषेध कर दिया और एक लम्बा भाषण दे डाला. उसने कहा कि बताने में कोई हानि नहीं परन्तु मुझे विश्वास नहीं कि आप इसे द्रव्योपार्जनका जरिया न बना लेवेंगे क्योंकि आप लोगोंने अपनी आवश्यकताओंको इतना बढ़ा लिया है कि यद्वा तद्वा धन पैदा करनेसे आप लोग नहीं चूकते. आज भारतवर्षकी जो दशा है वह किसीसे छिपी नहीं है अतः माफ कीजिये मैं आपको दवा नहीं बताऊंगा और न आपसे कुछ चाहता ही हूँ. हमारा काम मजदूरी करनेका है उसमें जो कुछ मिल जाता है उसीसे संतोष कर लेता हूँ. सूखा दाल भात हमारा भोजन है शाम तक परमात्मा दे ही देता है आपसे दस रुपया लेकर मैं लालाजी नहीं बनना चाहता. मैं जातिका मुसहड़ हूँ और मेरे कुलमें निरन्तर हिंसा होती है, परन्तु मैंने पांच वर्षसे हिंसा त्याग दी है. इसका कारण यह हुआ कि मैं एक दिन शिकारके लिये धनुष

बाण लेकर बनमें गया था. पहुँचते ही एक बाण हिरनीको मारा वह गिर पड़ी मैंने आकर उसे जीवित ही पकड़ लिया वह बाणसे मरी नहीं थी घर जाकर मैंने विचार किया कि आज इसे मारकर सब कुटुम्ब पेटभर इसका मांस खावेंगे. हम लोग जब उसे मारने लगे तब उसके पेटसे बिलबिलाता हुआ बच्चा निकल पड़ा और थोड़ी देरके बाद छटपटा कर मर गया. उसकी वेदना देखकर मैं अत्यन्त दुखी हो गया और भगवान से प्रार्थना करने लगा कि हे प्रभो ! मैं अधमसे अधम नर हूँ, मैंने जो पाप किये हैं, हे परमात्मन ! अब उन्हें कौन क्षमा कर सकता है ? जन्मान्तर में भोगना ह। पड़ेंगे परन्तु अब आपके समक्ष प्रतिज्ञा करता हूँ कि आजसे ि सी प्राणीको न सताऊंगा, जो कुछ कर चुका उसका पश्चात्ताप करता हूँ. उस दिनसे न तो मेरे घरमें मांस पकता है और न मेरे बाल-बच्चे ही मांस खाते हैं. मेरे जो खेत हैं उनमें इतना धान पैदा हो जाता है कि उससे मेरा वर्ष भरका खर्च आनन्द से चल जाता है.

मैं नीच जाति हूँ आप लोग मेरा स्पर्श करनेसे डरते हैं, यदि कदाचित् स्पर्श हो भी जावे तब सचेल स्नान करते हैं, परन्तु बताओ तो सही हमारे शरीरमें कौनसी अपवित्रताका बास है और आपके शरीरमें कौनसी पवित्रताका निवास है ? हमारी आत्मा दयासे पुष्ट है, लोभादि पापोंसे सुरक्षित है और यथा-शक्ति परमात्माके स्मरणमें भी उपयुक्त है अब आप लोग ही निर्णय करके शुद्ध हृदयसे कहिये कि कौन तो अधम है और कौन उच्च ? आप लोगोंने ज्ञानका अर्जन कर केवल संसारवर्द्धक विषयों की पुष्टि की है. यदि आप लोग संसारके दुःखोंसे भयभीत होते तो इतने अनर्थपूर्ण कार्योंकी पुष्टि न आप करते और न शास्त्रोंके प्रमाण ही देते—

'पञ्च पञ्चनखा भक्ष्या औषधार्थं सुरां पिबेत्.'

मैं पढ़ा लिखा नहीं परन्तु यह वाक्य आपके ही द्वारा मेरे श्रवणमें आये हैं. कहां तक कहें स्त्रीदान तक आप लोगोंने शास्त्र बिहित मान लिया है इत्यादि कहते-कहते अन्तमें उसने बड़े उच्च स्वरमे यहां तक कह दिया कि यद्यपि मैं आप लोगोंकी दृष्टि में तुच्छ हूँ तो भी हिंसाके उक्त कार्योंको अच्छा नहीं समझता, उसके चले जानेपर मैंने यह विचार किया कि यदि सत्य दृष्टिसे देखा जावे तो उसका कहना अक्षरशः सत्य है. जितने विद्वान् वहां उपस्थित थे सब निरुत्तर हो गये, परस्परमें एक दूसरेके मुख ताकने लगे.

पापिनी—पुण्यात्मा—द्रौपदी

इसी चकौतीमें एक ब्राह्मण था जो बहुत ही प्रतिष्ठित धनाढ्य, विद्वान् और राजमान्य था. उसकी एक पुत्री थी—द्रौपदी. जो अत्यन्त रूपवती थी, दुर्भाग्यवश वह बाल्यावस्थासे ही बिधवा हो गई. अन्तमें उसका चरित्र भ्रष्ट हो गया. कई तो उसने गर्भपात किये परन्तु पिताके स्नेहसे वह अन्यत्र नहीं भेजी गई. रुपयाके बलसे उसके सब पाप छिपा दिये जाते थे परन्तु पाप भी कोई पदार्थ है जो छिपायेसे छिपता ?

उसके नामका एक सरोवर था उसका पानी अपेय हो गया. उसीके नामका एक बाग भी था उसमें जो फल लगते थे उनमें पकने पर कीड़े पड़ने लगे इससे उसके पापकी चर्चा प्रान्त भरमें फैल गई. पापके उदयमें जो न हो सो अल्प है.

कुछ कालके बाद द्रौपदीके चित्तमें अपने कुकृत्यों पर बड़ी घृणा हुई उसने मन्दिरमें जाकर बहुत ही पश्चात्ताप किया और घर आकर अपने पितासे कहा—'पिता जी ! मैंने यद्यपि बहुत ही भयङ्कर पाप किये हैं परन्तु आज मैंने अन्तरङ्गसे इतनी निन्दा गरहा की है कि अब मैं निष्पाप हूँ. अब मैं श्री जगन्नाथजी की

यात्राको जाती हूँ वहाँ से श्री वैद्यनाथ जाऊँगी, वहीं पर वैद्यनाथ जी को जल चढ़ाऊँगी और जिस समय 'ओं शिवाय नमः' कहती हुई जल चढ़ाऊँगी उसी समय महादेवजीके कैलाशलोकको चली जाऊँगी.

द्रौपदीकी यह बात सुनकर उसके पिता बहुत ही प्रसन्न हुए और गद्गद स्वरमें बोले—'बेटी! मैं तुम्हारी कथा सुनकर अत्यन्त प्रमोदको प्राप्त हुआ हूँ. अच्छा, यह बताओ कि यात्रा कब करोगी'

पुत्रीने कहा—वैशाख सुदि पूर्णिमाके दिन यात्राके लिए जाऊँगी. अब क्या था, सम्पूर्ण नगरके लोग उस दिनकी प्रतीक्षा करने लगे. अन्तमें वैशाखकी पूर्णिमा आ गई, प्रातःकाल नौ बजे यात्राका मुहूर्त्त था गाजे बाजेके साथ द्रौपदी घरसे बाहर निकली. ग्राम भरके नर-नारी उसे पहुँचानेके लिए ग्रामके बाहर आध मील तक चले गये.

द्रौपदीने समस्त नर-नारियोंसे सम्बोधन कर प्रार्थना की और कहा कि मैंने गुरुतर पाप किये—पापोंकी याद आते ही मेरी आत्मा सिहर उठती है. परन्तु आजसे बीस दिन पहले मुझे अपनी आत्मामें बहुत ग्लानि हुई और यह विचार मनमें आया कि जो आत्मा पाप करनेमें समर्थ है वह उसे त्याग भी सकता है. मैं एक उच्च कुलमें उत्पन्न हुई, मेरा बाल्यकाल बड़ी ही पवित्रतासे बीता, परन्तु यह सब होते हुए भी मैं पाप पङ्कमें लिप्त हो गई. इस घटनासे मुझे यह निश्चय हुआ कि आत्मा सर्वथा निर्दोष नहीं. आत्मा पापी भी होता है और उसका उदाहरण मैं ही हूँ.

अब मेरी आप नर-नारियोंसे यह प्रार्थना है कि कभी भी पाप न करना. पापसे मेरा यह अभिप्राय है कि स्त्रियोंको

यह नियम करना चाहिये कि अपने पतिको छोड़कर अन्य पुरुषों को पिता, पुत्र और भाईके सदृश समझें और पुरुषवर्गको चाहिये कि वह स्वस्त्रीको छोड़कर अन्य स्त्रियोंको माता, भगिनी और पुत्रीके सदृश समझे. अन्यथा जो मेरी दुर्गति और निन्दा हुई वही उनकी होगी.

इसके सिवाय एक बात और कहना चाहती हूँ वह यह कि भगवान् दीनदयालु हैं उनकी दया प्राणीमात्रके ऊपर होनी चाहिये. पशु भी एक प्राणी है उन्होंने ऐसा कौनसा अपराध किया कि उन निरपराधोंका दुर्गादेवीके सामने बलि चढ़ाया जाता है. जिनके मांसका भोजन है उनके दयाका लेश नहीं. उनसे प्राणीगण सदा भयभीत रहते हैं मांसके खानेसे क्रूर परिणाम होते हैं अतः उसे त्याग देना ही उचित है. देखो, आपके सामने जो गणेशप्रसाद खड़े हैं यह जैनी हैं, इनका भोजन अन्न है, अपना ग्राम इतना बड़ा है यहाँ पर एक हजार ब्राह्मणों का ही नहीं पण्डितों का निवास है जो देखो वही इनकी प्रशंसा करताहै, सब लोग यही कहते हैं कि यह बड़ा सौम्य छात्र है, इसका मूल कारण इनकी दयालुता है.

द्रौपदी का व्याख्यान पूर्ण नहीं हुआ था कि बीचमें ही बहुत से नर-नारी हँस पड़े और यह शब्द सुननेमें आने लगा कि 'नौसौ मूषे विनाश कर बिल्ली हज्जको चली.'

यह वाक्य सुनते ही द्रौपदीने कहा कि ठीक है परन्तु अब मैं पापिनी नहीं यदि तुम लोगोंको विश्वास न हो तो हमारे बागमें जो फल पक्व हों उन्हें चुन कर लाओ सब ही अमृतोपम स्वादिष्ट होंगे तथा मेरी पुष्करिणीका जल गङ्गाजलके सदृश होगा.

कई मनुष्य एकदम बाग और पुष्करिणी की ओर दौड़ पड़े जो बाग गये थे वे वहाँसे बिल्वफल, लीची और आम लाये तथा

जो पुष्करिणी गये थे वे चार घड़े जल लाये. सब समुदायने फलभक्षण किये. सभीके मुखसे ये शब्द निकल पड़े कि ऐसे स्वादिष्ट फल तो हमने जन्मसे लेकर आज तक नहीं खाये पश्चात् पुष्करिणीका जल पिया गया और सर्वत्र यह ध्वनि होने लगी कि यह तो गङ्गाजलकी अपेक्षा भी मधुर है.

अनन्तर जनसमुदायने उसे मस्तक नवाकर प्रणाम किया और अपने अपराधकी क्षमा मांगी. द्रौपदीने आशीर्वाद देते हुए कहा कि यह सब हमारे परिणामोंकी स्वच्छताका फल है. इसके बाद द्रौपदी बाईने जगन्नाथ स्वामीकी यात्राके लिये प्रस्थान किया. प्रथम तो द्रौपदी बाई कलकत्ता पहुँची और काली के दर्शन करनेके लिए काली मन्दिर गई परन्तु वहांका रक्तपात देख दर्शनोंके बिना ही वापिस लौट आई. पश्चात् श्री जगन्नाथ-पुरीकी यात्राके लिये गई और उसके अनन्तर वैद्यनाथजी आ गई. जिस समय स्वच्छ वस्त्र पहिन कर तथा हाथमें जलपात्र लेकर उसने 'ओं शिवाय नमः' कह महादेवके ऊपर जलधारा दी उसी समय उसके प्राण पखेरू उड़ गये और सहस्रों नर-नारियों के गुणगानसे सारा मन्दिर गूंज उठा. इस कथानकके लिखने का तात्पर्य यह है कि अधमसे अधम प्राणी भी परिणामोंकी निर्मलतासे देवगति प्राप्त कर सकता है.

यहाँ जो गिरिधर शर्मा रहते थे उन्होंने एक दिन कहा कि नवद्वीपमें न्यायशास्त्रकी अपूर्व पठनशैली है, जो ज्ञान यहाँ एक वर्षमें होगा वह वहां एक मासमें ही हो जावेगा. मैं उनके वचनोंकी कुशलतासे चकोती ग्राम छोड़कर नवद्वीपको चला गया.

═══

१५

नवद्वीप, कलकत्ता, फिर बनारस

जिस दिन नवद्वीप पहुँचा उस दिन वहाँ पर छुट्टी थी. लोग अपने अपने स्थानों पर भोजन बना रहे थे. मुझे भी एक कोठरी दे दी गई, मैं स्नान कर और णमोकार मन्त्रकी माला फेर कर भोजनकी कोठरीमें गया. कहारिनने चूल्हा सिलगा दिया था, मैंने पानी छानकर बटलोई चूल्हे पर चढ़ा दी, कहारिन पूछती है—'महाशय साग भी बनाओगे ?' मैंने कहा—'अच्छा मटर की फली लाओ.' वह बोली—'मछली भी लाऊँ ?' मैं तो सुनकर अवाक् रह गया पश्चात् उसे डांटा कि यह क्या कहती है ? हम लोग निरामिषभोजो हैं. वह बोली यहां तो जितने छात्र हैं सब मांसभोजी हैं. मैंने मन ही मन विचार किया कि हे भगवन् ! किस आपत्तिमें आगये ? दाल चावल बनाना भूल गया और यह विचार आया कि तेरा यहाँ गुजारा नहीं हो सकता. उस दिन भोजन नहीं किया गया दो घंटा बाद गाड़ीमें बैठ कर कलकत्ता चले गये. श्री पण्डित ठाकुरप्रसादजीने संस्कृत कालेज में नाम लिखा दिया तथा एक बङ्गाली विद्वान्से मिला दिया. मैं उनसे न्यायशास्त्रका अध्ययन करने लगा.

श्री सेठ पद्मराज जी रानीवाले हमारे पास न्यायदीपिका पढ़ने लगे. और उन्होंने अपने रसोईघरमें मेरे भोजनका प्रबन्ध कर दिया. मैं निश्चिन्त होकर पढ़ने लगा. छह मासके बाद चित्त में उद्वेग हुआ जिससे फिर बनारस चला आया. श्रीशास्त्रीजी से अध्ययन करने लगा. इन्हीं के द्वारा तीन खण्ड न्यायाचार्यके पास किये फिर उद्वेग हुआ और बाईजीके पास आ गया.

बाईजीने कहा—'बेटा ! तुम्हें ६ खण्ड पास करने थे.

१६

सागर में जैन पाठशाला की स्थापना

उस समय इस प्रान्तके लोगोंकी रुचि विद्याध्ययनमें प्रायः नहीं ही थी. यहाँ तो द्रव्योपार्जन करना ही मनुष्योंका उद्देश्य था. यदि किसी के धर्म करनेके भाव हुए भी तो श्री जीके जल-बिहारमें द्रव्य लगा दिया, किसीके अधिक भाव हुए तो मन्दिर बनवा दिया या पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठा करा दी, विद्या दानकी ओर किसीकी दृष्टि न थी. पूजा-पाठ भी शुद्ध नहीं जानते थे.

यह सब देखकर मेरे मनमें यह चिन्ता उठा करती थी कि जिस देशमें प्रतिवर्ष लाखों रुपये धर्म कार्यमें व्यय होते हों वहाँ के आदमी यह भी न जानें कि देव, शास्त्र और गुरुका क्या स्वरूप है? अष्टमूल गुण क्या हैं? यह सब अज्ञानका ही माहात्म्य है. मुझे इस प्रान्तमें एक विशाल विद्यालय और छात्रावासकी कमी निरन्तर खलती रहती थी.

ललितपुरमें विमानोत्सव था, मैं भी वहाँ गया. उसी समय सागरके कई महानुभाव भी पधारे. इन लोगोंसे हमारी बात-चीत हुई और मैंने अपना अभिप्राय इनके समक्ष रख दिया. लोग सुनकर बहुत प्रसन्न हुए, कहा—'आप आइये यहाँ पर पाठशालाकी व्यवस्था हो जावेगी.'

हम सागर पहुँच गये. अक्षय तृतीया वीर निर्वाण २४३५ वि० सं० १९६५ को पाठशाला खोलनेका मुहूर्त्त निश्चित किया गया. यहाँ पर एक छोटी पाठशाला थी वही श्री सत्तर्क-सुधा-तरङ्गिणी नाम में परिवर्तित हो गई.

मुख्य प्रश्न इस बातका था कि इतना द्रव्य कहांसे आवे जिससे कि छात्रावास सहित पाठशालाका कार्य अच्छी तरह चल

सके. सागरमें हंसराज करइया थे, अचानक उनका स्वर्गवास हो गया. उनके दामादने १०००१) विद्यादानमें दे दिया और साथ ही नन्हूँमलजीने एक कोठी पाठशाला को लगा दी जिसका मासिक किराया १००) आता था. इस प्रकार द्रव्यकी पूर्ति हुई तब अक्षय तृतीयाके दिन बड़े गाजे-बाजेके साथ पाठशालाका शुभ मूहूर्त श्री शिवप्रसादजी के गृहमें सानन्द हो गया.

पढ़ाई क्वीन्स कालेजके अनुसार होती थी, जब तक छात्र प्रवेशिकामें उत्तीर्ण नहीं होता था तब तक उसे धर्मशास्त्र नहीं पढ़ाया जाता था, इस पर समाजमें बड़ी टीका टिप्पणियां होने लगीं—कोई कहता—'आखिर गणेशप्रसाद वैष्णव ही तो हैं, उन्हें जैनधर्मका महत्त्व नहीं आता, उनके द्वारा जैनधर्मका उपकार कैसे हो सकता है ? इन सब व्यवहारोंसे मेरा चित्त खिन्न होने लगा और यह बात मनमें आने लगी कि सागर छोड़कर चला जाऊँ ! परन्तु फिर मनमें सोचता कि 'श्रेयांसि बहुविघ्नानि—' अच्छे कार्योंमें विघ्न आया ही करते हैं—मेरा अभिप्राय तो निर्मल है—मैं तो यही चाहता हूँ कि यहांके छात्र प्रौढ़ विद्वान् बनें.

अब जिस मकानमें पाठशाला थी वह छोटा पड़ने लगा श्री राईसे बजाजने चैत्यालयका एक बड़ा मकान, जो कि चमेली चौकमें था पाठशालाके लिये दे दिया और पाठशाला उसमें चली गई. एक दिन कटराके सब पञ्चोंसे निवेदन किया तो सभीने प्रसन्नताके साथ एक आना सैकड़ा धर्मादाय लगा दिया इससे पाठशालाकी आर्थिक व्यवस्था कुछ कुछ सँभल गई.

इसी समय श्री सिंघई कुन्दनलालजीसे मेरा घनिष्ठ सम्बन्ध हो गया, एक दिन मैंने आपसे पाठशालाकी आय सम्बन्धी चर्चा की तो आपने एक पैसा प्रति गाड़ी तथा घी के व्यापारियोंसे भी

कोशिश की जिससे फी मन आध पाव घी पाठशाला को मिलने लगा. इस प्रकार हजारों रुपये पाठशालाकी आय हो गई. देहातमें भी जहाँ कहीं धार्मिक उत्सव होते वहांसे पाठशालाको सैकड़ों रुपये मिलते थे. इस तरह बुन्देलखण्डके केन्द्रस्थान—सागरमें श्री सत्तर्क सुधा तरङ्गिणी जैन पाठशालाका पाया कुछ ही समयमें स्थिर हो गया.

मै पाठशालाकी सहायता के लिये बाहर जाने लगा. एक बार बरायठा ग्राम गया. वहां से श्री सेठ कमलापति जी भी साथ हो गये. कर्रापुर से प्रातःकाल भोजन कर हम दोनोंने सागरके लिये प्रस्थान किया. वहांसे चलकर बहेरिया ग्रामके कुवा पर पानी पीने लगे. इतनेमें ही क्या देखते हैं कि सामने एक बालक और उसकी माता खड़ी है. बालककी अवस्था पांच वर्षकी होगी, उसे देखकर ऐसा मालूम होता था कि वह प्यासा है. मैंने उसे पानी पिला दिया और हमारे पास खानेके लिये जो कुछ मेवा थे उस बालकको भी थोड़ेसे दे दिये. हम चलने के लिये ज्योंही उद्यमी हुए त्यों ही वह सामने खड़ी हुई औरत रोने लगी. हमने उससे पूछा—'क्यों रोती है ?' उसने हितैषी जान अपनी कथा कहना प्रारम्भ किया—'मेरे पतिको गुजरे हुए आठ मास हुए हैं हमारा जो देवर है वह बराबर लड़ता है और मेरे खानेमें भी त्रुटि करता है. मारी-मारी फिरती हूँ. आज यह विचार किया कि पिताके घर चली जाऊँ वहीं अपना निर्वाह करूंगी.

हमारे पास कुछ था नही केवल धोती और दुपट्टा था, तथा धोती में कुछ रुपये थे मैंने वह धोती दुपट्टा तथा रुपये—सब उसे दे दिया केवल नीचे लंगोट रह गया. सेठजी बोले—'इस वेषमें सागर कैसे जाओगे ?' मैंने कहा—'चिन्ताकी कोई बात नहीं

यहांसे चलकर तीन मील पर सामायिक करेंगे पश्चात् रात्रिके सात बजे नगरमें चले जावेंगे वहां पर धोती आदि सब वस्त्र रखे ही हैं. बीचमें नित्य नियम की विधि कर सागर पहुँच गये चोर की तरह घर पहुँचे, उस समय बाईजी मन्दिरको जा रही थीं मुझे देखकर बोलीं 'भैया वस्त्र कहां हैं ?' मैं चुप रह गया. कमलापति जीने जो कुछ कथा थी कह दी.

एक बार हम और कमलापति सेठ बरायठासे आ रहे थे. कर्रापुरसे दो मील दूर एक कुए पर पानी पी रहे थे. पानी पीकर ज्यों ही चलने लगे त्यों ही एक मनुष्य आया और कहने लगा कि हमें पानी पिला दीजिये. मैंने कुएसे पानी खींचकर दूसरे लोटा में छाना. वह बोला—'महाराज ! मैं मेहतर—भंगी हूँ.' मैंने कहा—'कुछ हानि नहीं पानी ही तो पीना चाहते हो पी लो. सेठजी बोले—'पत्ते लाकर दोना बना लो.' मैं बोला—'यहां दोना नहीं बन सकता क्योंकि यहां पलास का वृक्ष नहीं है.'

मैंने उस मनुष्यसे कहा—'खोवा बांधो हम पानी पिलाते हैं.'

सेठजी बोले—'लोटा आगमें शुद्ध करना पड़ेगा.'

मैंने उसे पानी पिलाया पश्चात् वह लोटा उसे ही दे दिया और सेठजी से कहा—'चलो शुद्ध करनेकी झंझट मिटी ' सेठजी हँस गये और वह भंगी भी 'जय महाराज' कहता हुआ चला गया.'

१७

मड़ावरा मे पाठशाला की स्थापना

मड़ावरासे जहां पर कि मेरा बाल्यकाल बीता था एक पत्र इस आशयका आया कि 'आप पत्रके देखते ही चले आइये यहां

पर श्री जिनेन्द्र भगवानके विमान निकालने का महोत्सव है. मैं वहां पहुँचा, तीन दिनका उत्सव था, मैंने कहा—'भाई एक प्रस्ताव परवार सभामें पास हो चुका है कि जो ५००० रुपया विद्यादानमें देवे उसे सिंघई पद दिया जावे. इस ग्राम में सौ घरसे ऊपर हैं परन्तु बालकोंको जैनधर्मका ज्ञान करानेके लिये कुछ भी साधन नही हैं. अतः मुझे आशा है कि सोंरया बंशके महानुभाव इस त्रुटिकी पूर्ति करेंगे.'

मेरे बाल्यकालके मित्र श्री सोंरया हरीसिंहजी हँस गये. इनका हँसना क्या था, 'सिंघई पदप्राप्तिकी सूचना थी. उनके हास्य से मैंने आगत जनसमुदायके बीच घोषणा कर दी कि बड़ी खुशी की बात है कि हमारे बाल्यकालीन मित्रने सिंघई पदके लिये ५००० रुपया दान दिया उससे एक जैन पाठशाला खोली जावेगी. मैंने श्री दामोदर सिंघईसे भी कहा कि भैया! आप भी ५००० रुपया देकर ग्रामकी कीर्तिको अमर कर देवें. उनकी मांजीभी दैवयोगसे शास्त्र-सभामें आई थी मैंने उनसे कहा कि सि० दामोदरजी ५००० रुपये विद्यादानमें देना चाहते हैं इसमें आपकी क्या सम्मति है?' उन्होंने कहा—'इससे उत्तम क्या होगा कि हमारे द्वारा बालकों को ज्ञानदान मिले. लोगोंने सुनकर हर्षध्वनि की और उसी समय पदवी दान के लिए केशर तथा पगड़ी बुलाई गई.

पञ्चोंने सोंरया वंशके प्रमुख व्यक्तियोंको पगड़ी बांधी और केशरका तिलक लगाकर 'सिंघईजी जुहार' का दस्तूर अदा किया. पश्चात श्री सिं० दामोदरदासजी को भी केशरका तिलक लगाकर पगड़ी बांधी और 'सवाई सिंघई' पदसे सुशोभित किया. इस तरह जैन पाठशाला के लिये दस हजार रुपया का मूल-धन अनायास हो गया.

१८

बालादपि सुभाषितं ग्राह्यम्

बरुडामें पञ्चकल्याणक थे हम वहां गये. राजगद्दीके समय मुझेभी बोलनेका अवसर आया. व्याख्यानके समय मेरी अंगूठी का हीरा निकल गया. वह जिस बालकको मिला था उसने कांच समझकर रख लिया था. जबमैं भोजनकर रहा था तब हीरा लेकर आया और भोजन करनेके बाद यह कहते हुए उसने दिया कि यह हीरा मुझे सभा मण्डपमें जहां कि नृत्य होता था मिला था. मैंने चमकदार देखकर इसे रख लिया था। जिस समय मिला था उस समय यह दूसरा बालक भी वहां था. यदि यह न होता तो संभव है मेरे भाव लोभके हो जाते और आपको न देता. इस कथासे कुछ तत्त्व नहीं परन्तु एक बात आपसे कहना हमारा कर्तव्य है. यद्यपि हम बालक हैं, हमारी गणना शिक्षकोंमें नहीं और आप तो वर्णी हैं हजारों आदमियोंको व्याख्यान देते हैं शास्त्रप्रवचन करते हैं, त्यागका उपदेश भी देते हैं और बहुतसे जीवोंका आपसे उपकार भी होता है फिर भी मनमें आया इस लिये कह रहा हूँ कि—

'आपकी जो माता हैं वह धर्मकी मूर्ति हैं. आपका महान् पुण्य का उदय है जो आपको ऐसी मां मिल गई. उनके उदार भावसे आप यथोचित द्रव्य व्ययकर सकते हो परन्तु कोई कहे या न कहे यह निश्चित है कि आप अनुचित वेषभूषा रखते हैं. आप ब्रह्मचारी हैं आपको हीराकी अंगूठी क्या शोभा देती है ? यदि आपके तेलका हिसाब लगाया जावे तो मेरी समझसे उतने में एक आदमीका भोजन हो सकता है. यदि फलादिककी बात कही जावे तो आप स्वयं लज्जित हो उठेंगे. अतः आशा करता हूँ कि आप इसमें सुधार करेंगे.'

वह था तो बालक पर उसके मुखसे अपनी इतनी खरी समालोचना सुनकर मै बहुत ही प्रसन्न हुआ और उसी समय मैंने वह हीरा सिंघई कुन्दनलालजी को दे दिया तथा भविष्यमें हीरा पहिननेका त्याग कर दिया. साथ ही सुगन्धित तेलोंका व्यवहार भी छोड़ दिया. मेला पूर्ण होनेके बाद सागर आ गया. और आनन्दसे पाठशालामें रहने लगा.

१९

बरुआ सागर में

कई स्थानोंमें घूमनेके बाद मैं श्रीयुत सर्राफ मूलचन्द्रजी बरुआसागरवालोंके यहां चला गया. आप हमसे अधिक अवस्थावाले थे अत: मुझसे अनुजकी तरह स्नेह करते थे. एक दिन एक विलक्षण घटना और हो गई जो कि इस प्रकार है—

दिनके चार बजे मैं जलका पात्र (लोटा) लेकर शौच क्रिया के लिये मकानके बाहर जा रहा था. मार्गमें बालक गेंद खेल रहे थे उन्हें देखकर मेरे मनमें भी गेंद खेलनेका भाव हो गया. एक लड़केसे मैंने कहा—'भाई! हमको भी डण्डा और गेंद दो हम भी खेलेंगे.' बालकने दण्डा और गेंद दे दी. मैंने दंडा गेंदमें मारा पर वह गेंदमें न लगकर पास ही खड़े हुए ब्राह्मणके बालकके नेत्रमें बड़े वेगसे जा लगा और उसकी आंखसे रुधिरकी धारा बहने लगी. यह देखकर मेरी अवस्था इतनी शोकातुर हो गई कि मैं सब कुछ भूल गया और लोटा लेकर बाईजी के पास आ गया. बाईजी कहती हैं—'बेटा! क्या हुआ?' मै कुछ भी न बोल सका किन्तु रोने लगा. इतने में एक बालक आया

उसने सब वृत्तान्त सुना दिया. बाईजी ने कहा—'अब क्यों रोते हो ? अब उठो और भोजन करो.' मैंने कहा— 'आज भोजन न करूंगा.' मैं अपनी भूलपर पश्चात्ताप करता रहा.

एक दिन कुछ विलम्बसे मन्दिर जा रहा था उस बालककी मां मार्गमें मिल गई और उसने मेरे पैर पड़े. मैं उसे देखकर ही डर गया था और मनमें सोचने लगा था कि हे भगवन् ! अब क्या होगा ? इतने में वह बोली कि आपने मेरे बालकका महोपकार किया. मैंने कहा—'सत्य कहिये बालककी आंख तो नहीं फूट गई ?' उसने कहा—'आंख तो नहीं फूटी परन्तु उसका अॅखसूर जो कि अनेक औषधियां करने पर भी अच्छा न होता था खून निकल जाने से एकदम अच्छा हो गया. मैं मन ही मन विचारने लगा कि उदय बड़ी वस्तु है अन्यथा ऐसी घटना कैसे हो सकती है.

एक भविष्य कथन—

एक दिन को बात है, तब मूलचन्द्रजी की स्त्री गर्भवती थी. लोग वहां पर गप्पाष्टक कर रहे थे. किसीने कहा—'अच्छा, बतलाओ गर्भमें क्या है ?' किसीने कहा—'बालक है.' किसीने कहा 'बालिका है.' मुझसे भी पूछा गया, मैंने कहा—'मैं नहीं जानता क्या है ? क्योंकि निमित्त ज्ञानसे शून्य हूँ, इतना कह चुकने पर भी लोग आग्रह करते रहे अन्ततोगत्वा मैंने भी अन्य लोगोंकी तरह उत्तर दे दिया कि बालक है और जब पैदा होगा उसका श्रेयांसकुमार नाम होगा. यह सुनकर लोग बहुत ही प्रसन्न हो गये और उस दिनकी प्रतीक्षा करने लगे.

कुछ काल के पश्चात् सर्राफ मूलचन्द्रजीके पुत्ररत्न हुआ. हम और बाईजी पुनः बरुआसागर पहुँच गये. ग्यारह दिनके बाद नाम संस्कार किया गया. पूजन विधान सम्पन्न हो जानेके बाद

सौ नाम कागजके टुकड़ोंमें लिखकर एक थालीमें रख दिये. अनन्तर एक पांच वर्षकी कन्यासे कहा कि इनमेंसे एक कागज की पुड़िया निकालो, और थालीके बाहर डाल दो. उसने एक पुड़िया बाहर डाल दी जब उसे खोला तो उसमें श्रेयान्स-कुमार नाम निकला. अब क्या था ? सब लोग कहने लगे कि 'देखो वर्णीजीको पहले से ही ज्ञान था. अन्यथा आपने नौ मास पहले जो कहा था कि सर्राफ मूलचन्द्रजीके बालक होगा और उसका नाम श्रेयान्सकुमार होगा, सच कैसे निकलता ? मैंने कहा—'भाई मैं तो कुछ नहीं जानता था. यह तो घुणाक्षरन्याय से सत्य निकल आया आप लोगोंकी जो इच्छा हो सो कहें ?'

एक हिंसक अहिंसक बना—

यहां एक बात विलक्षण हुई. हम लोग स्टेशन पर मूलचन्द्र जी के मकानमें रहते थे. पासमें कहार लोगों का मोहल्ला था. एक दिन रात्रिको ओलोंकी वर्षा हुई. इतनी विकट कि मकानों के खप्पर फूट गये. हम लोग रजाई आदिको ओढ़कर किसी तरह ओलोंके कष्ट से बचे. पड़ोसमें जो कहार थे वे सब राम-राम कहकर अपनी प्रार्थना कर रहे थे. वे कह रहे थे कि—

'हे भगवान ! इस कष्टसे रक्षा कीजिये, आपत्ति कालमें आपके सिवाय ऐसी कोई शक्ति नहीं जो हमें कष्टसे बचा सके.' उनमें एक दस वर्षकी लड़की भी थी, वह अपने माता पितासे कहती है कि 'तुम लोग व्यर्थ ही राम राम रट रहे हो. यदि कोई राम होता तो इस आपत्ति कालमें हमारी रक्षा न करता ? वस्त्र तक हमारे घरमें पर्याप्त नहीं. एक ही धोतीसे अपना निर्वाह करते हैं बगलमें देखो सर्राफजी का मकान है उनके हजारों मन गल्ला है, अनेक प्रकारके वस्त्रादि हैं यहां तो हमारे घरमें अन्नका दाना नहीं, दूधकी बात छोड़ो छांछ भी मांगे से नहीं मिलती, यद्यपि

मैं बालिका हूँ पढ़ी लिखी नहीं कि किसी आधारसे बात कर सकूं, परन्तु अपनी इस बिपत्तिसे इतना अवश्य जानती हूँ कि जो नीम बोवेगा उसके नीमका पेड़ होगा, जो आमका बीज बोवेगा उसके आम ही का फल लगेगा. हम लोगों ने जन्मान्तर में कोई अच्छा कार्य नहीं किया जिससे कि हमें सुखकी सामग्री मिलती, उस जन्ममें बहुत पाप किये अतः अब ओलोंकी वर्षासे मत डरो और न राम राम चिल्लाओ. हमारी रक्षा हमारे भाग्यके ही द्वारा होगी. न कोई किसीका रक्षक है और न कोई भक्षक है.

यदि तुम इन सब आपत्तियोंसे बचना चाहते हो तो एक काम करो, देखो तुम प्रति दिन सैकड़ों मछलियोंको मारकर अपनी आजीविका करते हो. जैसी हमारी जान है वैसी ही अन्यको भी है. यदि तुम्हें कोई सुई चुभा देता है तो कितना दुःख होता है. जब तुम मछलीकी जान लेते हो तब उसे जो दुःख होता है, वही जानती होगी. अतः मैं यही भिक्षा मांगती हूँ कि चाहे भिक्षा से पेट भर लो परन्तु मछली मारकर पेट मत भरो.

लड़कीकी ज्ञानभरी बातें सुनकर पिता एकदम चुप रह गया और कुछ देर बाद उससे पूछता है कि बेटी! तुझे इतना ज्ञान कहांसे आया? वह बोली कि मैं पढ़ी लिखी तो हूँ नहीं परन्तु बाईजीके पास जो पण्डितजी हैं वे प्रति दिन शास्त्र बांचते हैं, एक दिन बांचते समय उन्होंने बहुतसी बातें कहीं, अपने अपने पुण्य पापके आधीन सब प्राणी हैं. यह बात आज मुझे और भी जँच गई, कोई बचानेवाला होता तो इस आपत्तिसे न बचाता?

पिताने पुत्रीकी बातोंका बहुत आदर किया और कहा कि 'बेटी! हम तुमसे बहुत प्रसन्न हैं और जो यह मछलियोंके पकड़ने का जाल है उसे अभी तुम्हारे ही सामने ध्वस्त करता हूँ.' इस

तरह उसने बातचीतके बाद उस जालको जला दिया और स्त्री पुरुषने प्रतिज्ञा की कि अब आजन्म हिंसा न करेंगे.

यह कथा हम और बाईजी सुन रहे थे बहुत ही प्रसन्नता हुई इसके अनन्तर ओला पड़ना बन्द हुआ. प्रातःकाल जब हम मन्दिरजी पहुँचे तब आठ बजे वे तीनों जीव आये और उत्साहसे कहने लगे कि हम आजसे हिंसा न करेंगे. मैंने प्रश्न किया—क्यों? उत्तर में उसने रात्रिकी राम कहानी आनुपूर्वी सुनाई. जिसे सुनकर चित्तमें अत्यन्त हर्ष हुआ और श्री समन्तभद्र स्वामीका यह श्लोक स्मरण द्वारा सामने आगया कि—

'सम्यग्दर्शनसम्पन्नमपि मातङ्गदेहजम्,
देवा देवं विदुर्भस्मगूढाङ्गारान्तरौजसम्.'

हम लोगों की यह महती अज्ञानता है कि किसीको सर्वथा तुच्छ नीच या अधम मान बैठते हैं. न जाने कब किसके काललब्धि आजावे? जातिके कहार, जिस लड़कीके उपदेशसे माता पिता एकदम सरल परिणामी हो गये उस लड़कीने कौनसी पाठशालामें शिक्षा पाई थी? दस वर्षकी अबोध बालिकामें इतनी विज्ञता कहांसे आ गई? जन्मान्तरका संस्कार था जो समय पाकर उदयमें आगया, अतः हमें उचित है कि अपने संस्कारोंको अति निर्मल बनानेका सतत प्रयत्न करें. वह लड़की बोली—'वर्णीजी! हम तीनोंको क्या आज्ञा है?' मैंने कहा—'बेटी! तुमको धन्यवाद देता हूँ, आज तुमने वह उत्कृष्ट कार्य किया जो महापुरुषों द्वारा साध्य होता है. उस लड़कीका पिता बोला—आजतक मछलियां मारकर उदर भरते थे अब मजदूरी करके उदर पोषण करेंगे. अभी तो हमने केवल हिंसा करना ही छोड़ा था पर अब यह भी नियम करते हैं कि आजसे मांस भी नहीं खावेंगे तथा हमारे यहां जो देवीका

बलिदान होता था वह भी नहीं करेंगे. जब मांस ही जिससे कि पेट भरता था छोड़ दिया, तब अब न मदिरा पीवेंगे और न मधु ही खावेंगे. हमने जो व्रत लिया है मरण पर्यन्त भी उसका भङ्ग न करेंगे. अच्छा अब जाते हैं, यह कह कर वे चले गए. मुझे ऐसा लगा कि धर्मका कोई ठेकेदार नहीं है.

२०

शंकित संसार

कुछ दिन बरुआसागर रहकर हम और बाईजी सागर चले गये और सागर विद्यालयके लिये द्रव्य संग्रहका यत्न करने लगे. भाग्यवश यहां पर भी एक दुर्घटना हो गई.

मेरे खानेमें जो साग व फल आते थे मैं स्वयं जाकर उन्हें चुन चुनकर लाता था. एक दिनकी बात है कि नसीबन कुंजड़ी की दुकान पर एक महाशय छीताफल (शरीफा) खरीद रहे थे. शरीफा दो इतने बड़े थे कि उनका वजन एक सेर होगा, उनकी कीमत कुंजड़ी एक रुपया मांगती थी, उन्होंने बारह आना तक कहा. मेरा मन भी उन शरीफोंके लिये ललचाया परन्तु जब एक महाशय ले रहे थे तब मेरा कुछ बोलना सम्यताके विरुद्ध होता, आखिर जब वे निराश होकर जाने लगे तब मैंने शीघ्र ही एक रुपया कुंजड़ीके हाथमें दे दिया और वह शरीफा मेरे झोलेमें डालनेको उद्यत हुई कि वही महाशय पुन: लौटकर कहने लगे—'अच्छा, पांच रुपया ले लो.' उसने कहा—'नहीं अब तो वे बिक गए, लेनेवाले से आप बात करिये. अन्तमें उन्होंने कहा—'अच्छा सौ रुपये ले लो परन्तु शरीफा हमें ही दो.' कुंजड़ी

बोली—'आप महाजन होकर इस तरहकी बात करते हो, क्या इसी तरहकी धोखेबाजीसे पैसा पैदा करते हो ?'

वह महाशय लज्जासे नम्रीभूत हो गये, मैंने उनसे कहा कि यह शरीफा लेते जाइये परन्तु वह नीचे नेत्र करके कुछ न बोले और अपने घर चले गये. अन्तमें कूंजड़ी बोली—'देखो मनुष्य वही है जो अच्छा व्यवहार करे. आपके व्यवहारसे मैं खुश हूँ आपकी दुकान है आपको उत्तमसे उत्तम साग दूंगी आप अब अन्य दूकानपर मत जाना.

मैं प्रतिदिन उसीकी दुकानसे साग लेने लगा परन्तु संसार सबको पापमय देखता है, वह मेरे इस कार्यमें नाना प्रकारके संदेह करने लगा. यद्यपि मैं अन्तरङ्ग से वैसा नहीं था, पर ऐसा नियम है कि यदि कलारकी दुकानपर कोई पैसा भंजानेके लिए भी जावे तो लोग ऐसा सन्देह करने लगते हैं कि इसने मद्य पिया होगा.

एक दिन छेदीलालजी के बागमें सब जैनियोंका भोजन था मैंने वहीं सबके समक्ष इस बातका स्पष्टीकरण कर यह निश्चय किया कि मैं आजसे ही ब्रह्मचर्य प्रतिमाका पालन करूँगा.

२१
निवृत्ति की ओर

वीर निर्वाण २४३६ और वि० सं० १९६६ की बात है जमीन पर सोनेकी आदत न थी परन्तु अनायाश भूशय्या होनेपर भी निद्रा सुख पूर्वक आ गई. बाईजी कहने लगीं अपनी शक्तिको भी देख लो, तथा द्रव्य क्षेत्र काल भावको देखो, सर्वप्रथम अपने परिणामोंकी जातिको पहिचानों. जो व्रत लो उसे मरण पर्यन्त

पालन करो, अनेक संकट आने पर भी उसका निर्वाह करो जैन धर्मकी यह मर्यादा है कि व्रत लेना परन्तु उसे भङ्ग न करना. व्रत न लेना पाप नहीं परन्तु लेकर भङ्ग करना महापाप है.

जैन दर्शनमें तो सर्व प्रथम स्थान श्रद्धाको प्राप्त है, इसी का नाम सम्यग्दर्शन है. यदि यह नहीं हुआ तो व्रत लेना नीवके बिना महल बनानेके सदृश है इसके होते ही सब व्रतोंकी शोभा है. सम्यग्दर्शन आत्माका वह गुण है जिसका कि विकास होते ही अनन्त संसारका बन्धन छूट जाता है.

वस्तुतः आत्मामें अचिन्त्य शक्ति है और उसका पता हमें स्वयमेव होता है. सम्यग्दर्शन गुणका प्रत्यक्ष हमें न हो परन्तु उसके होते ही हमारी आत्मामें जो विशदताका उदय होता है वह तो हमारे प्रत्यक्षका विषय है. यह सम्यग्दर्शनकी ही अद्भुत महिमा है कि हम लोग बिना किसी शिक्षक व उपदेशकके उदासीन हो जाते हैं. इस सम्यग्यर्शनके होते ही हमारी प्रवृत्ति एकदम पूर्वसे पश्चिम हो जाती है. प्रशम, संवेग, अनुकम्पा और आस्तिक्य का आविर्भाव हो जाता है.

जब बच्चा पैदा होता है तब माँके स्तनको चूसने लगता है. इसका मूल कारण यह है कि अनादि कालसे इस जीवके चार संज्ञाए लग रही हैं उनमें एक आहार संज्ञा भी है, उसके बिना इसका जीवन रहना असंभव है. इस आहारकी पीड़ा जब असह्य हो उठती है तब सर्पिणी अपने बच्चोंको आप ही खा जाती है. पशुओंकी कथा छोड़िये, जब दुर्भिक्ष पड़ता है तब माता अपने बालकों को बेचकर खा जाती है. इसी प्रकार मैथुन संज्ञाके वशीभूत होकर यह जीव अत्यन्त दुखी होता है. भर्तृहरिने ठीक ही कहा है—

'मत्तेभकुम्भदलने भुवि सन्ति शूराः,
केचित्प्रचण्डमृगराजवधेऽपि दक्षाः,

किन्तुब्रवीमि बलिना पुरतः प्रसह्य,
कन्दर्पदर्पदलने विरला मनुष्याः.'

इसका अर्थ यह है कि इस पृथ्वीपर कितने ही ऐसे मनुष्य हैं जो मदोन्मत्त हाथियोंके गण्डस्थल विदारने में शूरवीर हैं और कितने ही बलवान् सिंहके मारनेमें भी समर्थ हैं किन्तु मैं बड़े बड़े बलशाली मनुष्योंके सामने जोर देकर कहता हूँ कि कामदेव के दर्पको दलनेमें—खंडित करनेमें—विरले ही मनुष्य समर्थ है.

इसी तरह परिग्रह संज्ञासे संसारमें नाना अनर्थ होते हैं. इसका लक्षण श्री उमास्वामीने तत्त्वार्थसूत्रमें 'मूर्च्छा परिग्रहः' कहा है. परिग्रह आत्माके सम्पूर्ण परिग्रहोंका ही पात्र रहता है, इसके जानेसे ही आत्मा मोक्षमार्गके पथपर चलनेका अधिकारी हो सकता है. जबतक सम्यग्दर्शन न हो तबतक यह जीव न तो गृहस्थ धर्मका अधिकारी हो सकता है और न ऋषिधर्मका. ऊपरसे चाहे गृहस्थ रहे चाहे मुनिवेष, कौन रोक सकता है ?

मैंने कहा—'बाईजी ! आखिर हम भी तो मनुष्य हैं, मनुष्य ही तो महाव्रत धारण करते हैं, और अनेक उपसर्ग—उपद्रव आने पर भी अपने कर्तव्यसे विचलित नहीं होते. उनका भी तो मेरे ही जैसा औदारिक शरीर होता है. मेरी आत्मा यदि व्रत न लेवेगी तो बहुत खिन्न रहेगी अतः अब मैं किसी त्यागीके पास व्रत ले लूँगा. कुछ नहीं होगा तो न सही पर मेरी जो यह बाह्य प्रवृत्ति है वह तो छूट जावेगी और जो व्यर्थ व्यय होता है उससे बच जाऊंगा. अभी तक मैंने जो पाया सो व्यय किया अब परिमित व्यय होने लगेगा तथा जहां तक मुझसे बनेगा व्रतमें शिथिलता न करूंगा.'

बाईजी तटस्थ रह गई, मैं व्रत पालनेकी चेष्टा करने लगा. अभ्यास तो पहले था ही नहीं अतः धीरे-धीरे व्रत पालने लगा.

मैंने कुण्डलपुरमें श्रीबाबा गोकुलचन्द्रजीसे प्रार्थना की कि महाराज ! यद्यपि अपने नियमके अनुसार दो वर्षसे उसका पालन भी कर रहा हूँ तो भी गुरुसाक्षीपूर्वक व्रत लेना उचित है. आप हमारे पूज्य है तथा आपमें मेरी भक्ति है अतः मुझे सप्तमी प्रतिमाका व्रत दीजिये.'

बाबाजीने कहा—'अच्छा आज ही व्रत ले लो, प्रथम तो श्री वीरप्रभुकी पूजा करो पश्चात् आओ व्रत दिया जावेगा.' मैंने आनन्दसे श्रीवीरप्रभुकी पूजा की, अनन्तर बाबाजीने विधिपूर्वक मुझे सप्तमी प्रतिमाके व्रत दिये. मैंने अखिल ब्रह्मचारियोंसे इच्छाकार किया और यह निवेदन किया कि मैं अल्पशक्तिवाला क्षुद्र जीव हूँ आप लोगोंके सहवासमें इस व्रतका अभ्यास करना चाहता हूँ आशा है मेरी नम्र प्रार्थना पर आप लोगोंकी अनुकम्पा होगी. मैं यथाशक्ति आप लोगोंकी सेवा करनेमें सन्नद्ध रहूँगा.' सबने हर्ष प्रकट किया और उनके सम्पर्कमें आनन्दसे काल जाने लगा.

२२

समाज के न्यायालय में

जतारा के जैन का उद्धार—

एक बार मड़ावरासे हम श्री पं० मोतीलालजी वर्णीके साथ उनके ग्राम जतारा पहुँचे. यहां पर एक जैनी ऐसे थे जो २५ वर्ष से जैन समाजके द्वारा वहिष्कृत थे. उन्होंने एक गहोईकी औरत रक्खी थी, उसके एक कन्या हुई, उसका विवाह उन्होंने बिनैका-

वालके यहां कर दिया था. कुछ दिनके बाद वह औरत मर गई और लड़की अपनी ससुरालमें रहने लगी. जातिसे बहिष्कृत होनेके कारण लोग उन्हें मन्दिरमें दर्शन करनेके लिये भी नहीं आने देते थे. वह बोले—मैंने पंचोंसे बहुत ही अनुनय विनय किया कि महाराज! दूरसे दर्शन कर लेने दो परन्तु यही उत्तर मिला कि मार्ग विपरीत हो जावेगा. इत्यादि पंचोंसे निवेदन किया परन्तु उन्होंने एक नहीं सुनी.

इसके अनन्तर मैंने सम्पूर्ण पञ्च महाशयोंको बुलाया और कहा कि यदि कोई जैनी जातिसे च्युत होनेके अनन्तर बिना किसी शर्तके दान करना चाहे तो आप लोग क्या उसे ले सकते हैं? मन्दिरकी शोभा हो जावेगी तथा एकका उद्धार हो जावेगा. शास्त्रमें यहां तक कथा है कि शूकर, सिंह, नकुल और बानरसे हिंसक जीव भी मुनिदानकी अनुमोदनासे भोगभूमि गये. व्याघ्रीका जीव स्वर्ग गया, जटायु पक्षी स्वर्ग गया, बकरेका जीव स्वर्ग गया, चाण्डालका जीव स्वर्ग गया, चारों गतिके जीव सम्यग्दृष्टि हो सकते हैं, तिर्यञ्चोंके पञ्चम गुणस्थान तक हो जाता है. धर्मका सम्बन्ध आत्मासे है न कि शरीरसे, शरीर तो सह-कारी कारण है, जहां आत्माकी परिणति मोहादि पापोंसे मुक्त हो जाती है वही धर्मका उदय हो जाता है.

सबने सहर्ष स्वीकार किया और वेदिका लाने तथा जड़वाने का भार श्रीमान् मोतीलालजी वर्णीके अधिकारमें सौंपा गया. फिर क्या था, उन जातिच्युत महाशयके हर्षका ठिकाना न रहा. श्री वर्णीजी जयपुर जाकर वेदी लाये. मन्दिरमें विधिपूर्वक वेदी प्रतिष्ठा हुई और उस पर श्री पार्श्वप्रभुकी प्रतिमा विराजमान हुई. सबने उसे श्री जिनेन्द्रदेवके दर्शनकी आज्ञा प्रदान कर दी. इस आज्ञाको सुनकर वह तो आनन्द समुद्रमें डूब गया. आनन्द

से दर्शन कर पञ्चोंसे विनय पूर्वक बोला—'उत्तराधिकारी न होने से मेरी सम्पत्ति राज्यमें चली जावेगी अतः मुझे जातिमें मिला लिया जाय इससे मेरी सम्पत्तिका कुछ सदुपयोग हो जायगा.'

यह सुनकर लोग आगबबूला होगये और झुंझलाते हुए बोले—'कहां तो मन्दिर नहीं आ सकते थे अब जातिमें मिलनेका हांसला करने लगे. अंगुली पकड़कर पोंचा पकड़ना चाहते हो?' मैंने कहा—'भाई साहब! इतने क्रोधकी आवश्यकता नहीं. कल्पना करो यदि किसीने दस्साके साथ सम्बन्ध कर लिया इसका क्या यह अर्थ हुआ कि वह जैनधर्मकी श्रद्धासे भी च्युत हो गया. श्रद्धा वह वस्तु है जो सहसा नहीं जाती. शास्त्रोंमें इसके बड़े बड़े उपाख्यान हैं—बड़े बड़े पातकी भी श्रद्धाके बलसे संसारसे पार हो गये. प्रथमानुयोगमें ऐसी बहुतसी कथाएं हैं जिनमें यह बात सिद्ध है कि जो चरित्रसे गिरने पर भी सम्यग्दृष्टी हैं वे कालान्तरमें चारित्रके पात्र हो सकते हैं. वहाँ स्वरूपचन्द्रजी बनपुरया बहुत ही चतुर पुरुष थे. वे बोले—

'कारज धीरे होत है काहे होत अधीर,
समय पाय तरुवर फलै केतिक सींचो नीर.'

इसलिये मेरी सम्मति तो यह है कि यह प्रान्त भरके जैनियों को सम्मिलित करें उस समय इनका उद्धार हो जावेगा.' आठ दिन बाद प्रान्तके दो सौ आदमी सम्मिलित हुए. अन्तमें यह निर्णय हुआ कि यदि यह दो पङ्क्त पक्की और एक पङ्क्त कच्ची रसोई की देवें तथा २५० रुपए पपौरा विद्यालय को तथा २५०) जताराके मन्दिरको तो जातिमें मिला लिये जावें.

मैंने कहा—'अब विलम्ब मत कीजिए कल, ही इनकी पङ्क्त ले लीजिये.' सबने स्वीकार किया, दूसरे दिनसे सानन्द पंक्ति भोजन हुआ और ५००) दण्डके दिये गये. उसने यह सब

करके बीस हजारकी सम्पत्ति जो उसके पास थी एक जैनी का बालक गोद लेकर उसके सुपुर्द कर दी. इस प्रकार एक जैन का उद्धार हो गया और उसकी सम्पत्ति राज्यमें जानेसे बच गई. कहनेका तात्पर्य यह है कि शुद्धिके मार्गका लोप नहीं करना चाहिये तथा इतना कठोर दण्ड भी नहीं देना चाहिये कि जिससे भयभीत हो कोई अपने पापोंको व्यक्त ही न कर सके.

नीमटोरिया के जैन का उद्धार—

एक बार हम और कमलापति सेठ नीमटोरिया आये. यहां बरायठा से एक बरात आई थी. यहां जो लड़कीका मामा था उससे मामूली अपराध बन गया था अतः लोगोंने उसका विवाह में आना जाना बन्द कर दिया था उसकी पञ्चायत हुई और किसी तरह उसे विवाहमें बुलाना मंजूर हो गया.

हलवानी के जैन का उद्धार—

नीमटोरियासे तीन मील हलवानी ग्राम है, यहा पर एक प्रतिष्ठित जैनी रहता था उसे भी लोग विवाहमें नहीं बुलाते थे. उसकी भी पञ्चायत की गई. मैंने पञ्चोंसे पूछा—'भाई ! इनका क्या दोष है.' पञ्चोंने कहा इनके लड़केकी औरत अत्यन्त सुन्दरी है बस, यही अपराध का कारण है.' 'महाशय ! क्या कभी उसने पर पुरुषके साथ अनाचार भी किया है ?'...मैंने पूछा. 'सो तो सुननेमें नहीं आया'......उन्होंने कहा.

बस, मुझे एकदम क्रोध आगया, सेठजीसे कहा कि हम ऐसे पञ्चोंके साथ सम्भाषण करना महान् पाप समझते हैं. इस ग्राममें मैं पानी न पीऊँगा तथा ऐसे विवाहादि कार्योंमें जो भोजन करेगा वह महान पातकी होगा. सुनते ही जितने नवयुवक थे सबने विवाहकी पंगतमें जानेसे इन्कार कर दिया और जो पंगत में पहुँच चुके थे वे सब पतरीसे उठने लगे. बातकी बातमें सन-

सनी फैल गई. लड़कीवाला दौड़ा आया और बड़ी नम्रतासे कहने लगा—'मैंने कौनसा अपराध किया है ? मैं उसे बुलानेको तैयार हूँ.' पञ्च लोगोंने अपने अपराधका प्रायश्चित किया और जो महाशय—रूपवती स्त्रीके कारण विवाहमें नहीं बुलाये जाते थे वे सम्मिलित हुए. इस प्रकार यह अनर्थ मिटा.

कुछ महत्व-पूर्ण निर्णय—

इसी ग्राममें यह भी निश्चय हो गया कि हम लोग विवाहमें स्त्री समुदाय न ले जावेंगे और एक प्रस्ताव यह भी पास हो गया कि जो आदमी दोषका प्रायश्चित लेकर शुद्ध हो जावेगा उसे विवाह आदि कार्योंके समय बुलानेमें बाधा न होगी. एक सुधार यह भी हो गया कि मन्दिरका द्रव्य जिनके पास है उनसे आज वापिस ले लिया जावे तथा भविष्यमें बिना गहनेके किसी को मन्दिरसे रुपया न दिया जावे. यह भी निश्चय हुआ कि आरम्भी, उद्यमी एवं विरोधी हिंसाके कारण किसीको जातिसे बहिष्कृत न किया जावे. पंगतमें आलू बैंगन आदि पदार्थ न बनाये जावें तथा रात्रिके समय मन्दिरमें प्रवचन के समय सभी सम्मिलित हों.

उस समय हमारे मनमें विचार आया कि ग्रामीण जनता बहुत ही सरल और भोली होती है. उन्हें कोई उपदेश देनेवाला नहीं अतः उनके मनमें जो आता है वही कर बैठते हैं. यदि कोई निष्कपट भावसे उन्हें उपदेश देवे तो उस उपदेशका महान् आदर करते हैं और उपदेशदाताको परमात्मातुल्य मानते हैं. कहनेका तात्पर्य यह है कि विद्वान् ग्रामोंमें जाकर वहांके निवासियोंकी प्रवृत्तिको निर्मल बनानेकी चेष्टा करें.

बड़गांव के एक कुटुम्ब का उद्धार—

एक दिन मैंने बाबा गोकुलचन्द्रजीसे कहा—'महाराज! बड़गांवके आसपास बहुतसे गोलालारोंके घर अपनी जातिसे बाह्य हैं यदि आपका विहार उस क्षेत्रमें हो जाय तो उनका उद्धार सहज ही हो जाय. मै आपकी सेवा करनेके लिये साथ चलूंगा.' बाबाजीने स्वीकार किया हम लोग बड़गांव पहुँचे. सागर से पं० मूलचन्द्रजी, कटनी से पं० बाबूलालजी, रीठीसे श्री सिं० लक्ष्मणलालजी तथा रैपुरासे लश्करिया आदि बहुतसे सज्जन गण भी आ पहुँचे. रघुनाथ नारायणदास मोदीसे हम लोगोंने कहा कि सायंकाल पञ्चायत बुलानेका आयोजन करो. उन्होंने वैसाही किया, रात्रिके आठ बजे सब लोग एकत्र होगये. मैंने कहा—'इस ग्राममें जो सबसे वृद्ध हो उसे भी बुलाओ.' रघुनाथ मोदी स्वयं गये और एक लोधीको जिसकी अवस्था अस्सी वर्षके लगभग होगी साथ ले आये. मैंने ग्रामके पञ्चोंसे निवेदन किया कि—'आज रघुनाथ मोदी जैनकुलमें जन्म लेकर भी पचास वर्षसे जातिबाह्य हैं और सब धर्म कार्योंसे वञ्चित रहते हैं अतः इन का उद्धार कर आप लोग यशोभागी हूजिये.

श्रीमान् प्यारेलालजी सिंघई, जो इस प्रान्तके मुख्य पञ्च थे, बोले—'आप लोग हमको भ्रष्ट करनेके लिये आये हैं? जिन कुटुम्बों को आप मिलाना चाहते हैं उनकी जातिका पता नहीं. इसके अनन्तर सब पञ्चोंमें कानाफूँसी होने लगी तथा कई पञ्च उठने लगे. मैंने कहा—'महानुभावो! ऐसी उतावली करना उत्तम नहीं, निर्णय कीजिये. इसके बाद मैंने उस अस्सी वर्षके वृद्धसे कहा कि बाबा आपको तो सब कुछ पता होगा.. कृपाकर कहिये कि क्या बात है?

वृद्ध बोला—'मै कहता हूं परन्तु आप लोग परस्परके वैमनस्य

में उस तत्त्वका अनादर न कर देना. रघुनाथ मोदीके पिता ने एक बार जाति भोज किया था उसमें कई ग्रामके लोग एकत्र हुए थे. पंगतके बाद इनके पिताने पञ्च लोगोंसे यह भावना प्रकट की कि यहां यदि मन्दिर बन जावे तो अच्छा हो. चन्दा लिखना प्रारम्भ हुआ. सबसे अच्छी रकम रघुनाथ मोदीके पिता ने लिखायी. एक ग्रामीण मनुष्यने चन्दा नहीं लिखाया उसपर इनके पिता बोले—'खानेको तो शूर हैं पर चन्दा देनेमें आना-कानी. इस पर पञ्च लोग कुपित होकर उठने लगे, जैसे-तैसे अन्तमें यह पञ्चायत हुई कि चूंकि रघुनाथके पिताने एक गरीब की तौहीन की अतः दो सौ रुपया मन्दिरको और एक पक्का भोजन पञ्चों को देवें नहीं तो जातिमें इन्हें न बुलाया जावे. इन्होंने न दण्ड दिया न पंगत ही. यह विचार करते रहे कि हमारा कोई क्या कर सकता है ? अन्तमें फल यह हुआ कि उन्हें कोई भी बिरादरीमें नहीं बुलाता. श्री सिं० प्यारेलालजीने जो कहा है वह ठीक नहीं है क्योंकि उनकी आयु चालिस वर्षकी ही है और मैं जो कह रहा हूँ उसे पचास वर्ष हो गये हैं. सबको वृद्ध बाबाकी कथामें सत्यताका परिचय हुआ अन्तमें यह तय किया कि रघुनाथ मोदी को मिला लिया जावे.

हम मनमें बहुत हर्षित हुए. अब पञ्चोंने मिलकर यह फैसला किया कि दो सौ पचास रुपया परवार सभाको, दो सौ पचास गोलापूर्व सभाको दो सौ पचास गोलालारे सभाको दो सौ पचास नैनागिरि क्षेत्रको, दस हजार विद्यालयको तथा दो पंगत यदि रघुनाथ मोदी स्वीकार करें तो उन्हें जातिमें मिला लिया जावे, इस फैसलेको सुनकर रघुनाथ मोदी और उनके भाई नारा-यणदासजी मोदी पुलकित वदन हो गये. उन्होंने उसी समय ग्यारह हजार लाकर पञ्चोंके समक्ष रख दिये. पञ्चोंने मिलकर रघुनाथ मोदीको सब कुटुम्बके गले लगाया और आज्ञा दी कि

प्रातःकाल ही सहभोज हो. इस पञ्चायतमें प्रातःकाल हो गया. दस बजेके बाद पंगतका बुलौआ हुआ पञ्च लोग आ गये, सानन्द पक्का भोजन परोसा गया. सब भोजन करने लगे बीचमें रघुनाथदासको भी शामिल कर लिया. इस तरह पञ्च लोगोंने पचास वर्षसे च्युत एक कुटुम्बका उद्धार कर दिया.

यह सब कार्य समाप्त होनेके बाद मैं श्रीयुत बाबाजीके साथ कुण्डलपुर चला गया. उनका आदेश था कि—जैनधर्म आत्मा का कल्याण करनेमें एक ही है अतः जहाँ तक तुमसे बन सके निष्कपट भावसे इसका पालन करना और यथाशक्ति इसका प्रचार करना. तुम्हारे साथ जो बाबा भागीरथजी हैं वह एक रत्न हैं, निरपेक्ष निर्लोभ व सत्यवक्ता हैं, उनका साथ न छोड़ना तथा जिस चिरोंजाबाईने तुम्हें पुत्रवत् पाला है उसकी अन्त समय तक सेवा करना. कृतज्ञता ही मनुष्यता की जननी है. हम यही आशीर्वाद देते हैं कि तुम सुमार्गके भागी होओ. मैं प्रणाम कर सागर चला गया और आनन्दसे जीवन बिताने लगा.

२३

मोराजी के विशाल प्राङ्गण में

श्री समैया जवाहरलालजी जो कि चैत्यालयके प्रबन्धक थे और जिनकी कृपासे सत्तर्क-सुधा-तरङ्गिणी पाठशालाको चमेली चौकमें विशाल भवन मिला था, न जाने उनके मनमें क्या विचार आया, मुझे बुलाकर कहने लगे, या तो पन्द्रह दिनमें मकान खाली करो या किरायानामा लिख दो. बड़ी असमञ्जसमें पड़ गये, श्री रज्जोलाल सिघई बोले कि श्री स्वर्गीय ढाकनलालजी

का मकान जो कि घटिया के मन्दिरसे लगा हुआ है उसमें पाठशाला ले चलो. चार दिनमें मकान दुरुस्त हो गया और पाठशाला उसमें आ भी गई, परन्तु उसमें कई कष्ट थे. यदि एक हजार रुपया मरम्मतमें लगा दिये जावें तो सब कष्ट दूर हो जावें पर रुपये कहांसे आवें ?

श्री बट्टे दाऊ उसी वक्त हमारे साथ पाठशालामें आये और जहां श्री ढाकनलाल सिंघई के बैठनेका स्थान था एक कुदारी मंगाकर वहां आपने खोदा तो तीन सौ रुपये मिल गये. वहीं पर उन्होंने एक भीत खोदी जिससे सातसौ रुपये और मिल गये. इस तरह एक हजार रुपये में अनायास ही पाठशाला के योग्य मकान बन गया और आनन्द पूर्वक बालक पढ़ने लगे,

मेरे हृदयमें यह बात सदा शल्यकी तरह चुभती रहती थी कि इस प्रान्तमें यह एक ही तो पाठशाला है पर उसके पास निजका मकान तक नहीं, वह अपने थोड़े ही कालमें तीन मकानों में रह चुकी. 'आज यहां कल वहां' इस दरिद्रों जैसी दशामें यह पाठशाला किस प्रकार चल सकेगी ?

श्री ढाकनलाल सिंघईके मकानमें भी विद्यालयके उपयुक्त स्थान नहीं था किसी तरह गुजर ही होती थी. श्री बिहारीलाल जी मोदी और सिंघई रज्जीलालजी मन्दिर के मुहतमिम थे. उन्होंने एक दिन मुझसे कहा—कि यदि विद्यालयको पुष्कल जमीन चाहते हो तो श्री मोराजीकी जगह, जिसमें कि एक अपूर्व दरवाजा है जो आज पचीस हजारमें न बनेगा तथा मधुर जलसे भरे हुए दो कूप हैं पाठशालाके संचालकोंको दे सकते है. श्रीमान कड़ोरीमल्लजी पाठशालाके मन्त्री थे, मकान लेकर तीन मासमें आपने तैयार कर दिया और पाठशाला श्री ढाकनलालजीके मकानसे मोराजी भवनमें आगई. यहां आनेपर सब व्यवस्था ठीक हो गई. यह बात आश्विन सुदी ६ सं० १६८० की है.

चालू सहायता से जो आता था वह खर्च होता जाता था अतः मूलधनकी व्यग्रता निरन्तर रहा करती थी. कुछ भी हो परन्तु जब मैं मोराजीके विशाल प्राङ्गणमें बहुतसे छात्रोंको आनन्दसे एक साथ खेलते कूदते और विद्याध्ययन करते देखता था तब मेरा हृदय हर्षातिरेकसे भर जाता था.

२४

सागर में कलशोत्सव

संवत् १९७२ की बात है, सागरमें श्री टीकाराम प्यारेलाल जी मलैयाके यहां कलशोत्सवका आयोजन हुआ. उसमें पण्डितोंके बुलानेका भार मेरे ऊपर छोड़ा गया. मैंने भी सब पण्डितोंके बुलाने की व्यवस्था की जिसके फलस्वरूप श्रीमान् निखिल विद्यावारिधि पण्डित अम्बादासजी शास्त्रीभी, जो कि हिन्दू विश्वविद्यालय बनारसमें संस्कृतके प्रिन्सपाल थे—इस उत्सवमें सम्मिलित हुए. आपका शानदार स्वागत हुआ उसी समय आयोजित आम सभामें जैन धर्मके अनेकान्तवादपर आप का मार्मिक भाषण हुआ जिसे श्रवण कर अच्छे अच्छे विद्वान् लोग मुग्ध हो गये. आपने सिद्ध किया कि—

'पदार्थ नित्यानित्यात्मक है अन्यथा संसार और मोक्षकी व्यवस्था नही बन सकती क्योंकि सर्वथा नित्य माननेमें परिणाम नहीं बनेगा, यदि परिणाम मानोगे तो नित्य माननेमें विरोध आवेगा श्री समन्तभद्र स्वामीने लिखा है—

'नित्यत्वैकान्तपक्षेऽपि विक्रिया नोपपद्यते,
प्रागेव कारकाभावः क्व प्रमाणं क्व तत्फलम्.'

यह सिद्धान्त निर्विवाद है कि पदार्थ चाहे नित्य मानो चाहे अनित्य किसी न किसी रूप से रहेगा ही. यदि नित्य है तो किस अवस्था में है ? यहां दो ही विकल्प हो सकते हैं या तो शुद्ध स्वरूप होगा या अशुद्ध स्वरूप होगा. यदि शुद्ध है तो सर्वदा शुद्ध ही रहेगा क्योंकि सर्वथा नित्य माना है और इस दशामें संसार प्रक्रिया न बनेगी. यदि अशुद्ध है तो सर्वथा संसार ही रहेगा और ऐसा माननेसे संसार एवं मोक्षकी जो प्रक्रिया मानी है उसका लोप हो जावेगा अतः सर्वथा नित्य मानना अनुभवके प्रतिकूल है.

यदि सर्वथा अनित्य है ऐसा माना जाय तो जो प्रथम समय में है वह दूसरेमें न रहेगा और तब पुण्य पाप तथा उसके फल का सवथा लोप हो जावेगा. कल्पना कीजिये किसी आत्माने किसीके मारनेका अभिप्राय किया वह क्षणिक होनेसे नष्ट हो गया अन्यने हिंसा की, क्षणिक होनेके कारण हिंसा करनेवाला भी नष्ट हो गया बन्ध अन्यको होगा, क्षणिक होनेसे बन्धक आत्मा नष्ट हो गया फलका भोक्ता अन्य ही हुआ. इस प्रकार यह क्षणिकत्वकी कल्पना श्रेष्ठ नहीं, प्रत्यक्ष विरोध आता है. अतः केवल अनित्यकी कल्पना सत्य नहीं. जैसा कि कहा भी है—

'परिणामिनोऽप्यभावात्क्षणिकम् प रणाममात्रमिति वस्तु,
तस्यामिह परलोको न स्यात्कारणमथापि कार्यं वा.'

जैसे पदार्थ नित्यानित्यात्मक है वैसे ही तत् अतत्, सत असत और एकानेक रूप भी है. जैसे एक आत्मा द्रव्य लीजिये, वह तत् भी है अतत भी है, एक भी है अनेक भी है, सत् भी है असत् भी है तथा नित्य भी है अनित्य भी है. यहां पर आपाततः प्रत्येक मनुष्यको यह शङ्का हो सकती है कि इस प्रकार परस्पर विरोधी धर्म एक स्थान पर कैसे रह सकते हैं और इसीसे वेदान्तसूत्रमें व्यासजीने एक स्थानपर लिखा है— 'नैकस्मिन्नसंभवात्'

अर्थात्—एक पदार्थमें परस्पर विरुद्ध नित्यानित्यत्वाद नहीं रह सकते. परन्तु जैनाचार्योंने स्याद्वाद सिद्धान्तसे इन परस्पर विरोधी धर्मोंका एक स्थानमें भी रहना सिद्ध किया है और वह युक्तियुक्त भी है क्योंकि वह विरोधी धर्म विभिन्न अपेक्षाओंसे एक वस्तुमें रहते हैं न कि एक ही अपेक्षासे. देवदत्त पिता है और पुत्र भी है परन्तु एक की ही अपेक्षा उक्त दोनों रूप देवदत्तमें सिद्ध नहीं हो सकते. वह अपने पुत्रकी अपेक्षा पिता है और अपने पिताकी अपेक्षा पुत्र भी है. इसी प्रकार सामान्यकी अपेक्षा पदार्थ नित्य है—उत्पाद और विनाशसे रहित है तथा विशेषकी अपेक्षा अनित्य है—उत्पाद और विनाशसे युक्त है. सामान्यकी अपेक्षा पदार्थ एक है परन्तु अपनी पर्यायोंकी अपेक्षा वही पदार्थ अनेक हो जाता है. जैसे सामान्य जलत्वकी अपेक्षासे जल एक है परन्तु तत्तत्पर्यायोंकी अपेक्षा वही जल, तरङ्ग बबूला, हिम आदि अनेक रूप होता देखा जाता है. जैनाचार्योंने स्याद्वाद सिद्धान्तसे उक्त धर्मोंका अच्छा समन्वय किया है देखिये—

'स्याद्वादो हि सकलवस्तुतत्त्वसाधकमेवमेकमस्खलितं साधनमर्हद्वस्य स तु सर्वमनेकान्तमनुशास्ति सर्वस्य वस्तुनोऽनेकान्तात्मकत्वात. अत्र त्वात्मवस्तुनो ज्ञानमात्रतयानुशास्यमानेऽपि न तत्परिदोषः ज्ञानमात्रस्यात्मवस्तुनः स्वयमेवानेकान्तात्मकत्वात. तत्र यदेव तत् तदेवातत्, यदेवैकं तदेवानेकम्, यदेव सत् तदेवासत् यदेव नित्य तदेवानित्यमित्येकवस्तुवस्तुत्वनिष्पादकपरस्पर विरुद्धशक्तिद्वयप्रकाशनमनेकान्तः

अर्थात्—'स्याद्वाद ही एक समस्त वस्तुका साधनेवाला निर्बाध अर्हन्त भगवानका शासन है और वह समस्त पदार्थोंका अनेकान्तात्मक अनुशासन करता है क्योंकि सकल पदार्थ अनेक धर्मस्वरूप हैं. इस अनेकान्तके द्वारा जो पदार्थ अनेक धर्मस्वरूप कहे जाते हैं वह असत्य कल्पना नहीं है बल्कि वस्तु स्वरूप ही ऐसा है. यहां पर जो आत्मा नामक वस्तुको ज्ञानमात्र कहा है

उसमें स्याद्वादका विरोध नहीं है. ज्ञानमात्र जो आत्मवस्तु है वह स्वयमेव अनेकान्तात्मक है.

'अनेकान्तका ऐसा स्वरूप है कि जो वस्तु तत्स्वरूप है वही वस्तु अतत्स्वरूप भी है, जो वस्तु एक है वही अनेक भी है, जो पदार्थ सत्स्वरूप है, वही पदार्थ असत्स्वरूप भी है तथा जो पदार्थ नित्य है वही अनित्य भी है. इसप्रकार एक ही वस्तुमें वस्तुत्वको प्रतिपादन करनेवाला एवं परस्पर विरुद्ध शक्तिद्वयको प्रकाशित करनेवाला अनेकान्त है.'

शास्त्रीजीका उपरोक्त सारगर्भित व्याख्यान सुनकर सबने प्रशंसा की. मैंने जनताके समक्ष पाठशालाका विवरण सुनाया और साथ ही कहा कि धनके बिना पाठशालाकी बहुत ही अवनत अवस्था हो रही है. यदि आप लोगोंकी दृष्टि इस ओर न गई तो सम्भव है कि एक या दो वर्ष ही पाठशाला चल सकेगी. यदि अपील व्यर्थ गई तो आप ही की हानि है और सफल हुई तो आप ही का लाभ है. उपस्थित जनताने दिल खोलकर चन्दा लिखवाया और पन्द्रह मिनटके अन्दर पन्द्रह हजार रुपयोंका चन्दा हो गया. सागरके प्रान्तभरने यथाशक्ति उसमें दान दिया पश्चात् सभा विसर्जित हुई. बाहरसे जो विद्वान् व धनाढ्य आये थे सब अपने-अपने घर चले गये. मैं दूसरे ही दिनसे चन्दाकी वसूलीमें लग गया और यहांका चन्दा वसूल कर देहातमें भ्रमणके लिये निकल पड़ा.

एक मास तक देहातमें भ्रमण करता रहा. इसी भ्रमणमें गढ़ाकोटा पहुँचा. यहां पर श्री पन्नालालजी बैशाखिया बड़े धार्मिक पुरुष थे. आपके दस हजार रुपये का परिग्रह था. आपके कपड़ेका व्यापार था आपका नियम था कि एक दिनमें पचास रुपये का ही कपड़ा बेचना अधिकका नहीं और एक रुपये पर एक आना मुनाफा लेना अधिक नहीं. अन्तमें

आपका मरण समाधिपूर्वक हुआ. आपकी धर्मपत्नी मुलाबाई सागर आकर बाईजीके पास रहने तथा विद्याभ्यासकरने लगी. उसे नाटक समयसार कण्ठस्थ था. वह बाईजीको माता और मुझे भाई मानने लगी. चन्दा वसूलकर मैं सागर आगया. इस प्रकार सागर पाठशालाके ध्रौव्यफण्डमें छब्बीस हजार के लगभग रुपया हो गया, श्री सिंघई कुन्दनलालजी के पिता कारेलालजी ने अपने स्वर्गवासके समय तीन हजार रुपये दिये.

२५

सागर विद्यालयके परम सहायक

श्री सिंघई रतनलालजी—

इतने में ही श्री सिंघई रतनलालजी साहब जो कि बहुत ही होनहार और प्रभावशाली व्यक्ति थे तथा पाठशालाके कोषाध्यक्ष थे, एकदम ज्वरसे पीड़ित होगये. आपने बाईजीको बुलाया और कहा—बाईजी ! मै अब परलोककी यात्रा कर रहा हूँ, मुझे चिन्ता केवल इस बात की है कि इस प्रान्तमें दैवयोगसे यह एक विद्यालय हुआ है परन्तु उसमें यथेष्ठ द्रव्य नहीं, परन्तु अब व्यर्थकी चिन्तासे क्या लाभ ? मैं दस हजार रुपये विद्यादानमें देता हूँ.' बाईजीने कहा—'भैया ! यही मनुष्य पर्यायका सार है.' आध घंटा बाद रतनलालजी का स्वर्गवास हो गया. आपके शवके साथ हजारों आदमियों का समूह था.

दानवीर श्री कमरया रज्जीलालजी—

कमरया रज्जीलालजीने पाठशालाके सदस्योंसे मंजूरी लेकर

पाठशालाका भवन बनवाना प्रारम्भ कर दिया और अहर्निश परिश्रमकर पचास छात्रोंके योग्य भवन तथा एक रसोई घर बनवा दिया साथमें सौ रुपया मासिक भी देने लगे. कुछ दिन बाद आप बोले कि हम पाठशालाके लिये एक भवन और बनवाना चाहते हैं. मैंने कहा—'बहुत अच्छा.' आपने सदस्योंसे मंजूरी ली और पहलेसे भी अच्छा भवन बनवा दिया. दोनों 'भवनों के बीच में एक बड़ा हाथी दरवाजा बनवाया जिसमें बराबर हाथी जा सकता है. दरवाजेके ऊपर चन्द्रप्रभ चैत्यालय बनवा दिया जिसमें छात्र प्रतिदिन दर्शन पूजन स्वाध्याय करते हैं. आपके अपूर्व त्यागसे मोराजीका वह बीहड़ स्थान जहाँ से रात्रिके समय निकलनेमें लोग भयका अनुभव करते थे बहुत अल्प कालमें सागरका एक दर्शनीय स्थान बन गया. एक छोटी सी पहाड़ीकी उपत्यिकामें सड़कके किनारे चूनासे पुते हुए धवल उत्तुङ्ग भवन जब चांदनी रातमें चन्द्रमाकी उज्वल किरणों का सम्पर्क पाकर और भी अधिक सफेदी छोड़ने लगते हैं तब ऐसा लगता है मानों यह कमरया रज्जीलालजीकी अमर निर्मल कीर्तिका पिण्ड ही हो. जब आपका स्वर्गवास होने लगा तब १०००० रुपया विद्यालयको तथा ६००० रुपया दोनों मन्दिरोंको आपने दिये. आप योग्य नर-रत्न थे.

जैन जातिभूषण श्री सिंघई कुन्दनलालजी—

सिंघई कुन्दनलालजी सागरके सर्वश्रेष्ठ सहृदय व्यक्ति हैं. आपका हृदय दयासे सदा परिपूर्ण रहता है. जबतक आप सामने आये हुए दुःखी मनुष्यको शक्त्यनुसार कुछ दे न लें तब तक आपको संतोष नहीं होता. न जाने आपने कितने दुःखी परिवारोंको धन देकर, अन्न देकर, वस्त्र देकर, और पंजी देकर सुखी बनाया है. आप कितने ही अनाथ छोटे-छोटे बालकोंको

जहां कहींसे ले आते हैं और अपने खर्चसे पाठशालामें पढ़ाकर उन्हें सिलसिलेसे लगा देते हैं. आप प्रतिदिन पूजन स्वाध्याय करते हैं, अतिशय भद्र परिणामी हैं. प्रारम्भसे ही पाठशालाके सभापति होते आरहे हैं और आपका वरद हस्त सदा पाठशाला के ऊपर रहता है. एकदिन आप बाईजीके यहां बैठे थे मैंने कहा—'देखो, सागर इतना बड़ा शहर हैं परन्तु यहां पर कोई जैन धर्मशाला नहीं है. उन्होंने कहा—'हो जावेगी.' दूसरेही दिन श्री कुन्दनलालजी घीवालोंने जो आपके साले थे, कटराके नुक्कड़ पर बैरिस्टर बिहारीलालजी रायके सामने एक मकान ३४०० रुपयामें ले लिया और बादमें इतना ही रुपया उसके बनानेमें लगा दिया. आजकल वह पच्चीस हजार रुपये की लागतका है और सिंघई जी की धर्मशाला के नामसे प्रसिद्ध है, हम उसी में रहने लगे.

एक दिन सिंघईजी पाठशालामें आये, मैंने कहा यहां और तो सब सुभीता है परन्तु सरस्वती भवन नहीं है. विद्यालयकी शोभा सरस्वती मन्दिरके बिना नहीं. कहनेकी देर थी कि आपने मोराजी के उत्तरकी श्रेणीमें एक विशाल सरस्वती भवन बनवा दिया. जयधवल तथा धवल दोनों ग्रन्थराज दोहजार रुपयेमें मँगा दिये. सरस्वती भवनके उद्घाटनके पहले दिन प्रतिमाजी विराजमान करनेका मुहूर्त हो गया दूसरे दिन सरस्वती भवनके उद्घाटन का अवसर आया. मैंने दो अलमारी पुस्तकें सरस्वती भवनके लिये भेंट कीं. उद्घाटन सागरके प्रसिद्ध वकील स्वर्गीय श्री रामकृष्ण रावके द्वारा हुआ. यह सरस्वती भवन सुन्दर रूपसे चलता है लगभग पांच हजार पुस्तकें इसमें होंगी.

कुछ दिन हुए सागर में भी हरिजन आन्दोलन प्रारम्भ हो गया. मन्दिरों में सबको दर्शन मिलना चाहिये क्यों कि भगवान् पतित पावन हैं अतः मैंने सिंघईजी से कहा—'आप एक मानस्तम्भ बनवा दो जिसमें ऊपर चार मूर्तियां स्थापित

होगी हर कोई आनन्द से दर्शन कर सकेगा.' सिंघईजी के उदार हृदयमें वह बात आ गई, दूसरे ही दिनसे भैयालाल मिस्त्रीकी देख रेखमें मानस्तम्भ का कार्य प्रारम्भ हो गया और तीन मासमें बनकर तैयार हो गया. पं० मोतीलालजी वर्णी द्वारा समारोह से प्रतिष्ठा हुई. उत्तुङ्ग मानस्तम्भ को देखकर समवशरण के दृश्यकी याद आ जाती है. सागरमें प्रतिवर्ष महावीर जयन्ती के दिन मानस्तम्भ तथा प्रतिमाओं का अभिषेक होता है जिसमें समस्त जैन नर-नारियोंका जमाव होता है. इस प्रकार सिंघई कुन्दनलालजी के द्वारा सतत-धार्मिक कार्य होते रहते हैं, ऐसा परोपकारी जीव चिरायु हो.

एक महिला का विवेक—

सागरमें मन्त्री पूर्णचन्द्रजी बहुत बुद्धिमान विवेकी हैं उनके मित्र श्री पन्नालालजी बड़कुर थे. दैवयोगसे श्री पन्नालालजी का स्वास्थ्य खराबहोने लगा. एक दिन उनकी धर्मपत्नीने मुझे घर बुलवा कर कहा—'वर्णीजी ! मेरे पतिकी अवस्था शोचनीय है अतः इन्हें सावधान करना चाहिये साथ ही इनसे दान भी कराना चाहिये. इसके बाद मैंने पन्नालालजी से कहा कि आपकी धर्मपत्नीकी सम्मति है अतः आप को कितना दान देना इष्ट है ? उन्होंने हाथ उठाया. औरतने कहा कि हाथमें पांच अंगुलियां होती हैं अतः पांच हजार रुपया का दान हमारे पतिको इष्ट है. चूंकि उनका प्रेम सदा विद्यादानमें रहता था अतः यह रुपया संस्कृत विद्यालयको ही देना चाहिये और मन्त्री पूर्णचन्द्रजी से कहा कि आप आज ही दुकानमें विद्यालयके जमा कर लो तथा मेरे नाम लिख दो. अब इन्हें समाधिमरण सुनाने का अवसर है वह स्वयं सुनाने लगी और पन्द्रह मिनट बाद श्री पन्नालालजी बड़कुरका शान्तिसे समाधिमरण हो गया.

२६

द्रोणगिरि प्रांत में

द्रोणगिरि—

द्रोणगिरि सिद्ध क्षेत्र बुन्देलखण्ड के तीर्थ क्षेत्रोंमें सबसे अधिक रमणीय है. हरा भरा पर्वत और समीप ही बहती हुई युगल नदियाँ देखते ही बनती हैं. पर्वत अनेक कन्दराओं और निर्झरों से सुशोभित है. श्री गुरुदत्त आदि मुनिराजोंने अपने पवित्र पाद-रजसे इसके कण कणको पवित्र किया है. यह उनका मुक्तिस्थान होनेसे निर्वाणक्षेत्र कहलाता है. यहाँ आनेसे मनमें अपने आप असीम शान्तिका संचार होने लगता है. यहां ग्राममें एक ओर ऊपर पर्वतपर सत्ताईस अन्य जिन मन्दिर हैं. ग्रामके मन्दिर में श्री ऋषभदेव स्वामी की शुभ्रकाय विशाल प्रतिमा है पर निरन्तर अधेरा रहनेसे उसमें चमगीदड़ें रहने लगीं जिससे दुर्गन्ध आती रहती थी.

मैंने एक दिन सिंघईजी से कहा—'द्रोणगिरि क्षेत्र के गाँवके मन्दिरमें चमगीदड़ें रहती हैं जिससे बड़ी अविनय होती है यदि देशी पत्थरकी एक वेदी बन जावे और प्रकाशके लिये खिड़कियाँ रख दी जावें तो बहुत अच्छा हो. सिंघईजीके विशाल हृदयमें यह बातभी समा गई. अत: हम से बोले कि 'अपनी इच्छाके अनुसार बनवा लो.' मैं स्वयं वेदी और कारीगर को लेकर द्रोणगिरि गया तथा मन्दिरमें यथास्थान वेदी लगवा दी.

यहां एक बात विशेष यह हुई कि जहाँ हम लोग ठहरे थे, वहाँ दरवाजेमें मधु मक्खियोंने छाता लगा लिया जिससे आने जानेमें असुविधा होने लगी. मालियोंने विचार किया कि जब सब सो जावें तब धूम कर दिया जावे जिससे मधु मक्खियाँ उड़

जावेंगी. ऐसा करनेसे सहस्रों मक्खियाँ मर जातीं, अतः हम श्री जिनेन्द्रदेवके पास प्रार्थना करने लगे कि "हे प्रभो! आपकी मूर्तिके लिए ही वेदी बन रही है. यदि यह उपद्रव रहा तो हम लोग प्रातःकाल चले जावेंगे. हम तो आपके सिद्धान्तके ऊपर विश्वास रखते हैं परजीवोंको पीड़ा पहुँचाकर धर्म नहीं चाहते. आपके ज्ञानमें जो आया है वही होगा. संभव है यह विघ्न टल जावे, इस प्रकार प्रार्थना करके सो गये. प्रातःकाल उठनेके बाद क्या देखते हैं कि वहाँ पर एक भी मधु मक्खी नहीं है. फिर क्या था? पन्द्रह दिनमें वेदिका जड़ गई. पश्चात् पण्डित मोतीलालजी वर्णीके द्वारा नवीन वेदिकामें विधिवत् श्री जी विराजमान हो गये.

द्रोणगिरि क्षेत्रपर पाठशालाकी स्थापना—

जब द्रोणगिरि आया तब पाठशालाके लिए प्रयास किया. घुवारा में जलबिहार था वहाँ जानेका अवसर मिला. मैंने वहाँ एकत्रित हुए लोगों को समझाया कि—

'देखो, यह प्रान्त विद्यामें बहुत पीछे है. आप लोग जलबिहार में सैकड़ों रुपये खर्च कर देते हो कुछ विद्यादानमें भी खर्च करो. यदि द्रोणगिरिमें एक पाठशाला हो जावे तो अनायास ही इस प्रान्तके बालक जैनधर्मके विद्वान् हो जावेंगे.'

बात तो सबको जँच गई पर रुपया कहाँसे आवे? किसीने कहा—'अच्छा चन्दा कर लो.' चन्दा हुआ परन्तु बड़ा परिश्रम करने पर भी पचास रुपया मासिकका चन्दा हो सका. घुवारासे गञ्ज गये वहाँ दो सौ पचास रुपयाके लगभग चन्दा हुआ. सिंघई कुन्दनलाल जी सागर वालों ने इसके लिए सौ रुपये वर्ष देना स्वीकृत किया. बैशाख बदि ७ सं० १९८५ में पाठशाला स्थापित कर दी. पं० गोरेलालजीको बीस रुपया पर रख लिया, चार पांच छात्रभी आगये और कार्य चलने लगा.

एक वर्ष बीतनेके बाद हम लोग फिर आये. पाठशालाका वार्षिकोत्व हुआ. पं० जीके कार्यसे प्रसन्न होकर इस वर्ष सिंघई जी ने बड़े आनन्दसे पाँच हजार रुपया देना स्वीकृत कर लिया, सिंघई वृन्दावनदासजीने एक सरस्वती भवन बनवा दिया, कई आदमियोंने छात्रोंके रहनेके लिए छात्रालय बना दिया. एक कूप भी छात्रावासमें बन गया. छात्रोंकी संख्या २० हो गई और पाठशाला अच्छी तरह चलने लगी. इस पाठशालाका नाम श्री गुरुदत्त दि० जैन पाठशाला रखा गया.

दया ही मानवका प्रमुख कर्त्तव्य—

एक दिन सागर में शौचादिसे निवृत्त होने के लिये गाँवके बाहर गया था. वहाँ एक औरत के पैरमें कांटा लग गया था, पर वह पैरको न छूने देती थी. कहती थी कि 'मैं जाति की कोरिन तथा स्त्री हूँ आप लोग पण्डित हैं कैसे पैर छूने दूं ?' मैंने कहा—'बेटी ! यह आपत्तिकाल है, इस समय पैर छुवानेमें कोई हानि नही.' परन्तु उस औरतने पैर छुवाना स्वीकार न किया. तब कुछ छात्रोंने उसके हाथ पकड़ लिए और कुछने पैर, मैंने संडसीमें कांटा दबा कर ज्यों ही खींचा त्यों ही एक अंगुलका कांटा बाहर आ गया साथ ही खूनकी धारा बहने लगी. मैंने पानी ढोलकर तथा धोती फाड़कर पट्टी बाँध दी उसे मूर्छा आ गई पश्चात् जब मूर्छा शान्तहुई तब लकड़ीकी मोरी उठानेकी चेष्टा करने लगी वह लकड़हारी थी जङ्गलसे लकड़ियां लाई थी. मैंने कहा तुम धीरे धीरे चलो हम तुम्हारी लकड़ियाँ तुम्हारे घर पहुँचा देवेंगे. बड़ी कठिनता से वह तैयार हुई. हम लोगोंने उसका बोझ सिरपर रखकर उसके मोहल्लामें पहुँचा दिया. लिखने का तात्पर्य यह है कि मनुष्यको सर्वसाधारण दयाका उद्योग करना चाहिये. क्योंकि दयाही मानवका प्रमुख कर्त्तव्य है.

२७

खतौलीमें कुंदकुंद विद्यालय

एक बार बरुवासागरसे खतौली गया. यहां पर श्रीमान् भागीरथजी भी, जो मेरे परम हितैषी बन्धु एवं प्राणीमात्रकी मोक्षमार्गमें प्रवृत्ति करानेवाले थे, मिल गये. यहीं पर श्री दीपचन्द्रजी वर्णी भी थे. उनके साथ भी मेरा परम स्नेह था. हम तीनोंकी परस्पर घनिष्ट मित्रता थी. एक दिन तीनों मित्र गङ्गा की नहर पर भ्रमणके लिये गये. वहीं पर सामायिक करनेके बाद यह विचार करने लगे कि यहां एक ऐसे विद्यालयकी स्थापना होनी चाहिये जिससे इस प्रान्तमें संस्कृत विद्या का प्रचार हो सके.

एक दिन मैंने खतौलीमें विद्यालय स्थापित करनेकी चर्चा कुछ लोगोंके समक्ष की, तब लाला विश्वम्भरदासजी बोले कि आप चिन्ता न करिये, शास्त्रसभामें इसका प्रसङ्ग लाइये बातकी बातमें पांच हजार रुपया हो जावेंगे. दूसरे दिन मैंने शास्त्र सभामें कहा—'आज कल पाश्चात्य विद्याकी ओर ही लोगों की दृष्टि है और जो आत्म कल्याणकी साधक संस्कृत-प्राकृत विद्या है उस ओर किसीका लक्ष्य नहीं. अतः प्राचीन विद्याकी ओर लक्ष्य देना चाहिये.' उपस्थित जनताने यह प्रस्ताव स्वीकृत कर लिया जिससे दस मिनटमें ही पांच हजार रुपयोंका चन्दा लिखा गया और यह निश्चय हुआ कि एक संस्कृत विद्यालय खोला जावे जिसका नाम कुन्दकुन्द विद्यालय हो. दो दिन बाद विद्यालयका मुहूर्त होना निश्चित हुआ. एक बिल्डिंग भी विद्यालयको मिल गई. पश्चात् वहांसे चलकर हम सागर आगये. विद्यालयकी स्थापना सन् १९२५ में हुई. यह विद्यालय अब कालेजके रूपमें परिणत हो गया है. जिसमें लगभग छह सौ छात्र अध्ययन करते हैं और तीस अध्यापक हैं.

२८

तीर्थ यात्रा

श्रीगोम्मटेश्वर यात्रा—

संवत १९७६ की बात है—अगहनका मास था सरदीका प्रकोप वृद्धिपर था. अवसर देख बाईजीने मुझसे कहा—'बेटा! एक बार जैनबद्री की यात्राके लिये चलना चाहिये. मेरे मनमें श्री १००८ गोम्मटेश्वर स्वामीकी मूर्तिके दर्शन करनेकी बड़ी उत्कण्ठा है.' उसी समय उन्होंने सात सौ रुपये सामने रख दिये. यात्राका पूर्ण विचार स्थिर हो गया सब सामग्रीकी योजना की गई और शुभ मुहूर्तमें जब मैं यात्राके लिये चलने लगा तब स्टेशन तक बहुत जनता आई और सबने नारियल भेंट किये. रात्रिके समय नासिक पहुँचे यहांसे तांगाकर श्री गजपन्था जी पहुँच गये. सात बलभद्र और आठ करोड़ मुनि जहांसे मुक्ति को प्राप्त हुए उस पर्वतको देखकर चित्तमें बहुत प्रसन्नता हुई. यहांसे चलकर पूना आये, शहरमें गये और पूजनादि करने के बाद भोजन कर बेलगांव चले गये. यहां पर दो दिन रहे, किला देखने गये, उसमें कई जिन मन्दिर हैं जिनकी कला कुशलता देखकर शिल्प विद्याके निष्णात विद्वानोंका स्मरण हो आता है. आजकल पत्थरोंमें ऐसा बारीक काम करनेवाले शायद ही मिलेंगे. यहां पर कई चैत्यालयों में ताम्रकी मूर्तियाँ देखनेमें आईं. यहां से चलकर आरसीकेरी आये और वहांसे चलकर मन्दगिरि नदीके ऊपर बालूका चबूतरा बनाकर श्री जिनेन्द्रदेवका पूजन किया. भोजन करनेके बाद चार बजे श्री जैनबद्री पहुँच गये. प्रातःकाल स्नानादि कार्यसे निवृत्त हो कर श्री गोम्मटस्वामीकी वन्दनाको चले. ज्यों-ज्यों प्रतिमाजीका दर्शन होता था त्यों-त्यों

हृदयमें आनन्दकी लहरें उठतीं थीं. जब पासमें पहुँच गये तब आनन्दका पारावार न रहा. बड़ी भक्तिसे पूजन किया. जो आनन्द आया वह वर्णनातीत है. प्रतिमाकी मनोज्ञताका वर्णन करनेके लिये हमारे पास सामग्री नहीं परन्तु हृदयमें जो उत्साह हुआ वह हम ही जानते हैं. कहनेमें असमर्थ हैं इसके बाद नीचे चतुर्विंशति तीर्थङ्करों की मूर्त्तियोंके दर्शन कर श्रीभट्टारकजीके मन्दिरमें गये.

यहांका वर्णन श्रवणबेलगोलाके इतिहाससे आप जान सकते हैं. यहां पर मनुष्य बहुत ही सज्जन हैं. यहां पर चार दिन रहकर मूडबद्रीके लिये प्रस्थान कर दिया. मार्गमें अरण्यकी शोभा देखते हुए श्री कारकल पहुँचे. कारकल क्षेत्र बहुत ही रम्य और मनोरम है. हम लोग श्री गोम्मटस्वामीकी प्रतिमाके जो कि खड्गासन हैं, दर्शन करनेके लिये गये, बहुत ही मनोज्ञ मूर्ति है. तीस फुट ऊँची होगी. मनमें यही भाव आता था कि हे प्रभो ! भारतवर्षमें एक समय वह था जब कि ऐसी-ऐसी भव्य मूर्तियोंकी प्रतिष्ठा होती थी. यहीं पर मठके सामने छोटी-सी टेकरी पर एक विशाल मन्दिर है जिसमें वेदीके चारों तरफ सुन्दर-सुन्दर मनोहारी बिम्ब हैं. इसके अनन्तर एक मन्दिर सरोवर में है उसके दर्शन के लिये गये. बादमें श्री नेमिनाथ स्वामी की श्याममूर्तिके दर्शन किये. अनन्तर और भी अनेक मन्दिरोंके दर्शन किये. यहीं पर एक विशाल मानस्तम्भ है. मूडबद्री पहुँचे, यहांके मन्दिरों की शोभा अवर्णनीय है. रत्नमयी बिम्बोंके दर्शन किये. ऐसा सुन्दर दृश्य देखनेमें आता है कि मानों स्वर्गका चैत्यालय हो. यहीं पर ताड़पत्रों पर लिखे गये सिद्धान्त शास्त्रोंके दर्शन किये. एलोराकी गुफा देखनेके लिये दौलताबाद चले आये. वहांके मन्दिरके दर्शन कर प्रथम तो कैलाश गुफाको देखा. उसके बीचमें एक मन्दिर और चारों ओर चार बरामदा. तीन बरामदा इतने बड़े कि जिनमें प्रत्येक

में पांच सौ आदमी आ सकें. चतुर्थ बरामदेमें सम्पूर्ण देवताओं की मूर्तियां थीं. बीचमें एक बड़ा आंगन था, आंगनमें एक शिवजीका मन्दिर था जो कि एक ही पत्थरमें खुदा हुआ है. यहांसे श्री पार्श्वनाथ गुफा देखने गये. मूर्तियोंकी रचना अपूर्व है. इसके बाद बौद्ध गुफा देखने गये यह भी अपूर्व गुफा थी. मूर्तिका मुख देखकर मुझे तो जैन बिम्बका ही निश्चय हो गया. यहां पर पचासों गुफाएँ हैं जो एक से एक बढ़ कर हैं. ये गुफाएँ हैदराबाद राज्यमें हैं, राज्यके द्वारा यहांका प्रबन्ध अच्छा है. सब गुफाएँ सुरक्षित हैं.

यहांसे आकर दौलताबादका किला देखा. वह भी दर्शनीय वस्तु है मीलों लम्बी सुरङ्ग हैं. किला देखकर हम लोग फिर रेल के द्वारा स्टेशन आ गये और वहांसे गाड़ीमें बैठकर गिरि-नारकी यात्राके लिये चल दिये.

श्री गिरिनार यात्रा—

गिरिनारजी पहुँचने पर शहरकी धर्मशालामें ठहर गये. श्री नेमिनाथ स्वामीके दर्शन कर मार्ग प्रयासको भूल गये. बादमें तलहटी पहुँचे और वहांसे श्री गिरिनार पर्वत पर गये. पर्वत पर श्री नेमिनाथ स्वामीका दर्शन कर गद्गद् हो गये. पर्वतके ऊपर नाना प्रकारके पुष्पोंकी बहार थी. कुन्द जातिके पुष्प बहुत ही सुन्दर थे. दिगम्बर मन्दिरके दर्शनकर श्वेताम्बर मन्दिरमें गये. दिगम्बरोंका मन्दिर रमणीक है और श्री नेमि-नाथ स्वामीकी मूर्ति भी अत्यन्त मनोज्ञ है. यहांसे चलकर श्री नेमिनाथ स्वामीके निर्वाणस्थानको जो कि पञ्चम टोंक पर है चल दिये. थोड़े समय में पहुँच गये उस स्थान पर एक छोटी सी मढ़िया बनी हुई है. कोई तो इसे आदमबाबा मानकर पूजते हैं, कोई दत्तात्रय मानकर उपासना करते हैं और जैनी लोग श्री

नेमिनाथजी मानकर उपासना करते हैं. अन्तिम माननेवालोंमें हम लोग थे. हमने तथा कमलापति सेठ, बाईजी और मुलाबाई आदिने आनन्दसे श्री नेमिनाथ स्वामीकी भावपूर्वक पूजा की इसके बाद आध घण्टा वहां ठहरे, स्थान रम्य था परन्तु दस बज गये थे अतः अधिक नहीं ठहर सके. यहांसे चलकर एक घण्टा बाद शेषावन (सहस्राम्रवन) में आ गये. यहां की शोभा अवर्णनीय है. सघन आम्र वन है. उपयोग विशुद्धता के लिये एकान्त स्थान है एक घण्टा बाद पर्वतके नीचे जो धर्मशाला है उसमें आगये और भोजनादिसे निश्चिन्त हो सो गये.

यहाँ दो दिन रहकर पश्चात् बड़ौदाके लिये प्रयाण किया. यहांसे चलकर आबूरोड पर आये और यहांसे मोटरमें बैठकर पहाड़के ऊपर गये. पहाड़के ऊपर जानेका मार्ग सर्पकी चालके समान लहराता हुआ घुमावदार है. ऊपर जाकर दिगम्बर मन्दिरमें ठहर गये. बहुत ही भव्य मूर्ति है यहां पर श्वेताम्बरोंके मन्दिर बहुत ही मनोज्ञ हैं उन्हें देखनेसे ही उनकी कारीगरीका परिचय हो सकता है. कहते हैं कि उस समय उन मन्दिरोंके निर्माणमें सोलह करोड़ रुपये लगे थे परन्तु वर्तमानमें तो अरबमें भी वैसी सुन्दरता आना कठिन है. इन मन्दिरोंके मध्य एक छोटा-सा मन्दिर दिगम्बरों का भी है. यहांसे छः मील दूरी पर एक दैलवाड़ा है जहां एक पहाड़ी पर श्वेताम्बरोंके विशाल मन्दिरमें ऐसी भी प्रतिमा है जिसमें बहुभाग स्वर्णका है. एक सरोवर भी है जिसके तटपर सङ्गमर्मरकी ऐसी गाय बनी हुई है जो दूरसे गायके सदृश ही प्रतीत होती है. यहां पर दो दिन रहकर पश्चात् अजमेर जयपुर आगरा आये और यहांसे सीधे सागर चले आये. सागर की जनताने बहुत ही शिष्टताका व्यवहार किया. कोई सौ नारियल भेंटमें आये. यह सब होकर भी चित्तमें शान्ति न आई.

पुनः गिरिनार यात्रा—

सन् १६२१ की बात है अहमदाबादमें कांग्रेस थी, पं० मुन्नालालजी और राजधरलालजी बरया आदिने कहा कि कांग्रेस देखनेके लिये चलिये.' मैंने कहा—'मैं क्या करूंगा?' उन्होंने कहा—'बड़-बड़े नेता आवेंगे अतः उनके दर्शन सहज ही हो जावेंगे, उन महानुभावोंके व्याख्यान सुननेको मिलेंगे और सब से बड़ा लाभ यह होगा कि श्रीगिरिनार सिद्धक्षेत्रकी वन्दना अनायास हो जावेगी.' मैं श्रीगिरिनारजी की यात्राके लोभसे कांग्रेस देखनेके लिये चला गया पर अहमदाबादमें वेगसे ज्वर आगया, जिससे उस दिन कांग्रेसकाअधिवेशन नहीं देख सका.

दूसरे दिन कांग्रेस का अधिवेशन देखनेके लिये गया. वहांका प्रबन्ध सराहनीय था, क्या होता था कुछ समझमें नहीं आया किन्तु वहां पेपरोंमें सब समाचार आनुपुर्वी मिल जाते थे. जिन लोगोंका इस भारतवर्षपर जन्मसिद्ध अधिकार है वे तो असंघटित होने से दास बन रहे हैं और जिनका कोई स्वत्व नहीं वे यहांके प्रभु बन रहे हैं. जब तक इस देशमें परस्पर मनोमालिन्य और अविश्वास रहेगा तब तक इस देशकी दशा सुधरना कठिन है.

हम लोग कांग्रेस देखकर श्री गिरिनारजी की यात्राके लिये अहमदाबादसे प्रस्थानकर स्टेशनपर गये और जूनागढ़का टिकिट लेकर ज्यों ही रेलमें बैठे त्योंही मुझे ज्वरने आ सताया बहुत बेचैनी हो गई. हम लोग प्रातःकाल जूनागढ़ पहुँच गये. स्टेशनसे धर्मशालामें गये, प्रातःकाल की सामायिकादिसे निश्चिन्त होकर मन्दिर गये और श्री नेमिनाथ स्वामीके दर्शन कर तृप्त हो गये.

प्रभुका जीवन चरित्र स्मरण कर हृदयमें एकदम स्फूर्ति आ गई और मनमें आया कि हे प्रभो! ऐसा दिन कब आवेगा जब

हम लोग आपके पथका अनुकरण कर सकेंगे, मध्याह्नकी सामायिक कर गिरिनार पर्वतकी तलहटी मैं चले गये. प्रातःकाल तीन बजेसे वन्दनाके लिये चले और छः बजते बजते पर्वत पर पहुँच गये. वहाँ पर श्री नेमिप्रभुके मन्दिर में सामायिकादि कर पूजन विधान किया, मूर्ति बहुत ही सुभग तथा चित्ताकर्षक है,

गिरिनार पर्वत समधरातलसे बहुत ऊँचा है बड़ी बड़ी चट्टानों के बीच सीढ़ियाँ लगाकर मार्ग सुगम बनाया गया है कितनी ही चोटियाँ तो इतनी ऊँची है कि उनसे मेघ मण्डल नीचे रह जाता है और ऊपरसे नीचेकी ओर देखनेपर ऐसा लगता है मानो मेघ नहीं समुद्र भरा है. कभी कभी वायु का आघात पाकर काले काले मेघोंकी टुकड़ियां पाससे ही निकल जाती हैं जिससे ऐसा मालूम देता है मानों भक्तजनोंके पाप पुञ्ज ही भगवद्भक्ति रूपी छेनीसे छिन्न भिन्न होकर इधर उधर उड़ रहे हों. ऊपर अनन्त आकाश और चारों ओर क्षितिज पर्यन्त फैली हुई वृक्षोंकी हरीतिमा देखकर मन मोहित हो जाता है. यह वही गिरिनार है जिसकी उत्तुङ्ग चोटियोंसे कोटि कोटि मुनियोंने निर्वाणधाम प्राप्त किया है. यह वही गिरिनार है जिसकी कन्दराओंमें राजुल जैसी सती आर्याओंने घनघोर तपश्चरण किया है. यह वही गिरिनार है जहाँ कृष्ण और बलभद्र जैसे यदुपुङ्गव भगवान नेमिनाथकी समवसरण सभामें बड़ी नम्रता के साथ उनके पवित्र उपदेश श्रवण करते थे. यह वही गिरिनार है जिसकी गुहामें आसीन होकर श्रीधरसेन आचार्यने पुष्पदन्त और भूतबलि आचार्यको षट्खण्डागम का पारायण कराया था.

वहाँसे चलकर पञ्चम टोंक पर पहुँचे, वहाँ जो पूजाका स्थान है. वह स्थान अत्यन्त पवित्र और वैराग्यका कारण है. वहाँ से चलकर बीचमें एक वैष्णव मन्दिर मिलता है जिसमें साधु लोग रहते हैं, पचासों गाय आदि का परिग्रह उनके पास है, श्री राम

के उपासक हैं. वहाँसे चलकर सहस्राम्र वन में आये जो पहाड़ से नीचे तलमें है जहाँ सहस्रों आम्रके वृक्ष हैं, बहुत ही रम्य और एकान्त स्थान है. यहाँसे चलकर अहमदाबाद होते हुए बड़ौदा तथा उज्जैन भोपाल होता हुए सागर आ गए.

नैनागिरि—

नैनागिरि अत्यन्त रम्य क्षेत्र है. वहाँ गये तो एक दिन की बात है सब लोग नैनागिरिमें धर्म चर्चा कर रहे थे. मैंना सुन्दरी आदिकी कथा भी प्रकरणमें आ गई. एक बोला—'वर्णीजी का पुण्य अच्छा है वे जो चाहें हो सकता है.'

एक बोला—'इनगप्पोंमें क्या रक्खा है ? इनका पुण्य अच्छा है यह तो तब जानें जब इन्हें आज भोजनमें अंगूर मिल जावें.'

नैनागिरिमें अंगूर मिलना कितनी कठिन बात है ? मैंने कहा—'मैं तो पुण्यशाली नहीं परन्तु पुण्यात्मा जीवोंको सर्वत्र सब वस्तुएँ सुलभ रहती हैं.' एक बोला—'अच्छा, इसमें क्या रक्खा है ? सबलोग भोजनको चलो, पुण्यकी परीक्षा फिर होगी.'

हँसते हँसते सब लोग भोजनके लिए बैठे ही थे कि इतनेमें दिल्लीसे अयोध्याप्रसादजी दलाल सागर होते हुए नैनागिरि आ पहुँचे और आते ही कहने लगे—'वर्णीजी ! भोजन तो नहीं कर लिये मैं ताजा अंगूर लाया हूँ.' सब हँसने लगे, उस दिनके भोजनमें सबसे पहला भोजन उन्हींके अंगूरका हुआ. यह घटना देखकर सबको बड़ा आश्चर्य हुआ.

पपौरा—

पचहत्तर जिनालयों से सुशोभित यह अतिशय क्षेत्र है. यहीं पर स्वर्गीय श्री मोतीलालजी वर्णीने अथक परिश्रम कर एक वीरविद्यालय स्थापित किया था. इस प्रान्तमें ऐसे विद्यालयकी

महती आवश्यकता थी. श्री वर्णीजीने अपना सर्वस्व विद्यालय को दे दिया, आपका जो सरस्वती भवन था वह भी आपने विद्यालयको प्रदान कर दिया. इन्हें जितना धन्यवाद दिया जावे थोड़ा है, मैं तो आपको अपना बड़ा भाई मानता था. आपका मेरे ऊपर पुत्रवत् स्नेह रहता था.

प्रारम्भमें वीर विद्यालयके सुयोग्य मन्त्री श्रीमान् पं० ठाकुर दास बी० ए० थे. आप सरकारी स्कूलमें काम करते हुए भी निरन्तर विद्यालयकी रक्षामें व्यस्त रहते थे. इस समय विद्यालय के मन्त्री श्री खुन्नीलालजी भदौरावाले हैं आप भी बहुत सुयोग्य व्यक्ति हैं. जिस प्रकार विद्यालय वर्णी मोतीलालजीके समक्ष चलता, था उसी प्रकार चला रहे हैं.

अहार—

पपौरा क्षेत्रसे दस मील पूर्वमें अहार अतिशय क्षेत्र है यहां पर श्री शान्तिनाथ स्वामीकी अत्यन्त मनोहर प्रतिमा है जिसकी शिल्पकलाको देखकर आश्चर्य होता है. यहां पर भूगर्भमें सहस्रों मूर्तियां हैं जो भूमि खोदने पर मिलती हैं किन्तु हम लोग उस ओर दृष्टि नहीं देते. यहां आस पास जैन महाशय अच्छी संख्यामें निवास करते हैं. श्री पं० बारेलालजी वैद्यराज क्षेत्रके प्रबन्धक हैं आप बहुत सुयोग्य और उत्साही कार्यकर्ता हैं परन्तु द्रव्यकी पूर्ण सहायता न होनेसे शनैः शनैः कार्य होता है. यहां पर एक छोटीसी धर्मशाला भी है, मन्दिरसे आधा फर्लाङ्ग पर अहार नामका ग्राम है तथा एक बड़ा भारी सरोवर है. मैंने यहां पर क्षेत्रकी उन्नतिके लिये एक छोटे विद्यालयकी आवश्यकता समझी, लोगोंसे कहा, लोगोंने उत्साहके साथ चन्दा देकर श्री शान्तिनाथ विद्यालय स्थापित कर दिया. एक छात्रालय भी साथमें है परन्तु धनकी त्रुटिसे विशेष उन्नति नहीं कर सका.

२६

रूढियोंकी राजधानी

बुंदेलखंड ऐसा प्रान्त है जहां ज्ञानके साधन नहीं. कठिनतासे दस प्रतिशत साधारण नागरी जाननेवाले मिलेंगे. यही कारण है कि यहांके मनुष्य बहुत सी रूढ़ियोंसे संत्रस्त है. मैं प्राय: दो वर्ष तक पैदल भ्रमणकर उन रूढ़ियोंके मिटानेका प्रयत्न करता रहा फिर भी निःशेष नहीं कर सका. वहां की रूढ़ियोंके उदाहरण देखिये—एक विलक्षण न्याय सुननेमें आया. 'एक दिगौडा गांव है, वही दिगौड़ा जहां कि पं० देवीदासजीका जन्म हुआ था. यहां पर एक जैनी महाशयका घोड़ा चरनेके लिये गांवके बाहर गया. वहीं पर एक दूसरे जैनी महाशयका घोड़ा चरता था जो पहले घोड़ेकी अपेक्षा दुर्बल था, दैवयोगसे उन दोनोंमें परस्पर लड़ाई हो गई. बलिष्ठ घोड़ेने दुर्बल घोड़ेको इतने जोरसे लात मारी कि उसका प्राणान्त हो गया. लोग चिल्लाते हुए आये कि अमुकके घोड़ेने अमुकके घोड़ेको इतने जोरसे लात मारी कि वह मर गया. जिसका घोड़ा मर गया था वह रोने लगा क्योंकि उसीके द्वारा उसकी आजीविका चलती थी. उसने शामको ग्रामके पञ्चोंसे प्रार्थना की कि अमुकके घोड़ेने हमारा घोड़ा मार दिया. पञ्चायत हुई और यह फैसला हुआ कि जिसका घोड़ा दुर्बल था उसको आज्ञा दी गई कि तुमने इतना दुर्बल घोड़ा क्यों रक्खा जो कि घोड़ेकी टापसे ही मर गया अत: तुम्हारा मन्दिर बन्द किया जाता है. तुम सिद्ध क्षेत्रकी वन्दना करो पश्चात् एक मास बाद गांवके पञ्चोंको एक दिन पक्का और एक दिन कच्चा भोजन कराओ तथा ग्यारह रुपया मन्दिरको दो. जिसके घोड़ाने मारा था उससे कहा गया कि तुम्हें भी दो मास तक मन्दिर बन्द किया जाता है पश्चात् एक पक्की और

एक कच्ची पंगत गांवके पञ्चोंको दो, पन्द्रह रुपया मन्दिरको दो और जिसका घोड़ा मर गया है उसे एक साधारण घोड़ा ले दो.' इस प्रकार इस प्रान्त में ऐसे अनेक निरपराधों को सताया जाता था जिसका कारण अविद्या ही थी. यदि इस प्रान्त को रूढ़ियोंकी राजधानी कहें तो अत्युक्ति न होगी.

३०

प्रभावना

हजारों दरिद्रोंको भोजन देना, अनाथों को वस्त्र देना, प्रत्येक ऋतुके अनुकूल व्यवस्था करना, अन्न क्षेत्र खुलवाना, गर्मीके दिनोंमें पानी पीनेका प्रबन्ध करना, आजीविका विहीन मनुष्यों को आजीविकासे लगाना, शुद्ध औषधियोंकी व्यवस्था करना, स्थान-स्थानपर ऋतुओंके अनुकूल धर्मशालाएँ बनवाना और लोगोंका अज्ञान दूरकर उनमें सम्यग्ज्ञानका प्रचार करना. आज ऐसी प्रभावना की अत्यन्त आवश्यकता है. भारतवर्षमें करोड़ों आदमी देवीको बलिदान देकर धर्म मानते हैं. जहां देवीकी मूर्ति होती है वहां दशहराके दिन सहस्रों बकरोंकी बलि हो जाती है रुधिरके पनाले बहने लगते हैं हजारों महिषोंका प्राणघात हो जाता है यह प्रथा नेपालमें है. कलकत्तामें भी कालीजी के सम्मुख बड़े-बड़े विद्वान् लोग इस कृत्यके करनेमें धर्म समझते हैं. उन्हें जहां तक बने सन्मार्गका उपदेश देकर सन्मार्गकी प्रभावना करना महान् धर्म है परन्तु हमारी दृष्टि उस ओर नहीं जाती. अन्यकी कथा छोड़िये देहातमें जिन जैन लोगोंका निवास है उन्हें जैनधर्मके परिचय करानेका कोई साधन नहीं है.

सबसे महान् तीर्थ गिरिराज सम्मेदाचल है जहांसे अनन्तानन्त प्राणी मोक्षलाभ कर चुके जिस समय श्रीशान्तिसागर महाराज का वहां शुभागमन हुआ था उस समय वहां एक लाखसे भी अधिक जनताका जमाव हुआ था. लाखों ही रुपये मोटरकार तथा बैलगाड़ियोंमें गये, परन्तु क्या उस समय दस लाखकी पूंजीसे एक ऐसी संस्थाका खोला जाना दुर्लभ था जिसमें कि उस प्रान्तके भीलोंके हजारों बालक जैनधर्मकी शिक्षा पाते, हजारों गरीबोंके लिये औषधिका प्रबन्ध होता और हजारों मनुष्य आजीविका का साधन प्राप्त करते ?

वास्तवमें धर्म प्रभावना आचरणसे होती है. यदि हमारी प्रवृत्ति परोपकार रूप है तो लोग अनायास ही हमारे धर्मकी प्रसंसा करेंगे और यदि हमारी प्रवृत्ति तथा आचार मलिन है तो किसीकी श्रद्धा हमारे धर्ममें नहीं हो सकती. यही कारण है कि अमृतचन्द्र सूरिने पुरुषार्थसिद्धयुपाय में लिखा है—

> 'आत्मा प्रभावनीयो रत्नत्रयतेजसा सततमेव,
> दानतपोजिनपूजाविद्यातिशयैश्च जिनधर्मः.'

निरन्तर ही रत्नत्रय रूप तेजके द्वारा आत्मा की प्रभावना करनेके योग्य है. तथा दान तप जिन पूजा विद्याभ्यास आदि चमत्कारोंसे जिनधर्मकी प्रभावना करनी चाहिये. प्रभावना अङ्गकी महिमा अपरम्पार है परन्तु हम लोग उस पर लक्ष्य नहीं देते. एक मेलेमें लाखों रुपया व्यय कर देवेंगे पर यह न होगा कि ऐसा कार्य करें जिससे सर्वसाधारण लाभ उठा सकें.

बहुतसे ऐसे महानुभाव हैं कि जिनके सजातीय बन्धु तो आजीविका विहीन होकर इतस्ततः भ्रमण कर रहे हैं पर वे हजारों रुपये प्रतिष्ठा आदिमें व्यय कर रहे हैं और खूबीकी बात

यह है कि सजातीय बन्धुओंकी अवस्थाके सुधारमें एक पैसा देनेमें भी उदारताका परिचय नहीं देते. क्या यह प्रभावना है ?

आज कल संसारमें अधिकतर मनुष्य बेकार हो गये हैं उन्हें यथायोग्य कार्यमें लगा देना ही उचित है, द्रव्यका सदुपयोग यही है कि दुखी प्राणियों की रक्षामें लगाया जावे. भोजन ऐसा करो जो अभक्ष्य न हो, दानशाला खोलो परन्तु उनमें शुद्ध भोजनादिकी व्यवस्था हो, औषधालय खोलो परन्तु औषधिकी व्यवस्था करो, विद्यालय खोलो परन्तु उनमें स्वपर भेद ज्ञानकी शिक्षाके मुख्य साधन जुटाओ, मन्दिर बनवाओ परन्तु उनमें ऐसी प्रतिमा पधरावो कि जिसे देखकर प्राणीमात्रको शान्ति आजावे. मेरी निजी सम्मति तो यह है कि एक ऐसा मन्दिर बनवाना चाहिये कि जिसमें सब मत वालोंकी सुन्दरसे सुन्दर मूर्तियाँ और उनके ऊपर सङ्गमरमरमें उनका इतिहास लिखा रहे. जैसे कि दुर्गाकी मूर्तिके साथ दुर्गा सप्तशती. इसी प्रकार प्रत्येक देवताकी मूर्तिके साथमें सङ्गमरमरके विशाल पटिये पर उसका इतिहास रहे. इन सबके अन्तमें श्री आदिनाथ स्वामीकी मूर्ति अपने इतिहासके साथमें रहे और अन्तमें एक सिद्ध भगवानकी मूर्ति रहे. इसके बाद सर्वमतके साधुओंकी मूर्तियाँ तथा उनका इतिहास और अन्तमें साधु उपाध्याय आचार्यकी मूर्तियाँ एवं उनका इतिहास रहे. मन्दिरके साथमें एक बड़ा भारी पुस्तकालय हो जिसमें सर्व आगमोंका समूह हो प्रत्येक मत वालोंको उसमें पढ़ने का सुभीता रहे. हर एक विभागमें निष्णात विद्वान रहें जो कि अपने मतकी मार्मिक स्थिति सामने रख सकें.

३१

परवारसभामें विधवाविवाहकी चर्चा

अबतक सागर पाठशालाकी व्यवस्था अच्छी हो गई थी, छात्र गण मनोयोग पूर्वक अध्ययन करते लगे थे. बहुतसे उत्तमोत्तम विद्वान यहाँ से निकलकर जैनधर्मकी सेवा कर रहे थे.

यहाँ चार मास रहकर मै फिर काशी चला गया क्योंकि मेरा जो विद्याध्ययनका लक्ष्य था वह छूट चुका था और उसका मूल कारण इतस्ततः भ्रमण ही था. आठ मास बनारस रहा इतनेमें बीना (बारहा) का मेला आ गया वहीं पर परवारसभा का अधिवेशन था. अधिवेशनके सभापति बाबू पंचमलालजी तहसीलदार थे और स्वागताध्यक्ष श्री सिंघई हजारीलालजी महाराजपुर वाले थे. मेरे पास महाराजपुरसे तार आया कि आप मेला में अवश्य आइये यहाँ पर जो परवार सभा होने वाली है उसमें विधवा विवाहका प्रस्ताव होगा, मुझे वहाँ जानेका निश्चय करना पड़ा. जब मै बनारससे सागर पहुँचा तब पाठशालामें श्रीयुत ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी उपस्थित थे. मैंने कहा—'ब्रह्मचारी जी ! आप ऐसे महापुरुष होकर भी विधवा विवाहके पोषक हो गये. आप जैसे मर्मज्ञको यह उचित था ?' यह देश भोला है यहाँ तो ऐसा प्रचार करो कि जिससे सहस्रों बालक साक्षर हो जावें. अभी आपकी बातका समय नहीं, क्यों कि लोगोंके हृदयमें आप जिस पापकी प्रवृत्ति कराना चाहते हैं अभी उसकी वासना तक नहीं है. ब्रह्मचारीजी बोले—'तुमने देश काल पर ध्यान नहीं दिया. वैधव्य होनेका दुःख वही जानती है जो विधवा होजाती है. विषय सुखकी लालसासे सत्तर वर्ष तककी अवस्थामें भी लोग विवाह करनेसे नहीं चूकते और समाजमें ऐसे ऐसे मूढ़ लोग भी हैं जो धनके लालच से कन्याको

बेच देते हैं. फिर जब वह वृद्ध मर जाता है तब उस बेचारी विधवाकी जो दशा होती है वह समाजसे छिपी नहीं. अनेक विधवाएँ गर्भपात करती हैं और अनेक विधर्मियोंके घर चली जाती हैं, एतदपेक्षा यदि विधवा विवाह कर दिया जावे तब कौन सी हानि है ?' मैं बोला—'हानि जो है सो प्रकट है, जिन जैनियों में इसकी प्रथा हो गई है उनकी दशा देखनेसे तरस आता है. इसके प्रचारसे जो अनर्थ होंगे उनका अनुमान जिनमें विधवा विवाह होता है उनके व्यवहारसे कर सकते हो.

इतनी चर्चा होनेके बाद हम बाईजीके यहां आये और रात्रि के ७ बजते बजते वहाँ पहुँच गये. मध्यान्ह के समय विधवा विवाह पोषक व्याख्यान हुए. दूसरे दिन आमसभा हुई, जनता की सम्मति विधवा विवाह के निषेध पक्षमें थी. केवल ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजीका विधिपक्षमें व्याख्यान हुआ. मुझे भी बोलना पड़ा, लोग शान्तिसे भाषण सुनते रहे. अन्तमें वर्षाके कारण सभा भङ्गहो गई. रात्रिको सात बजे मण्डपमें जनता एकत्रित हो गई, और ब्रह्मचारीजी के बहिष्कार का प्रताव पासकर डाला.

विधवा विवाहके पोषकोंको यह कषाय हो गई कि जब मनुष्य को अपनी इच्छानुसार अनेक विवाह करने पर रुकावट नहीं तो विधवा को दूसरा विवाह करने पर क्यों रोक लगाई जावे ? आखिर उसे भी अधिकार है. दुःख केवल इस बातका है कि लोग इस विषयमें सिद्धान्त वाक्यकी अवहेलना कर देते हैं. सिद्धान्तमें तो कन्यासम्वरणको ही विवाहका लक्षण लिखा है. यहांसे चलकर हम सागर आ गये. इसके बाद सागर में एक सभा हुई जिसमें नाना प्रकार के विवाद होनेके अनन्तर यह तय हुआ कि जो विधवा विवाहमें भाग ले उसके साथ सम्पर्क न रक्खा जावे.

३२
अबला नहीं सबला

सागरसे, गौरझामरमें पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठा थी वहां गया. रात्रिके समय एक युवती श्री मन्दिरजी के दर्शनके लिये जा रही थी. मार्गमें एक सिपाहीने उसके उरस्थलमें मजाकसे एक कंकड़ मार दिया फिर क्या था अबला सबला हो गई—उस युवती ने उसके सिरका साफा उतार दिया और लपककर तीन चार थप्पड़ उसके गालमें इतने जोरसे मारे कि गाल लाल हो गया. लोगोंने पूछा कि बाईजी ! क्या बात है ? वह बोली–इस दुष्टने जो पुलिसकी वर्दी पहने है और रक्षा का भार अपने सिर लिये है मेरे उरस्थल में कंकड़ मार दिया. इस पामरको लज्जा नहीं आती जो हम अबलाओं के ऊपर ऐसा अनाचार करता है. इतना कहकर वह उस सिपाही से पुनः बोली—'रे नराधम ! प्रतिज्ञा कर कि मैं अब कभी भी किसी स्त्रीके साथ ऐसा व्यवहार न करूंगा अन्यथा मैं स्वयं तेरे दरोगाके पास चलती हूँ और वह न सुनेंगे तो सागर कप्तान साहब के पास जाऊँगी.'

वह विवेक शून्यसा हो गया बड़ी देरमें साहसकर बोला—'बेटी ! मुझसे महान अपराध हुआ क्षमा करो, अब भविष्यमें ऐसी हरकत न होगी. खेद है कि मुझे आज तक ऐसी शिक्षा नहीं मिली. युवतीने उसे क्षमा कर दिया और कहा—'पिता जी ! मेरी थप्पड़ोंका खेद न करना, मेरी थप्पड़ें तुम्हें शिक्षकका काम कर गईं. अब मैं मन्दिर जाती हूँ आप भी अपनी ड्यूटी अदा करें" वह मण्डपमें पहुँची और उपस्थित जनताके समक्ष खड़ी होकर कहने लगी—'माताओ ! और बहिनो आज दोपहर को मैंने शीलवती स्त्रियोंके चरित्र सुने उससे मेरी आत्मामें वह बात पैदा हो गई कि मैं भी तो स्त्री हूँ. यदि अपनी शक्ति

उपयोगमें लाऊं तो जो काम प्राचीन माताओंने किये उन्हें मैं भी कर सकती हूँ. यही भाव मेरे रग-रगमें समा गया उसीका नमूना है कि एकने मेरेसे मजाक किया, मैंने उसे जो थप्पड़ें दीं वही जानता होगा और उससे यह प्रतिज्ञा करवा कर आई हूँ कि 'बेटी ! अब ऐसा असद्व्यवहार न करूंगा.'

प्रकृत बात यह है कि हमारी समाज इस विषयमें बहुत पीछे है. हमारी समाजमें माता पिता यदि धनी हुए तो कन्याको गहनोंसे लाद कर खिलौना बना देते हैं. विवाहमें हजारों खर्च कर देवेंगे परन्तु योग्य लड़की बने इसमें एक पैसा भी खर्च नहीं करेंगे. सबसे जघन्य कार्य तो यह है कि हमारे नवयुवक और युवतियोंने विषय सेवनको दाल रोटी समझ रक्खा है. इनके विषय सेवनका कोई नियम नहीं है, ये न धर्म पर्वोंको मानते है और न धर्मशास्त्रोंके नियमोंको. कहते हुए लज्जा आती है कि एक बालक तो दूध पी रहा है, एक स्त्री के उदर में है और एक बगलमें बैठा चें-चें कर रहा है. फल इसका देखो कि सैकड़ों नर नारी तपेदिकके शिकार हो रहे हैं, अतः यदि जातिका अस्तित्व सुरक्षित रखना चाहते हो तो मेरी बहिनो ! इस बातकी प्रतिज्ञा करो कि हमारे पेटमें बच्चा आनेके समयसे लेकर जब तक वह तीन वर्षका न होगा तब तक ब्रह्मचर्य व्रत पालेंगी और यही नियम पुरुष वर्गको लेना चाहिये. यदि इसको हास्यमें उड़ा दोगे तो याद रक्खो तुम हास्यके पात्र ही रहोगे. साथ ही यह भी प्रतिज्ञा करो कि अष्टमी, चतुर्दशी, अष्टाह्निका पर्व, सोलहकारण पर्व तथा दशलक्षण पर्वमें ब्रह्मचर्य व्रतका पालन करेंगी, विशेष कुछ नहीं कहना चाहती.' उसका व्याख्यान सुन कर सब समाज चकित रह गई. बाबा भागीरथजीने दीपचन्द्रजी वर्णी से कहा कि यह अबला नहीं सबला है.

३३

शाहपुरमें विद्यालय

शाहपुरमें पञ्चकल्याणक थे, प्रतिष्ठाचार्य श्रीमान् पं० मोतीलालजी वर्णी थे. देवाधिदेव श्री जिनेन्द्रदेव का पाण्डुक शिला पर अभिषेक के बाद यथोचित शृङ्गारादि किया जा चुका तब मैंने जनतासे अपील की. परन्तु चन्दा लिखानेका श्री गणेश नहीं हुआ. सब लोग यथास्थान चले गये. मुझे अन्तरङ्ग में महती व्यथा हुई कि लोग बाह्य कार्योंमें तो कितनी उदारताके साथ व्यय करते हैं परन्तु सम्यग्ज्ञानके प्रचारमें पैसा का नाम आते ही इधर उधर देखने लगते हैं. अन्तमें जब पञ्च कल्याणक करनेवालेको तिलक दानका अवसर आया तब मैंने कहा कि इन्हें सिंघई पद दिया जावे. चूंकि सिंघई पद गजरथ चलाने वालेको ही दिया जाता था अतः उपस्थित जनताने उसका घोर विरोध किया और कहा कि यदि यह मर्यादा तोड़ दी जावेगी तो सैकड़ों सिंघई हो जावेंगे. मैंने कहा कि आप लोग यह अच्छी तरह जानते हैं कि परवारसभा ने पाँच हजार रुपया देने पर सिंघई पदवीका प्रस्ताव पास किया है. इन्होंने बारह हजार रुपया तो प्रतिष्ठामें व्यय किया है और तीन हजार रुपया विद्यादानमें दे रहे हैं तथा इनके तीन हजार रुपया देनेसे ग्रामवाले भी दो हजार रुपयेकी सहायता अवश्य कर देवेंगे अतः इन्हें सिंघई पद से भूषित किया जावे. विवेकसे काम लेना चाहिये इतनेबड़े ग्राममें पाठशालाका न होना लज्जाकी बात है. उसी समय हल्कूलाल जीको पञ्चोंने सिंघई पदकी पगड़ी बांधी. इस प्रकार शाहपुरमें एक विद्यालयकी स्थापना हो गई. वहांसे सागर आगये और यथावत् धर्म-साधन करने लगे.

३४

धर्ममाता श्री चिरौंजाबाईजी

बाईजी की व्यवस्था प्रियता—

बाईजी को अव्यवस्था जरा भी पसन्द न थी. वे अपना प्रत्येक कार्य व्यवस्थित रखती थी. प्रत्येक वस्तु यथास्थान रखती थी. आपकी सदा यह आज्ञा रहती थी कि लिखा हुआ कोई भी पत्र कूड़ामें न डाला जावे तथा जहां तक हो पुस्तकों की विनय की जावे. चाहे छपी पुस्तक हो चाहे लिखी विनय पूर्वक ऊपर ही रखना चाहिये.

शान्ति प्रियता—

बाईजी की प्रकृति अत्यन्त सौम्य थी, उन्हें क्रोधकी मात्राका लेश भी न था, कैसा ही उद्दण्ड मनुष्य क्यों न आवे उनके समक्ष नम्र ही हो जाता था. बाईजी जितनी शान्त थीं उतनी ही उदार थी. मैं जहां तक जानता हूँ उनकी प्रकृति अत्यन्त उच्च थी.

उदारता—

बाईजीमें सबसे बड़ा गुण उदारता का था, जो चीज हमको भोजनमें देती थीं वही नाई, धोबी मेहतरानी आदि को देती थीं. उनसे यदि कोई कहता तो साफ उत्तर देती थीं कि महीनों बाद त्योहारके दिन ही तो इन्हें देती हूँ खराब भोजन क्यों दूं? आखिर ये भी तो मनुष्य हैं.

नियमानुकूलता—

उनके प्रत्येक कार्य नियमानुकूल होते थे. एकबार भोजन करती थीं, एक बार पानी पीती थीं. आय से व्यय कम करती

थीं. आवश्यक वस्तुओंका यथायोग्य संग्रह रखती थीं. उन्हें औषधियों का अच्छा ज्ञान था.

स्पष्टवादिता—

एक बार श्रीमान् सिंघई कुन्दनलालजीके सरस्वती भवनकी प्रतिष्ठा थी. प्रतिष्ठाचार्यने द्वारपर केलेके स्तम्भ लगवाये, आम के पत्तोंके बन्दनमाल बँधवाये और घमलोंमें यवके अँकुर निकलवाये. सिंघईजी बोले—'बाईजी! बड़ी हिंसा होती है धर्मके कार्यमें तो ऐसा नहीं होना चाहिये.'

बाईजीने हँसकर उत्तर दिया—

'भैया! जब आसौजमें गल्ला बेचते हो और उसमें टुकनियों तिरूले आदि जीव निकलते हैं तब उनका क्या करते हो? आरम्भके कार्यों में त्रस जीवोंकी रक्षा न हो और माङ्गलिक कार्यमें एकेन्द्रिय जीवकी रक्षाकी बात करो. जब तुम्हारे आरम्भ त्याग हो जावेगा तब तुम्हें मन्दिर बनानेका कोई उपदेश न करेगा. यह तुम्हारा दोष नही स्वाध्याय न करनेका ही फल है.' कहनेका तात्पर्य कि वे समयपर उचित उत्तर देनेसे न चूकती थीं.

पर दुःख संवेदन शीलता—

एक बार सागरमें प्लेग पड़ गया, हम लोग बण्डा चले गये एक दिन की बात है—एक लकड़ी बेचनेवाली आई उसकी लकड़ी चार आनेमें ठहराई. मेरे पास अठन्नी थी मैंने उसे देते हुए कहा कि चार आना वापिस दे दे. उसने कहा—'मेरे पास पैसा नहीं है.' मैंने सोचा—'कौन बाजार लेने जावे अच्छा आठ आना ही ले जा.' वह जाने लगी, उसके शरीर पर जो धोती थी वह बहुत फटी थी. मैंने उससे कहा—'ठहर जा' वह ठहर गई, मैं ऊपर गया वहां बाईजी की रोटी बनाने की धोती सूख रही थी मैं उसे लाया और वहीं पर चार सेर गेहूँ रक्खे थे उन्हें भी लेता

आया. नीचे आकर वह धोती और गेहूँ-दोनों ही मैंने उस लकड़ीवाली को दे दिये.

बाईजी मन्दिरसे आ गईं हमसे पूछने लगीं—'भैया! धोती कहां गई? मुझे कुछ हँस आया. श्री दीपचन्द्रजी वर्णीने कह दिया कि वर्णीजीने धोती और चार सेर गेहूँ लकड़ी बेचने वाली को दे दिये! बाईजी अत्यन्त प्रसन्न हुईं.

मूक प्राणी पर भी दयालुता—

सागर की ही घटना है—हम जिस धर्मशालामें रहते थे उसमें एक बिल्ली का बच्चा था उसकी मां मर गई. जब बाईजी भोजन करती थीं तब आ जाता था और जब तक बाईजी उसे दूध रोटी न दे देतीं तब तक नहीं भागता था. बाईजीसे उसका अत्यन्त परिचय हो गया. जब बाईजी बरुवासागर या कहीं अन्यत्र जाती थीं तब वह भोजन छोड़ देता था और जब तांगा पर बैठकर स्टेशन जाती थीं तब वहीं खड़ा रहता था. तांगा जानेके बाद ही वह धर्मशाला छोड़ देता था और जब बाईजी आ जाती थीं तब पुनः आ जाता था. अन्त में जब वह बीमार हुआ तब दो दिन तक उसने कुछ भी नहीं लिया और बाईजी के द्वारा नमस्कार मन्त्रका श्रवण करते हुए उसने प्राण-विसर्जन किया.

धैर्य और धर्म दृढ़ता—

हम बाईजी और वर्णी मोतीलालजी तीनों श्री सिद्धक्षेत्र सोनागिरिकी वन्दनाके लिये गये. तीसरे दिन सिमरासे आदमी आया और उसने समाचार दिया कि बाईजी आपके घरमें चोरी हो गई. सुनकर बाईजीके चेहरेपर शोकका एक भी चिह्न दृष्टिगोचर नहीं हुआ. उन्होंने कहा—जो होना था सो हो गया अब तो पांच दिन बाद ही घर जावेंगे. चोरी तो हो ही गई अब तीर्थ-

यात्रासे क्यों वञ्चित रहें ? धर्मसे संसारका बन्धन छूट जाता है फिर यह धन तो पर पदार्थ है इसकी मूर्च्छासे ही तो हमारी यह गति हो रही है. यदि आज हमारे परिग्रह न होता तो चोर क्या चुरा ले जाते ? उनका कोई दोष नहीं, परिग्रहका स्वरूप ही यह है, इसके वशीभूत होकर अच्छे-अच्छे महानुभाव चक्कर में आ जाते हैं. संसारमें सबसे प्रबल पाप परिग्रह है. बाईजी पांच दिन सानन्द तीर्थयात्रा करके ही घर गईं. पता लगा चोर आये थे, सोना छोड़ गये और पैसे वहीं बिखेर गये. सुकृत का पैसा जल्द नष्ट नहीं होता.

निष्पृहता और निर्ममता—

एक बार मैं बनारस विद्यालयके लिये बाईजीके नाम एक हजार रुपया लिखा आया पर भयके कारण बाईजीसे कहा नहीं. बाईजी मुझे आठ दिनमें तीन रुपया फल खानेके लिये देती थीं, मैं फल न खा कर उन रुपयोंको पोष्ट आफिसमें जमा कराने लगा. एक दिन बाईजीने पूछा—'भैया फल नहीं लाते ?' मैंने कह दिया—'आज कल बाजार में अच्छे फल नहीं आते.' इतनेमें ही वहां पड़ी हुई पोष्ट आफिस की पुस्तक पर उनकी दृष्टि जा पड़ी. उन्होंने पूछा—'यह कैसी पुस्तक है ?'

वहां पोस्टमैन खड़ा था, उसने कहा—'यह डाकखानेमें रुपया जमा कराने की पुस्तक है.' बाईजीने कहा—'कितने रुपये जमा हैं ?' वह बोला—'पच्चीस रुपये. बाईजी बोलीं—'हम तो फलके लिये देते थे और तुम डाकखानेमें जमा कराते हो इसका अर्थ हमारी समझमें नहीं आता.' मैंने कहा—'मैंने बनारस के लिये आपके नामसे एक हजार रुपये दिये हैं उन्हें अदा करना है.' बाईजीने कहा—'इस प्रकार कब तक अदा होंगे ?' मैं चुप रह गया.

वह कहती रहीं—कि जिसदिन दिये उसी दिन देना उचित था. दानकी रकम है वह तो ऋण है अभी जाओ और एक हजार रुपया आज ही भेज दो.' दानकी रकमको पहले दो पीछे नाम लिखाओ. दान देना उत्तम है परन्तु देते समय परिणाममें उत्साह रहे. वह उत्साह ही कल्याणका बीज है, दानमें लोभका त्याग होना चाहिये. 'स्वपरानुग्रहार्थं स्वस्याति-सर्गो दानम्,—अपना और परका अनुग्रह करनेके लिये जो धनका त्याग किया जाता है वही दान कहलाता है. यह हमारा अभिप्राय है सो तुमसे कह दिया. अब आगेके लिये हमारे पास जो कुछ है वह सब तुम्हें देती हूँ तुम्हारी जो इच्छा हो सो करो, भयसे मत करो, आजसे हमने इस द्रव्यसे ममता त्याग दी. बाईजीके इस सर्वस्व समर्पण से मेरा हृदय गद्-गद् हो गया.

शिखरजीमें व्रत ग्रहण—

प्रातःकालका समय था माघ मासमें कटरा बाजारके मन्दिर में आनन्दसे पूजन हो रहा था सब लोग प्रसन्न चित्त थे. मैंने कहा—'बाईजी ! कल कटरा से पचीस मनुष्य श्री गिरिराज जी जा रहे हैं. मेरा भी मन श्री गिरिराजजी की यात्राके लिए व्यग्र हो रहा है.' बाईजी ने कहा—'व्यग्रताकी आवश्यकता नहीं, हम भी चलेंगे, मुलाबाई भी चलेगी.'

दूसरे दिन हम सब यात्राके लिये चल दिये. सागरसे कटनी पहुँचे और वहांसे प्रातःकाल गया पहुँच गये. दो बजे की गाड़ीमें बैठकर शामको श्रीपार्श्वनाथ स्टेशन पर पहुँचे गये और गिरिराजके दूरसे ही दर्शन कर धर्मशालामें ठहर गये. प्रातःकाल श्री पार्श्वप्रभुकी पूजाकर मध्याह्न बाद मोटरमें बैठकर श्री तेरापन्थी कोठीमें जा पहुँचे. दो बजे निद्रा भङ्ग हुई पश्चात् स्नानादि क्रियासे निवृत्त होकर एक डोली मंगाई. बाईजी को

उसमें बैठाकर हम सब श्रीपार्श्वनाथ स्वामीकी जय बोलते हुए गिरिराजकी वन्दनाके लिए चल पड़े.

गन्धर्व नाला पर पहुँचकर सहर्ष सामायिक की. वहांसे चलकर सात बजे श्रीकुन्थुनाथ स्वामीकी वन्दना की. वहांसे सब टोंकोंकी यात्रा करते हुए दस बजे श्रीपार्श्वनाथ स्वामीकी टोंक पर पहुँच गये. आनन्दसे श्रीपार्श्वनाथ स्वामी और गिरराज की पूजा की, चित्त प्रसन्नतासे भर गया. बाईजी तो आनन्दमें इतनी निमग्न हुईं कि पुलकित बदन हो उठीं और गद्‌गद् स्वरमें हमसे कहने लगीं कि—'भैया ! अब हमारी पर्याय तीन माहकी है अतः तुम हमें दूसरी प्रतिमाके व्रत दो.'

मैंने कहा—'बाईजी ! मैं तो आपका बालक हूँ, आपने चालीस वर्ष मुझे बालकवत पाला. मेरे साथ आपने जो उपकार किया है उसे आजन्म नहीं विस्मरण कर सकता, आपकी सहायतासे मुझे दो अक्षरोंका बोध हुआ, आपकी शांतिसे मेरी क्रूरता चली गई और मेरी गणना मनुष्योंमें होने लगी. इत्यादि भूरिशः आपके उपकार मेरे ऊपर हैं. आप जिस निरपेक्ष वृत्तिसे व्रत को पालती हैं मैं उसे कहनेमें असमर्थ हूं. और जब कि मैं आपको गुरु मानता हूँ तब आपको व्रत दूं यह कैसे सम्भव हो सकता है ? बाईजी ने कहा—'बेटा ! मैंने जो तुम्हारा पोषण किया है वह केवल मेरे मोहका कार्य है फिर भी मेरा यह भाव था कि तुझे साक्षर देखूं. तूंने पढ़नेमें परिश्रम नहीं किया बहुतसे कार्य प्रारम्भ कर दिये परन्तु उपयोग स्थिर न किया. यदि एक काम का आरम्भ करता तो बहुत ही यश पाता. अब हम तो तीन मासमें चले जावेंगे, तुम आनन्दसे व्रत पालना. सबसे प्रेम रखना, जो तुम्हारा दुश्मन भी हो उसे मित्र समझना, निरन्तर स्वाध्याय करना, शास्त्रोंकी विनय करना, यह पञ्चम काल है कुछ द्रव्य भी निजका रखना, योग्य पात्रको दान देना, जो शक्ति

अपनी हो उसीके अनुसार त्याग करना, श्रोताओंकी योग्यता देखकर शास्त्र बांचना, विशेष क्या कहूं? जिसमें आत्माका कल्याण हो वही कार्य करना, भोजनके समय जो थालीमें आवे उसे संतोष पूर्वक खाओ कोई विकल्प न करो. व्रतकी रक्षा करनेके लिये रसना इन्द्रिय पर विजय रखना, विशेष कुछ नहीं.'

इतना कह कर बाईजीने श्री पार्श्वनाथ स्वामीकी टोंक पर द्वितीय प्रतिमाके व्रत लिए और यह भी व्रत लिया कि जिस समय मेरी समाधि होगी उस समय एक वस्त्र रख कर सबका त्याग कर दूंगी—क्षुल्लिका वेष में ही प्राण विसर्जन करूंगी. यदि तीन मास जीवित रही तो सर्व परिग्रहका त्याग कर नवमी प्रतिमा का आचरण करूंगी. अब केवल सूखी वनस्पतिको छोड़कर अन्य औषध सेवन का त्याग करती हूँ. मेरी १८ वर्ष में वैधव्य अवस्था हो चुकी थी तभीसे मेरे एक बार भोजनका नियम था. अब आपके समक्ष विधि पूर्वक उसका नियम लेती हूँ. मेरी यह अन्तिम यात्रा है. हे प्रभो! मेरे ऊपर अनन्त संसारका जो भार था वह आज तेरे प्रसादसे उतर गया.

बाईजीकी आत्मकथा—

हे प्रभो! मैं एक ऐसे कुटुम्बमें उत्पन्न हुई जो अत्यन्त धार्मिक था. मेरे पिता मौजीलाल एक व्यापारी थे शिकोहाबादमें उनकी दुकान थी, वह जो कुछ उपार्जन करते उसका तीन भाग बुन्देलखण्ड से जानेवाले गरीब जैनोंके लिए दे देते थे. उनकी आय चार हजार रुपया वार्षिक थी. एक हजार रुपया गृहस्थीके कार्य में खर्च होता था. मेरे पिता का मेरे ऊपर बहुत स्नेह था. मेरी शादी सिमरा ग्रामके श्रीयुत सिं० भैयालालजीके साथ हुई थी. जब मेरी अवस्था अठारह वर्षकी थी तब मेरे पति आदि गिरिनारकी यात्रा को गये, पावागढ़में मेरे पतिका स्वर्गवास हो गया.

मैं उनके वियोगमें बहुत खिन्न हुई. सब कुछ भूल गई. एक दिन तो यहां तक विचार आया कि संसारमें जीवन व्यर्थ है अब मर जाना ही दुःखसे छूटनेका उपाय है. ऐसा विचार कर एक कुएँ के ऊपर गई और विचार किया कि इसीमें गिरकर मर जाना श्रेष्ठ है, परन्तु उसी क्षण मनमें विचार आया कि यदि मरण न हुआ तो अपयश होगा और यदि कोई अङ्ग भङ्ग हो गया तो आजन्म उसका क्लेश भोगना पड़ेगा अतः कुएँ से पराङ्मुख होकर डेरापर आ गई और धर्मशालामें जो मन्दिर था उसीमें जाकर श्री भगवानसे प्रार्थना करने लगी कि—'हे प्रभो! आज मर जाती तो न जाने किस गति में जाती? आज मैं सकुशल लौट आई यह आपकी ही अनुकम्पा है. जो मैंने पाप किया उसका आपके समक्ष प्रायश्चित लेती हूँ वह यह कि आजन्म एक बार भोजन करूंगी, भोजनके बाद दो बार पानी पीऊँगी, अमर्यादित वस्तु का भक्षण न करूंगी, आपकी पूजाके बिना भोजन न करूंगी, प्रतिदिन शास्त्रका स्वाध्याय करूंगी, मेरे पति की जो सम्पत्ति है उसे धर्म कार्यमें व्यय करूंगी, अष्टमी चतुर्दशीका उपवास करूंगी, यदि शक्ति क्षीण हो जावेगी तो एक बार नीरस भोजन करूंगी. इस प्रकार आलोचना कर डेरा में आ गई और सासको जो कि पुत्रके विरहमें बहुत ही खिन्न थी सम्बोधा—

माताराम! जो होना था वह हुआ, अब खेद करने से क्या लाभ? आपकी सेवा मैं करूंगी, आप सानन्द धर्मसाधन कीजिये. पर जन्ममें जो कुछ पाप कर्म मैंने किये थे यह उन्हीं का फल है. परमार्थ से मेरे पुण्य कर्म का उदय है. यदि उनका समागम रहता तो निरन्तर आयु विषय भोगोंमें जाती. आत्मकल्याण से वञ्चित रहती. मैंने नियम लिया है कि जो सम्पत्ति मेरे पास है उससे अधिक नहीं रखूँगी तथा यह भी नियम किया कि मेरे पति की जो पचास हजार रुपया की साहू-

कारी है उसमें सौ रुपया तक जिन किसानोंके ऊपर है वह सब मैं छोड़ती हूँ तथा सौ रुपयासे आगे जिनके ऊपर है उनका व्याज छोड़ती हूँ. आज से एक नियम यह भी लेती हूँ कि जो कुछ रुपया किसानोंसे आवेगा उसे संग्रह न करूंगी धर्मकार्य और भोजन में व्यय कर दूंगी.

इसके पश्चात श्री गणेशप्रसाद मास्टर जतारासे आया, उस समय उसकी उमर बीस वर्षकी होगी. उसको देखकर मेरा उसमें पुत्रवत स्नेह हो गया, मेरे स्तन से दुग्ध धारा बह निकली. मुझे आश्चर्य हुआ, ऐसा लगने लगा मानो जन्मान्तर का यह मेरा पुत्र ही है. उस दिन से मैं उसे पुत्रवत् पालने लगी. वह अत्यन्त सरल प्रकृतिका था. मैंने उसी दिन दृढ़ संकल्प कर लिया कि जो कुछ मेरे पास है वह सब इसीका है और अपने उस संकल्प के अनुसार मैंने उसका पालन किया.

कुछ दिन के बाद सागर आई और श्री बालचन्द्रजी सवाल-नवीसके मकानमें रहने लगी. आनन्दसे दिन बीते इस प्रकार मेरा तीस वर्षका काल सागरमें आनन्दसे बीता.

श्रीबाईजीका समाधिमरण—

बाईजीका स्वाथ्य प्रतिदिन शिथिल होने लगा. बाईजीने कहा 'भैया ! मैं शिखरजी में प्रतिज्ञा कर आई हूँ दवाईमें अलसी अजवाइन और हर्र छोड़कर अन्य कुछ न खाऊँगी.' उसी समय उन्होंने शरीर पर जो आभूषण थे उतार दिये. बाल कटवा दिये, एक बार भोजन और एक बार पानी पीनेका नियम कर लिया. प्रातःकाल मन्दिर जाना वहांसे आकर शास्त्र स्वाध्याय करना पश्चात् दस बजे एक छटाक दलियाका भोजन करना शाम को चार बजे पानी पीना और दिन भर स्वाध्याय करना यही

उनका कार्य था. यदि कोई अन्य कथा करता तो वे उसे स्पष्ट आदेश देतीं कि बाहर चले जाओ.

पन्द्रह दिन के बाद जब मन्दिर जाने की शक्ति न रही तब हमने एक ठेला बनवा लिया उसीमें उनको मन्दिर ले जाते थे. पन्द्रह दिन बाद वह भी छूट गया, कहने लगीं कि हमें जानेमें कष्ट होता है अतः यहींसे पूजा कर लिया करेंगे. हम प्रातःकाल मन्दिरसे अष्ट द्रव्य लाते थे और बाईजी एक चौकीपर बैठे बैठे पूजन पाठ करती थीं. मैं ६ बजे दलिया बनाता था और बाई जी दस बजे भोजन करती थीं. एक मासबाद आध छटाक भोजन रह गया फिर भी उनकी श्रवण शक्ति ज्योंकी त्यों थी. बाईजी को कोई व्यग्रता न थी, उन्होंने कभी भी रोग वश 'हाय हाय,' या 'हे प्रभो क्या करें' या 'जल्दी मरण आ जाओ' या 'कोई ऐसी औषधि मिल जावे जिससे मैं शीघ्र ही नीरोग हो जाऊँ' ऐसे शब्द उच्चारण नहीं किये.

जब आयुमें दस दिन रह गये तब बाईजीने मुझसे कहा—'बेटा संसारमें जहां संयोग है वहाँ वियोग है. हमने तुम्हें चालीस वर्ष पुत्रवत् पाला है यह तुम अच्छी तरह जानते हो, इतने दीर्घ कालमें हमसे यदि किसी प्रकार का अपराध हुआ हो तो उसे क्षमा करना और बेटा ! मैं क्षमा करती हूँ, अथवा क्या क्षमा करूं मैंने हृदयसे कभी तुम्हें कष्ट नहीं पहुँचाया अब मेरी अन्तिम यात्रा है कोई शल्य न रहे इससे आज तुम्हें कष्ट दिया. यद्यपि मैं जानती हूँ कि तेरा हृदय इतना बलिष्ठ नहीं कि इसका उत्तर कुछ देगा.' मैं सचमुच ही कुछ उत्तर न दे सका, रुदन करने लगा हिलहिली आने लगी.

इसके बाद बाईजीने केवल आधी छटाक दलियाका आहार रक्खा और जो दूसरी बार पानी पीती थीं वह भी छोड़ दिया. सोलह कारण भावना, दशधा धर्म, द्वादशानुप्रेक्षा और समाधि

मरणका पाठ सुनने लगीं. जब आयुके दो दिन रह गये तब दलिया भी छोड़ दिया केवल पानी रक्खा और जिस दिन आयु का अवसान होनेवाला था उस दिन जल भी छोड़ दिया. उस दिन उनका बोलना बन्द हो गया. मैं बाईजी की स्मृति देखनेके लिये मन्दिरसे पूजनका द्रव्य लाया और अर्घ बनाकर बाईजी को देने लगा. उन्होंने द्रव्य नहीं लिया और हाथका इशारा कर जल मांगा. उससे हस्त प्रक्षालन कर गन्धोदककी वन्दना की. मैं फिर अर्घ देने लगा तो फिर उन्होंने हाथ प्रक्षालनके लिये जल मांगा पश्चात् हस्त प्रक्षालन कर अर्घ चढ़ाया, फिर हाथ धोकर बैठ गईं और स्लेट मांगी. मैंने स्लेट दे दी. उस पर उन्होंने लिखा कि तुम लोग आनन्द से भोजन करो. बाई जी तीन माससे लेट नहीं सकती थीं. उस दिन पैर पसार कर सो गईं मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई. मैंने समझा कि आज बाईजीको आराम होगया अब इनका स्वास्थ्य प्रतिदिन अच्छा होने लगेगा.

एक बागमें जाकर नाना विकल्प करने लगा—'हे प्रभो! हमने जहां तक बनी बाईजीकी सेवा की परन्तु उन्हें आराम नहीं मिला, आज उनका स्वास्थ्य कुछ अच्छा मालूम होता है. यदि उनकी आयु पूर्ण हो गई तो मुझे कुछ नहीं सूझता कि क्या करूंगा?' साढ़े नौ बजे बाईजीके पास पहुँचा तो क्या देखता हूँ कि कोई तो समाधिमरणका पाठ पढ़ रहा है और कोई 'राजा राणा छत्रपति' पढ़ रहा है. मैं एकदम भीतर गया और बाईजी का हाथ पकड़ कर पूछने लगा—'बाईजी! सिद्ध परमेष्ठीका स्मरण करो.' बाईजी बोलीं—'भैया! कर रहे हैं, तुम बाहर जाओ.' मैं जब बाहर आया तब बाईजीने मोतीलालजीसे कहा कि अब हमको बैठा दो, उन्होंने बाईजीको बैठा दिया, 'बाईजीने दोनों हाथ जोड़े 'ओं सिद्धाय नमः' कह कर प्राण त्याग दिये. वर्णीजीने मुझे बुलाया शीघ्र आओ, मैं अन्दर गया, सचमुच

ही बाईजीका जीव निकल गया था सिर्फ शव बैठा था. देखकर संसार की अनित्यता का स्मरण हो आया—

'राजा राणा छत्रपति हाथिनके असवार.
मरना सबको एक दिन अपनी-अपनी बार.'
दलबल देवी देवता मात पिता परिवार.
मरती विरियां जीवको कोई न राखन हार.'

वर्णीजीके आदेशानुसार शीघ्र ही बाईजीकी अर्थी बनानेमें व्यस्त हो गया. बाईजीके स्वर्गवासका समाचार बिजलीकी तरह एक दम बाजारमें फैल गया और श्मशान भूमिमें पहुँचते-पहुँचते बहुत बड़ी भीड़ हो गई. चिता धू धू कर जलने लगी और आध घण्टेमें शव जल कर खाक हो गया. मेरे चित्तमें बहुत ही शोक हुआ, हृदय रोनेको चाहता था पर लोक लज्जा के कारण रो नहीं सकता था. जब वहांसे सब लोग चलनेको हुए तब मैंने सब भाइयोंसे कहा—आज मेरी दशा माता विहीन पुत्रवत् हो गई है. आज मैं जो कुछ उन्होंने मुझे दिया सबका त्याग करता हूँ और मेरा स्नेह बनारस विद्यालयसे है अतः कल ही बनारस भेज दूंगा. अब मैं उस द्रव्यमेंसे पाव आना भी अपने खर्चमें न लगाऊंगा. रह-रह कर बाईजीका स्मरण आने लगा. जब किसीका इष्ट वियोग होता था तो मैं समझाने लगता था, पर बाईजी का वियोग होने पर मैं स्वयं शोक करने लगा अतः दिनके समय किसी बागमें चला जाता था और रात्रि को पुस्तकावलोकन करता रहता था. मेरा जो पुस्तकालय था वह मैंने स्याद्वाद विद्यालय बनारसको दे दिया.

३५
शान्ति की खोज में

एक दिन विचार किया कि यदि यहांसे द्रोणगिरि चला जाऊँ तो वहां शान्ति मिलेगी. विचार कर मोटर स्टेण्ड पर आया. एक घण्टा बाद मोटर छूट गई, मोटर बण्डा पहुँची. वहां ड्राईवरने कहा—'वर्णीजी ! आप इस सीटको छोड़कर बीच में बैठ जाईये.' मैं बोला—'क्यों ?'

'यहां दरोगा साहब आते हैं, वे शाहगढ़ जा रहे हैं.'

मैं चुपचाप गाड़ीसे उतर गया और उसी दिनसे यह प्रतिज्ञा की कि अब आजन्म मोटर पर न बैठूंगा. वहांसे उतर कर धर्मशालामें ठहर गया, रात्रिको शास्त्र प्रवचन किया. 'पराधीन सपनेहुँ सुख नाहीं' यह लोकोक्ति बार-बार याद आती रही. दो दिन यहां रहा पश्चात् सागर चला आया और जिस मकानमें रहता थ। उसीमें रहने लगा. बहुत कुछ उपाय किये पर चित्त शान्तनहीं हुआ. अतः शाहपुर चला गया. यहीं पर सेठ कमला पतिजी और वर्णी मोतीलालजी भी आगये.

वर्णी मोतीलालजी तथा सेठ कमलापतिजीने भी कहा कि यदि केवल वर्णीजी स्थिर हो जावें तो हम अनायास स्थिर हो जावेंगे और इनके साथ आजन्म जीवन निर्वाह करेंगे. इन्हींकी चञ्चल प्रकृति है. मैंने कहा—'यदि मैं रेलकी सवारी छोड़ दूं तो आप लोग भी छोड़ सकते हैं ?' दोनों महाशय बोले—'इसमें क्या शक है ?' मैं भोलाभाला उन दोनों महाशयोंके जालमें फँस गया. उसी क्षण उनके समक्ष आजन्म रेलकी सवारी त्याग दी. आधे आश्विन में पैदल सागर आगये. धर्मशाला में पहुँचते ही ऐसा लगने लगा. मानों बाईजी धीमी आवाज से कह रही हों—'भैया. भोजन कर लो.'

३६

गिरिराजकी पैदल यात्रा

एक दिन सिंघईजीके घर भोजनके लिये गये, भोजन करनेके बाद यह कल्पना मनमें आई कि पैदल करीपुर जाना चाहिये. बाईजी तो थीं ही नहीं, किससे पूछना था? अतः मध्याह्नकी सामायिकके बाद पैदल चल दिये और एकाकी चलते-चलते पांच बजे करीपुर पहुँच गये. दो दिन रहकर बण्डा चला गया. यहां पर समाजने आग्रह पूर्वक कहा 'आप गिरिराजको जाते हो तो जाओ बहुत ही प्रशस्त कार्य है परन्तु आपकी वृद्ध अवस्था है इस समय एकाकी इतनी लम्बी यात्रा पैदल करना हानिप्रद हो सकती है अतः उचित तो यही है कि आप इसी प्रान्तमें धर्म साधन करें फिर आपकी इच्छा....'

मैं दो दिन बाद श्री नैनागिरि जी को चला गया. यहांपर हम दो दिन रहे. सागरसे सिंघईजी भी आ गये जिससे बड़े आनन्दके साथ काल बीता. उन्होंने बहुत कुछ कहा परन्तु मैंने एक न सुनी. उनको सान्त्वना देते हुए कहा—'भैया! अब तो जाने दो, आखिर एक दिन तो हमारा और आपका वियोग होगा ही. जहां संयोग है वहां वियोग निश्चित है. मैंने एक बार श्रीगिरिराज जानेका दृढ़ निश्चय कर लिया है अतः अब आप प्रतिबन्ध न लगाइये....' मेरा उत्तर सुनकर सिंघईजीके नेत्रोंमें आंसुओंका संचार होने लगा और मेरा भी गला रुद्ध हो गया अतः कुछ कह न सका. केवल मार्गके उन्मुख होकर बम्हौरीके लिये प्रस्थान कर दिया. शामके पांच बजते-बजते बम्होरी पहुँच गया. यहांके जैनी मृदुल स्वभावके हैं, जब चलने लगा तब रुदन करने लगे, यहांसे हीरापुर होकर दरगुवां होता हुवा द्रोणगिरि पहुँच गया.

यहांसे चलकर घुवारा आये यहांपर पांच जिन मन्दिर हैं. यहांसे चलकर अतिशय क्षेत्र पपौरा आ गये. इस गांव से चलकर बरुआसागर आगये और स्टेशन के पास बाबू रामस्वरूप जी के यहां ठहर गये. पन्द्रह दिन बरुआसागर रहकर शुभ मुहूर्तमें श्री गिरिराजके लिये प्रस्थान कर दिया. प्रथम दिनकी यात्रा पांच मीलकी थी, साथमें कमलापति और चार जैनी भाई थे. साथमें एक ठेला था, जिसमें सब सामान रहता था. उसे दो आदमी ले जाते थे. जब थक जाते थे तब अन्य दो आदमी ठेलने लगते थे. मैंने यह प्रतिज्ञा की—'हे प्रभो पार्श्वनाथ! मैं आपकी निर्वाणभूमिके लिये प्रस्थान कर रहा हूँ जब तक मुझमें एक मील भी चलनेकी सामर्थ्य रहेगी तबतक पैदल चलूंगा, डोलीमें नहीं बैठूंगा.' प्रतिज्ञाके बाद ही एकदम चलने लगा और आध घण्टा बाद निवारी पहुँच गया.

मैं वहांसे मगरपुर होकर टेहरका आया, यहां पर समाजमें वैमनस्य था वह दूर हो गया. यहांसे चलकर मऊरानीपुर आया और दो दिन रहकर आलीपुरको चला, यहांसे नयागांव छावनी में एक दिन रहकर राज्यस्थान छतरपुरमें आ गया, यह स्थान बहुत रम्य है, यहां पर संस्कृत शास्त्रोंका अच्छा भण्डार है. गांवके बाहर एक पहाड़ी पर पाण्डेजीका मन्दिर है, आज कल वहां हिन्दी नार्मल स्कूल है. यहां तीन दिन रहकर श्री खजुराहो क्षेत्रके लिये चल दिया बीचमें दो दिन रहकर तीसरे दिन खजुराहो पहुँच गया. खजुराहोके जैन मन्दिर बहुत ही विशाल और उन्नत शिखरवाले हैं. एक मन्दिरमें श्री शान्तिनाथ स्वामी की सातिशय प्रतिमा विराजमान है जिसके दर्शन करनेसे चित्त में शान्ति आ जाती है. यहांके मन्दिरोंमें पत्थरोंके ऊपर ऐसी शिल्प कला उत्कीर्ण की गई है कि वैसी कागज पर दिखाना भी दुर्लभ है. मन्दिरके चारां ओर कोट है, बीचमें बावड़ी और

कूप है, धर्मशाला है परन्तु प्रबन्ध नहीं के तुल्य है. यहां पर वैष्णवोंके बड़े-बड़े विशाल मन्दिर हैं, फाल्गुनमें एक मासका मेला रहता है, यहां से चलकर तीन दिन बाद पन्ना पहुँच गये. पन्द्रह दिनके बाद चलकर दो दिनमें पड़रिया आये. अनेक प्रयत्न करने पर तीन दिन बाद यहांसे निकल पाये और तीन दिनमें सतना पहुँच गये. यहां पर बड़े सत्कारसे रहे, लोग जाने नहीं देते थे अतः सेठ कमलापति और बाबू गोविन्दलाल जी को रेल द्वारा भेज दिया और मैं सामायिकके मिससे ग्रामके बाहर चला गया और वहींसे रीवांके लिये प्रस्थान कर दिया. बादमें ठेला जो कि साथ था आ गया, पचास आदमी तीन मील तक आये, तीन दिनमें रींवा पहुँचे, यहां पर दो मन्दिर हैं. श्री शान्तिनाथ स्वामीकी प्रतिमा अति मनोज्ञ है, धर्मशाला भी अच्छी है एक मन्दिरकी दहलान श्री महारानी साहबाने बनवा दी है.

यहां तीन दिन रहकर मिर्जापुरके लिये चल दिये. बारह दिनमें मिर्जापुर पहुँच गये. मार्गकी शोभा अवर्णनीय है. गंगा के घाटपर ही विन्ध्यवासिनी देवीका मन्दिर है, बहुत दूर-दूरसे भारतवासी आते हैं. यहांसे चलकर चार दिनमें वाराणसी-काशी पहुँच गये और पार्श्वनाथके मन्दिर भेलूपुर में ठहर गये. भदैनी घाट पर स्याद्वाद विद्यालय है. विद्यालय के ऊपर एक सुन्दर छत है जिसमें हजारों आदमी बैठ सकते हैं. बीच में एक सुन्दर मन्दिर है जिसके दर्शन करने से महान पुण्य का बन्ध होता है. बनारसमें तीन दिन रहा, इन्हीं दिनोंमें स्याद्वाद विद्यालय भी गया, वहां पठन पाठनका बहुत ही उत्तम प्रबन्ध है, यहांके छात्र व्युत्पन्न ही निकलते हैं. विनयके भण्डार हैं. यहांसे सिंहपुरी गये. सिंहपुरी (सारनाथ) में विशाल मन्दिर और एक बृहद् धर्मशाला है जिसमें दो सौ मनुष्य सुख पूर्वक

निवास कर सकते हैं. धर्मशालाके अहातेमें एक बड़ा भारी बाग है, मन्दिरमें इतना विशाल चौक है कि जिसमें पांच हजार मनुष्य एक साथ धर्म श्रवण कर सकते हैं.

जैन मन्दिर से कुछ ही दूरीपर बुद्धदेव का बहुत ही सुन्दर मन्दिर बना हैं. यहां पर बौद्धधर्मानुयायी बहुतसे साधु रहते हैं. मन्दिरमें दरवाजेके ऊपर एक साधु रहता है जो बुद्धदेव की जीवनी बताता है और उनके सिद्धान्त समझाता है. सिंहपुरी से चलकर मोगलसराय के पास एक शिवालयमें रात्रिके समय ठहर गये. स्वाध्याय द्वारा समय का सदुपयोग किया. यहां से आठ दिन बाद डालनियांनगर पहुँचे. वहां से औरंगाबाद होकर चम्पारन पहुँचे, यहांके निवासियोंमें परस्पर कुछ वैमनस्य था जो प्रयत्न करनेसे शान्त हो गया. यहांसे चलकर दो दिनमें शेरघाटी और वहांसे चलकर दो दिनमें गया पहुँच गये. यहांसे पांच मील बौद्ध गयाका मन्दिर है जो बहुत प्राचीन है. यहां पर बुद्धदेवने तपश्चर्या कर शान्ति लाभ किया था. बहुत शान्तिका स्थान है, मन्दिर भी उन्नत है. यहां बौद्ध लोग बहुत आते हैं, तिब्बत चीन जापान आदिके भी यात्री आते हैं और बुद्धदेवके दर्शनकर दीपावली मानते हैं. वहांसे चलकर आठ दिन बाद श्री गिरिराज पहुँच गये. अपूर्व आनन्द हुआ. मार्गकी सब थकावट एक दम दूर हो गई. उसी दिन श्री गिरिराजकी यात्राके लिये चल दिये, पर्वतराजके स्पर्शसे परिणामोंमें शान्तिका उदय हुआ, श्री कुन्थुनाथ स्वामीकी टोंक पर पूजन की, अनन्तर वन्दना करते हुए दस बजे श्री पार्श्वनाथ स्वामीके मन्दिरमें पहुँचे. सब त्यागीमण्डलने वहीं श्री पार्श्वप्रभुके चरण मूलमें सामायिक की, पश्चात् वहांसे चलकर तीन बजे मधुवन आगये.

३७

संतपुरी-ईसरी में

शास्त्र प्रवचनके अनन्तर सबके मुख कमलसे यही ध्वनि निकली कि संसार बन्धनसे छूटनेके लिये यहां रहा जाय और धर्म साधनके लिये यहां एक आश्रम खोला जाय. उसीमें रह कर हम सब धर्म साधन करें. श्री बाबू सूरजमलजीने एक बड़ी भारी जमीन खरीद कर उसमें आश्रमकी नींव डाली और पचीस हजार रुपये लगाकर बड़ा भारी आश्रम बनवा दिया जिसमें पचीस ब्रह्मचारी सानन्द धर्म साधन कर सकते हैं, आश्रम ही नहीं एक सरस्वतीभवन भी दरवाजेके ऊपर बनवा दिया.

कुछ दिनके बाद यहां पर श्री पतासीबाई गया और कृष्णाबाई कलकत्तासे आकर धर्म साधन करने लगीं. संसारमें गृहस्थभार छोड़ना बहुत कठिन है. जो गृहस्थ भार छोड़कर फिर गृहस्थोंको अपनाते हैं उनके समान मूर्ख कौन होगा ? मैंने अपने कुटुम्बका सम्बन्ध छोड़ा, मां बाप मेरे हैं नहीं, एक चचेरा भाई है उससे सम्बन्ध नहीं, घर छोड़नेके बाद श्री बाईजीसे मेरा सम्बन्ध हो गया और उन्होंने पुत्रवत् मेरा पालन किया. मैं जब कभी बाहर जाता था तब बाईजीकी माता तुल्य ही स्मृति आ जाती थी. उनके स्वर्गारोहणके अनन्तर मैं ईसरी चला गया. वहां सात वर्ष आनन्दसे रहा, इस बीचमें बहुत कुछ शान्ति मिली. मैं प्रायः सालमें तीन मास निमियाघाट रहता था. यहांसे श्री पार्श्वनाथ स्वामीकी यात्रा बड़ी सुगमता से हो जाती है, डाक बंगला तक सड़क है, जिसमें रिक्शा भी जा सकता है, बहुत ही मनोरम दृश्य है, बीचमें चार मीलके बाद एक सुन्दर पानीका झरना पड़ता है, यहां पर पानी पीनेसे सब

थकावट चली जाती है. यहांका जल अमृतोपम है. यदि यहां कोई धर्म साधन करे तो झरनाके ऊपर एक कुटी है परन्तु ऐसा निर्मम कौन है जो इस निर्वाण भूमिका लाभ ले सके. ईसरीमें निरन्तर त्यागीगणोंका समुदाय रहता है. भोजनादिकका प्रबन्ध उत्तम है. आश्रमसे थोड़ी दूरी पर ग्रेन्डट्रंक रोड है जहाँ भ्रमण करनेका अच्छा सुभीता है. यहां पर निरन्तर त्यागियों, क्षुल्लकों और कभी-कभी मुनियों का भी शुभागमन होता रहता है.

यहां बड़े वेगसे मलेरिया आने लगा. श्रीमान् बाबा भागीरथजी थे जो हमारे चिरपरिचित थे. उनकी मेरे ऊपर पूर्ण अनुकम्पा थी, वे निरन्तर उपदेश देते थे कि भाई जो अर्जन किया है उसे भोगना ही पड़ेगा. ज्वरके वेगकी प्रबलता से खाना पीना सब छूट गया. जब ज्वरका वेग आता था तब कुछ भी स्मरण नहीं रहता था. सागरसे सिंघईजी व उनकी गृहिणी आगईं. गयासे श्री कन्हैयालालजी आ पहुँचे साथमें कविराज भी आये. कविराज बहुत ही योग्य थे, उन्होंने अनेक उपचार किये परन्तु मैंने औषधि का त्याग कर दिया था. सभी दरवाजोंमें खसकी टट्टियां लगी थीं, दिनभर उनपर पानीका छिड़काव होता था रात्रिको बराबर दो आदमी पंखा करते थे पर शान्ति नहीं मिलती थी. जानेकी शक्ति न थी अतः डोली-कर हजारीबाग चला गया. ग्राम वालोंने अच्छी वैयावृत्तिकी यहांका पानी अमृतोपम था. डेढ़ मास रहा फिर ईसरी आ गया.

श्री बाबा भागीरथजीका समाधिमरण—

वर्षाके बाद बाबाजीका शरीर रुग्ण हो गया फिर भी आप अपने धर्म कार्यमें कभी शिथिल नहीं हुए. औषधि सेवन नहीं किया, न जाने क्यों बाबाजी हमसे वैयावृत्य न कराते थे. जिस

दिन आपका देहावसान होने लगा उस दिन दस बजे तक शास्त्र-स्वाध्याय सुना अनन्तर हम लोगों को आज्ञा दी कि भोजन करो. हमने भोजन करके सामायिक किया पश्चात् हम गये तो क्या देखते हैं कि बाबाजी भूमि पर एक लंगोटी लगाये पड़े हुये हैं, आपकी मुद्रा देखनेसे ऐलकका स्मरण होता था. हम लोग बाबाजीके कर्णोंमें णमोकार मन्त्र कहते रहे पांच मिनट बाद आंखसे एक अश्रु विन्दु निकला और आप सदा के लिये चले गये. मुद्रा बिलकुल शान्त थी, मेरा हृदय गद्गद हो गया. शीघ्र ही बाबाजीको श्मसान ले गये और एक घण्टाके बाद आश्रममें आगये. उस दिन रात्रिमें बाबाजीकी ही कथा होती रही.

ऐसा निर्भीक त्यागी इस कालमें दुर्लभ है. जबसे आप ब्रह्मचारी हुये पैसाका स्पर्श नहीं किया, आजन्म नमक और मीठा का त्याग था. दो लंगोट और दो चद्दर मात्र परिग्रह रखते थे. एक बार भोजन और पानी लेते थे, प्रतिदिन स्वामिकार्तिकेयानुप्रेक्षा और समयसार–कलशका पाठ करते थे. जो कुछ थोड़ा बहुत मेरे पास है उन्हींके समागमका फल है.

सागर वालोंका तीव्र आग्रह था कि सागर आओ इसलिये सागरके लिए प्रस्थान कर दिया. आठ दिन बाद गया पहुँच गया. तीन दिनके बाद एकदम पैरके अंगूठामें इतना दर्द हुआ कि चलनेमें असमर्थ हो गया अतः लाचार होकर मैं स्वयं रह गये. वर्षा काल गयामें सानन्द बीता सब लोगोंकी रुचि धर्म में अत्यन्त निर्मल हो गई. मेरा आत्मविश्वास है कि जो मनुष्य स्वयं पवित्र है उसके द्वारा जगत का हित हो सकता है.

३८

पावापुरकी पावन भूमिमें

गयासे मैंने कार्तिक वदी दोजको श्री वीरप्रभुकी निर्वाण भूमिके लिये प्रस्थान किया, दस मील तक जनता गई. यहाँसे श्री गुणावाजी गये, यहाँ पर एक मन्दिर बहुत ही सुन्दर है. चारों तरफ ताड़के वृक्षका वन है बीचमें बहुत सुन्दर कूप है. प्रातःकाल जब पंक्ति बद्ध ताड़ वृक्षोंके पत्रोंसे छनकर बाल दिनकर की सुनहली किरणें मन्दिर की सुधाधवलित शिखर पर पड़ती हैं, तब बड़ा सुहावना मालूम होता है. मन्दिरमें एक शुभ्रकाय विशाल मूर्ति है, मन्दिरसे थोड़ी दूरपर एक सरोवर है उसमें एक जैन मन्दिर है, मन्दिरमें श्री गौतम स्वामीका प्रतिविम्ब है.

यहाँ थक गया, अतः यह भाव हुआ कि यहीं निर्वाण लाडू का उत्सव मानाना योग्य है. सायंकाल सड़कपर भ्रमण करनेके लिये गया इतनेमें दो भिखमंगे मांगनेके लिए आये, मैं अन्दर जाकर लाडू लाया और दोनोंको दे दिये. मैंने उनसे पूछा—कि 'कहां जाते हो?' उन्होंने कहा—'श्री महावीर स्वामीके निर्वाणोत्सवके लिये पावापुर जाते हैं.' मैंने कहा—तुम्हारे पैर तो कुष्टसे गलित है कैसे पहुँचोगे?' उन्होंने कहा—'श्री वीर प्रभुकी कृपासे पहुँच जावेंगे उनकी महिमा अचिन्त्य है उन्हींके प्रतापसे हमारा ही क्या; प्रान्त भरके लोगोंका कल्याण होता है.'

भिखमङ्गोंके मुँहसे इतनी ज्ञानपूर्ण बात सुनकर मुझे आश्चर्य हुआ मैंने कहा—'भाई! तुम्हें इतना बोध कहाँसे आया?' वे बोले—'आप जैन होकर इतना आश्चर्य क्यों करते हो? समझो तो सही, जो आपकी आत्मा है वही तो मेरी है केवल हमारे और आपके शरीरमें अन्तर है.' मैंने फिर प्रश्न किया—'भाई! आपकी यह अवस्था क्यों हो गई?'

वह बोला—'मेरी यह अवस्था मेरे ही दुराचारका परिणाम है, मैं एक उत्तम कुलका बालक था, मेरा विवाह बड़े ठाट बाटसे हुआ था, स्त्री बहुत सुन्दर और सुशील थी परन्तु मेरी प्रकृति दुराचारमयी हो गई. फल यह हुआ कि मेरी धर्मपत्नी अपघात करके मर गई. कुछही दिनोंमें मेरे माता पिताका स्वर्गवास हो गया और जो सम्पत्ति पासमें थी वह वेश्या व्यसन में समाप्त हो गई. गर्मी आदिका रोग हुआ अन्तमें यह दशा हुई.' इतना कह कर उन दोनोंने श्री पावापुर का मार्ग लिया.

उन लोगोंके 'वीरप्रभुकी कृपासे पहुँच जावेंगे' वचन कानोंमें गूंजते रहे. जब कि अपाङ्गलोग भी वीरप्रभुके निर्वाणोत्सव में सम्मिलित होने के लिये उत्सुकताके साथ जा रहे हैं तब मैं तो अपाङ्ग नहीं हूँ, रही थकावटकी बात सो वीरप्रभुकी कृपासे वह दूर हो जायगी. इत्यादि विचारोंसे मेरा उत्साह पुनः जागृत हो गया और मैंने निश्चय कर लिया कि पावापुर अवश्य पहुँचूंगा. रात्रि गुणावा ही में बिताई प्रातः काल होते ही श्री वीरप्रभुका स्मरण कर चल दिया और नौ बजे श्री पावापुर पहुँच गया. यह वही भूमि है जहां पर श्री वीरप्रभुका निर्वाणोत्सव इन्द्रादि देवोंके द्वारा किया गया था. यद्यपि श्री वीरप्रभु मोक्ष पधार चुके हैं—संसारसे सम्बन्ध विच्छेद हुए उन्हें अढ़ाई हजार वर्षके लग-भग हो चुका फिर भी इस भूमि पर आनेसे उनके अनन्त-गुणोंका स्मरण हो आता है, जिससे परिणामोंकी निर्मलताका प्रयत्न अनायास सम्पन्न हो जाता है.

निर्वाणोत्सवके दिन यहां बहुत भीड़ हो जाती है. जलमन्दिर में ठीक स्थान पानेके लिये लोग बहुत पहलेसे जा पहुँचते हैं और इस तरह सारी रात मन्दिरमें चहल-पहल बनी रहती है. हम लोगोंने भी श्री महावीर स्वामी का निर्वाणोत्सव आनन्दसे किया.

३६

विपुलाचलकी छायामें

पावापुरसे चलकर राजगृही आये. पञ्च पहाड़ीकी वन्दना की. पर्वतकी तलहटीमें कुण्ड हैं, पानी गरम है, और जिनमें एकही बार स्नान करनेसे सब थकावट निकल जाती है. मैं तीन मास यहां रहा, प्रातःकाल सामायिक करनेके बाद कुण्डों पर जाता था और वहीं आधा घंटा स्नान करता था. वहीं पर बहुतसे उत्तम पुरुष आते थे, उनके साथ धर्मके ऊपर विचार करता था. अन्तमें सबके परामर्शसे यही सच निकला कि धर्म तो आत्माकी निर्मल परिणतिका नाम है. यह जो हम प्रवृत्तिमें कर रहे हैं धर्म नहीं है. मन वचन कायके शुभ व्यापार हैं. जहां मनमें शुभ चिन्तन होता है, कायकी चेष्टा सरल होती है, वचनोंका व्यापार स्वपरको अनिष्ट नहीं होता वह सब मन्द कषायके कार्य हैं. धर्म तो वह वस्तु है जहां न कषाय है और न मन वचन कायके व्यापार हैं. वास्तवमें वह वस्तु वर्णनातीत है, उसके होते ही जीव मुक्ति का पात्र हो जाता है. मुक्ति कोई आलौकिक पदार्थ नहीं, जहां दुःखोंकी आत्यन्तिक निवृत्ति हो जाती है वहीं मुक्ति का व्यवहार होने लगता है,

'सुखमात्यन्तिकं यत्र बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम्.
तं वै मोक्षं विजानीयाद् दुष्प्राप्यमकृतात्मभिः'

हमारी गोष्ठीमें यही चर्चाका विषय रहता था कि इस शरीर में निजत्व बुद्धिको सबसे पहले हटाना चाहिये यदि यह हट गई तो शरीरके जो सम्बन्धी हैं उनसे सुतरां ममता बुद्धि हट जावेगी. यहांका जलवायु अत्यन्त स्वच्छ है. हरी-भरी पहाड़ियोंके दृश्य, विलक्षण कुण्ड और प्राकृतिक कन्दराएँ सहसा मनको

आकर्षित कर लेती है. विपुलाचलका दृश्य धर्मशालासे ही दिखाई देता है. यहां पहुँचते ही यह भाव हो जाता है कि यहां श्री वीरप्रभु का समवसरण (सभा) जब आकाशमें भरता होगा और चारों ओरसे जब मनुष्य, विद्याधर तथा देव गण उसमें प्रवेश करते होंगे तब कितना आनन्द न होता होगा ? भगवानकी जगत् कल्याण कारिणी दिव्यध्वनिसे यहांके पृथिवी और आकाश गुञ्जित रहे होंगे. यह वही स्थान है जहां महाराज श्रेणिक जैसे विवेकी राजा और महारानी चेलना जैसी पतिव्रता रानीने निवास किया था. विपुलाचल पर दृष्टि जाते ही यह भाव सामने आजाता है कि भगवान् महावीर स्वामीका समवसरण भरा हुआ है, गौतम गणधर विराजमान हैं और महाराज श्रेणिक नतमस्तक होकर उनसे विविध प्रश्नोंका उत्तर सुन रहे हैं. यहांसे पैदल यात्रा करते हुए ईसरी आगये, मार्गमें उत्तम-उत्तम दृश्य मिले.

४०

वीर भूमि-बुन्देलखण्डमें

सागर विद्यालयसे एक आदमी मालवा प्रान्तमें चन्दाके लिए गया. किसी बड़े सेठसे चन्दा मांगा आपने उत्तर दिया कि ऐसे मांगनेवाले तो बहुत आते हैं. तुमको लाज नहीं आती. भीख मांगना ही तुम लोगोंने स्वीकार कर लिया. वह प्रान्त भी धनिक है उस प्रान्तके धनिक वर्ग को उचित है कि प्रान्तके धर्मायतनों की रक्षा करे. रथ आदि महोत्सवोंमें तो सारी शक्ति लगा देते हैं, पर इन कामोंमें व्यय नहीं करते. यह कथा सुन-कर मनमें विकल्प हुआ कि एक बार अवश्य सागर जाकर पाठ-

शालाको चिरस्थायी करना चाहिये. यही विचार-बीज ऐसे पवित्र स्थान को छोड़ने का कारण हुआ. बनारस की सीमा छोड़ने के बाद दसवीं प्रतिमा का व्रत पालने लगे. मिर्जापुर, रीवा, सतना, पन्ना और छतरपुर होकर श्री द्रोणगिरि सिद्ध क्षेत्र पर पहुँच गये.

द्रोणगिरि—

मेलाका अवसर था इससे भीड़ प्रायः अच्छी थी. गुरुदत्त पाठशालाका उत्सव हुआ. सिंघईजी सभापति हुए, मन्त्री बालचन्द्रजी मलैया ने बहुत ही मार्मिक व्याख्यान दिया. उसे श्रवण कर १०००१) सिंघई वृन्दावनजी मलहरा ने, ५००१) सिंघई कुन्दनलालजीने और ३०००) के अन्दाज अन्य लोगोंने चन्दा दिया. १०००१) स्वयं मलैया बालचन्द्रजीने भी दिये. मेला सानन्द हुआ. इसके बाद आगन्तुक महाशय तो चले गये हमने सानन्द क्षेत्रकी वन्दना की. क्षेत्र बड़ा ही निर्मल और रम्य है पहाड़से नीचेकी ओर देखने पर शिखरजीका दृश्य आंखोंके सम्मुख आ जाता है. पर्वतके सामने चन्द्रभागा नदी बह रही है तो पूर्वकी ओर श्यामली भी बह रही है. दक्षिणकी ओर एक वृहत्कुण्ड भरा हुआ है जो पहाड़की तलहटीसे निकला है. यदि कोई पर्वतकी परिक्रमा करना चाहे तो दो घण्टामें कर सकता है और डेढ़ घण्टामें वन्दना कर सकता है. इस प्रान्तके मां बाप आत्मीय बालकोंकी उन्नतिके शत्रु बनते हैं. उनके पढ़ानेमें एक पैसा व्यय करना पाप समझते हैं. भाग्यसे स्कूल हुआ तो बालक किसी तरह चार क्लास हिन्दी पढ़ लेते हैं. बारहवर्षमें गृहस्थ बन जाते हैं, छोटीसी बहू घरमें आ जाती है, सासू आनन्दमें डूब जाती है पश्चात् जब वह कुछ काल पाकर बड़ी हो जाती है तब उससे सब कराना चाहती है. बाल्य विवाहके दोषसे बहू कमजोर हो जाती है. जब काममें आलस्य

करती है तब वही सास उसे नाना अवाच्योंसे कोसती है, ताना मारती है तथा शारीरिक वेदना देती है. फल यहांतक देखा गया है कि कई अबलाएँ वेदना और वचनोंकी यातना न सह सकनेके कारण कूपमें डूबकर मर जाती हैं. इन रूढ़ियोंका मूल कारण स्त्री समाजमें योग्य शिक्षाकी न्यूनता है.

सागर—

सागर में कचहरी तक पहुँचते पहुँचते हजारों नर नारी आ पहुँचे. बैण्ड बाजा तथा जलूसका सब सामान साथ था. छावनीमें से घूमते हुए जुलूसके साथ श्री मलैयाजीके हीरा आइल मिल्स में पहुँचे. इन्होंने बड़ाही स्वागत किया. अनन्तर कटरा बाजार आये. यहाँ पर गजाधरप्रसादजी ने घरके दरवाजेके समीप पहुँचने पर मङ्गल आरतीसे स्वागत किया. अनन्तर सिंघई राजाराम मुन्नालालजीने बड़े ही प्रेमके साथ स्वागत किया. पश्चात् श्री गौराबाई जैन मन्दिरकी वन्दना की. यहाँ से जुलूसके साथ बड़ा बाजार होते हुए मोराजी भवन पहुँच गये.

मार्ग में पचीसों स्थानोंपर तोरण द्वार तथा बन्दनवारे थे. मोराजीकी सजावट भी अद्भुत थी, वहाँ चार हजार मनुष्योंका समुदाय था. बड़े ही भावसे स्वागत किया. आगत जनताको अत्यन्त हर्ष हुआ. बाहरसे अच्छे अच्छे महाशयोंका शुभागमन हुआ था. रात्रिको सभा हुई जिसमें आगत विद्वानोंके उत्तमोत्तम भाषण हुए. साठ हजार रु० संस्कृत विद्यालयको मिल गये. ग्यारह हजार रुपयोंमें मेरी माला मलैयाजी ने ली तथा चालीस हजार रुपये आपने हाईस्कूलकी बिल्डिंगको दिये. इसी प्रकार महिलाश्रम का भी उत्सव हुआ. उसके लिए भी पन्द्रह हजार रुपयेकी सहायता मिल गई. सात वर्षके बाद आने पर मैंने देखा कि सागर समाजने अपने कार्योंमें पर्याप्त प्रगति की है.

मेरे अभावमें इन्होंने महिलाश्रम खोलकर बुन्देलखण्डकी विधवाओं का संरक्षण तथा शिक्षा का कार्य प्रारम्भ किया है तथा जैन हाई स्कूल खोलकर सार्वजनिक सेवाका केन्द्र बढ़ाया है. संस्कृत विद्यालय भी अधिक उन्नतिपर है, साथ ही और भी स्थानीय पाठशालाएँ चालू की हैं. मुझे यह सब देख कर प्रसन्नता हुई. सातसौ मीलकी लम्बी पैदल यात्राके बाद निश्चित मंजिलपर पहुँचनेसे मैंने अपने आपको भारहीनसा अनुभव किया.

खुरई—

खुरईमें भी वहाँकी समाजने श्री पार्श्वनाथ जैन गुरुकुलकी स्थापना कर ली थी. उसका उत्सव था, मैं भी पहुँचा, बहुतही समारोहके साथ गुरुकुलका उद्घाटन हुआ. रुपयाभी लोगोंने पुष्कल दिया. खुरईसे चलकर ईसुरवाराके प्राचीन मन्दिरके दर्शन करनेके लिये गया. एक दिन रहा, वहींपर हालाहल ज्वर आ गया. एक सौ पांच डिग्री ज्वर था, कुछ भी स्मृति न थी. पता लगते ही सागर से सिंघईजी आ गये. मुझे डोलीमें रख कर सागर ले आये. दस दिन बाद स्वास्थ्य सुधरा. यह सब हुआ परन्तु भीतरकी परिणतिका सुधार नहीं हुआ इसीसे तात्त्विक शान्ति नहीं आई. सुख पूर्वक सागर में रहने लगे, चातुर्मास यहीं का हुआ. भाद्रमासमें अच्छे अच्छे महानुभावों का संसर्ग रहा.

इसके बाद पटना ग्राम गये. यहांसे रहली गये, नदीके ऊपर यह नगर बसा हुआ है उस पार पटनागञ्ज है जहाँ जैनियों के बड़े बड़े मन्दिर बने हुये हैं, मन्दिरोंमें नन्दीश्वर द्वीपकी रचना है. यहाँ से चलकर हरदी आया और यहाँसे नैनागिर के मेले को चला गया.

नैनागिरि से चलकर शाहपुर आया, यहाँ पुष्पदन्त विद्यालय

को पूर्वका द्रव्य मिलाकर बीस हजार रुपयेका फंड हो गया. विद्यालयके सिवा यहाँ पर एक चिरोंजाबाई कन्याशालाके नाम से महिला पाठशाला भी खुल गई. अनन्तर पटनागञ्जके मन्दिरों के दर्शनके लिये आये. वहाँ से श्री कुण्डलपुर गये.

कटनी—

कुण्डलपुरसे चलकर कटनी आये. मार्ग विषम तथा जङ्गलका था अतः कुछ कष्ट हुआ. भारतवर्षीय दि० जैन विद्वत्परिषद्का प्रथम अधिवेशन हुआ जिसमें अनेक विद्वान पधारे थे. यहाँ पर तीन दिन परिषद्की बैठकें हुई धर्म की बहुत प्रभावना हुई तथा एक बात नवीन हुई कि पण्डित महाशयों ने दिल खोलकर परिषद्के कोषको स्थायी सम्पत्ति इकट्ठी कर दी. परिद्को अच्छी सफलता मिली. यदि कोई दोष देखा तो यही कि अभी परस्परमें तिरेसठपना की त्रुटि है. जिस दिन यह पूर्ण हो जावेगी उस दिन परिषद् जो चाहेगी कर सकेगी. जब मेला पूर्ण होनेको आया और जब मैं जबलपुर वालोंके आग्रह वश कटनी से चलने लगा तब वहाँकी समाजको बहुत ही क्षोभ हुआ, प्रस्थानके समय बहुत से भाइयोंने व्रत निमय लिये.

जबलपुर—

जबलपुर में एक विशेष बात यह हुई, कि वहाँ दिगम्बर जैन परिषद्के अधिवेशन का भी आयोजन हुआ. प्रायः आठ हजार जनता एकत्र हो गई. परिषद् में इतना जन समुदाय कभी नहीं हुआ होगा. शाहु शान्ती प्रसादजी उसके अध्यक्ष थे. बहुत ही शानदार उत्सव हुआ. समय की परिस्थितिके अनुसार सुधार भी बहुत अंशों में हुआ.

श्रीमती रमादेवी स्त्री समाजकी सभानेत्री थीं. आपके विचार भी स्त्री समाज के सुधार पक्षमें हैं परिषद् का कार्य सब

प्रकार उत्तम रहा. कुछ दिनके बाद एक अपूर्व घटना हुई, और वह है स्थानीय समस्त मन्दिरों की एक सामूहिक संघटित व्यवस्था. मुझे जहाँ तक विश्वास है कि ऐसी व्यवस्था भारतवर्षमें जैन मन्दिरोंके द्रव्य की कहीं भी नहीं है. चातुर्मास बड़ी शान्ति और आनन्दके साथ व्यतीत हुआ. सतनावाले स्वर्गीय धर्मदासजी एक विलक्षण पुरुष थे. आपने मढ़ियाजीके मेले पर प्रस्ताव किया कि यहाँ पर गुरुकुल होना चाहिये. और उसके लिए दस हजार मैं स्वयं दूंगा. फिर क्या था ? जबलपुर समाज ने एक लाखकी पूर्तिकर दी. अगहन मासमें उसका उत्सव हुआ.

आजाद हिन्द सेनाको एक चादर—

एक बार आजाद हिन्द फौजवालोंकी सहायता करने बाबत साभ थी मुझे भी व्याख्यानका अवसर मिला. यद्यपि मैं तो राजकीय विषयमें कुछ जानता नहीं फिर भी मेरी भावना थी कि हे भगवन ! देशका संकट टालो. जिन लोगोंने देशहित के लिये अपना सर्वस्व न्योछावर किया उनके प्राण संकटसे बचाओ, मैं आपका स्मरण सिवाय क्या कर सकता हूँ ? मेरे पास त्याग करनेको कुछ द्रव्य तो है नहीं. केवल दो चद्दरें हैं इनमेंसे एक चद्दर मुकद्दमेकी पैरवीके लिये देता हूँ और मनसे परमात्माका स्मरण करता हुआ विश्वास करता हूँ कि यह सैनिक अवश्य ही कारागृहसे मुक्त होंगे. मैं अपनी भावना प्रकट कर बैठ गया अन्तमें वह चादर तीन हजार रुपये में नीलाम हुई. पण्डित द्वारकाप्रसादजी मिश्र इस प्रकरण से बहुत ही प्रसन्न हुए. इस तरह जबलपुरमें सानन्द काल जाने लगा.

जबलपुर से सागर—

यहाँ से चलकर पाटन आया, और पाटनसे कोनी क्षेत्र आया. यह अतिशय क्षेत्र है. एक पहाड़ की तलहटीमें सुन्दर

मन्दिर बने हैं. पास ही नदी बहती है. पाटनसे तीन चार मील है, नदी पार कर जाना पड़ता है. बहुत ही रमणीक और शांति-प्रद स्थान है. दमोह से चलकर सद्गुवां आये यहां रात्रिभर निवास कर पथरिया आ गए. यहाँसे चलकर शाहपुर आ गया. शाहपुरसे चलकर पड़रिया ग्राम आये, यहाँ पर एक लुहरीसेन का घर है. जो बहुत ही सज्जन है. लोग उसे पूजन करनेसे रोकते हैं. बहुत विवादके बाद उसे पूजन की खुलासी कर दी गई, वहाँ से सागर पहुँच गये. हजारों मनुष्यों की भीड़ थी. शहर की प्रधान सड़कें वन्दन-मालाओं और तोरण-द्वारोंसे सुसज्जित की गई थीं. जिस समय सागरसे चलने लगे. उस समय नर-नारियों का बहुत समारोह हुआ. स्त्रियोंने रोकनेका बहुत ही आग्रह किया। मैंने कहा यदि सागर समाज महिला-श्रमके लिये, एक लाख रुपया देने का वायदा करे तो हम सागर आ सकते हैं. स्त्री समाजने कहा कि हम आपके वचन की पूर्ति करेंगे. परन्तु हम वहांसे द्रोणगिरि चले गये.

मेलाका समय था, अतः सिंघई कुन्दनलालजी तथा बाल चन्द्रजी मलैया पहलेसे ही मौजूद थे. दूसरे दिन पाठशालाका वार्षिकोत्सव हुआ. दस हजार एक रुपया श्री सिंघई कुन्दनलाल जी ने एकदम प्रदान किया तथा इतना ही श्री बालचन्द्रजी मलैया ने दिया. सिंघई वृन्द्रावनजीके न होने पर भी उनके सुपुत्रने दो हजार कहा. मैंने कहा पांच हजार एक कह दीजिये. उसनेहँस कर स्वीकारता दी. फुटकर चन्दाभी तीन हजार रुपयाके लगभग हो गया. मेला विघट गया, सब मनुष्य अपने २ घर चले गये.

सागरमें शिक्षण शिविर—

हम लोग बीचमें ठहरते हुए. सागर आ गये. पहले की भाँति अनेक महाशय गाजे बाजेके साथ लेनेके लिये, दो मील

दूर तक आये. सागरमें शिक्षण-शिविर चल रहा था, इन्हीं दिनोंमें विद्वत्परिषद् की कार्यकारिणीकी बैठक हुई. 'संजद' पदकी आवश्यकता पर पण्डित फूलचन्दजी सिद्धान्त शास्त्री का मार्मिक भाषण हुआ. और उन्होंने सबकी शंकाओं का समाधान भी किया. अन्तमें सब विद्वानोंने मिलकर निर्णय दिया कि धवल सिद्धांत के तेरानवें सूत्रमें 'संजद' पद का होना आवश्यक है. जब शिक्षण शिविर का अन्तिम दिन आया तब सागर समाजने सादर स्वागतकर समस्त विद्वानों का आभार माना और यह भावना प्रकट की कि फिर भी हम लोगोंके ऐसे सौभाग्य उदयमें आवें जिससे आप लोगों का समागम पुनः प्राप्त हो. एक माह तक एक साथ रहनेके कारण उनमें परस्पर जो सौहार्द उत्पन्न हो गया था उसके फल स्वरूप सबके हृदय बिछुड़नेके समय गद्गद् थे.

सर सेठ हुकमचन्द्रजीका शुभागमन—

१८ जून सन् १६४६ की रात्रिको मोटर द्वारा श्रीमान् राज्य मान्य सब विभव सम्पन्न सर सेठ हुकुमचन्द्रजी का शुभागमन सागर हुआ. निश्चित कार्यक्रमके अनुसार आज शास्त्र-प्रवचनभी चौधरनबाईके मन्दिरमें हुआ. मन्दिर स्थानीय जैन जनतासे खूब भरा हुआ था. प्रवचनका ग्रन्थ समयसार था. मैंने 'सुद परिचिदाणुभूदा सव्वस्स वि कामभोग बन्ध कहा' इस गाथापर प्रवचन किया. प्रवचन चल ही रहा था कि सेठजी बीचमें बोल उठे 'महाराज! मुझे प्रवचन सुनकर अपार आनन्द हुआ है. सागर की जनता बड़ी भाग्यशाली है जो निरन्तर ऐसे प्रवचन सुना करती है. मैं पहले मध्याह्न प्रवचनोंके आनेवाला था पर घरमें तबियत खराब हो जानेसे नहीं आ सका, आप एक बार इन्दौर अवश्य पधारें.' 'आज सर सेठ साहबकी वक्तृतामें

जन्म गाँठ है' यह जानकर सागरकी जनतामें अपूर्व आनन्द छा गया. जन्मगांठके उत्सव की घोषणाकी गई फल स्वरूप आठ बजते बजतें विद्यालयके प्रांगणमें कई हजारकी भीड़ एकत्र हो गई. सेठजीने अपनी लघुता बतलाते हुए सार पूर्ण वक्तव्य दिया और अन्तमें यह प्रकट किया कि मैं पचीस हजार रुपया की रकम वर्णीजीकी इच्छानुसार दानके लिए निकालता हूँ. प्रातः काल मन्दिरमें पहुँचते ही मैंने सागर समाजसे कहा कि यदि आप लोग सेठजीके पचीस हजार रुपया अपने विद्यालय को चाहते हो तो अपने पचीस हजार रुपया और मिलाइये अन्यथा मैं प्रान्तकी अन्य संस्थाओंको वितरण कर दूंगा. सुनतेही सागर समाजने चन्दा लिखाना शुरूकर दिया, बहुत आदमियोंका विचार था कि वर्णीजी यहीं रहें, परन्तु मुझे तो शनैश्चरग्रह लगा था. जिससे मैं हजारों नरनारियों को निराश कर आश्विन सुदी तीज सं० २००४ को सागरसे चल पड़ा.

४१
ग्राम-ग्राम में, गली-गली में

सागरसे चलकर शाहपुर पहुँचा. इधर एक बात विशेष हुई. यहाँ एक चर्मकार है. तीन वर्ष पहले हमने उससे कहा था कि भाई मांस खाना छोड़ दो,'उसनें छोड़ दिया तथा शाहपुर के सम्पूर्ण चर्मकारोंमें इस बातका प्रचार कर दिया कि मृत पशु का मांस नहीं खाना चाहिये बहुतोंनें जीव हिंसा का भी त्याग कर दिया. वहां से चलने के बाद दमोह पहुँचे. यहां की नव-युवक पार्टीने एक जैन हाई हाई स्कूल खोलनेका दृढ़ संकल्प किया समाज ने उसमें यथा शक्ति योगदान दिया.

सदगुवाँ से भोजन कर चला और नोरू ग्राम में सो गया. वहांसे सात मील चलकर किदरय आया. भोजन किया, यहाँ लोगों पर मन्दिरका रुपया आता था, कहा गया तो पांच मिनट में तीन सौ पचहत्तर रुपया आ गया तथा परस्पर का वैमनस्य दूर होकर सौमनस्य हो गया. यहाँ से पाँच मील चलकर सूखा आये. यहां से चलकर सुरईके गांव आया, यहाँ पर आठ घर जैनियों के हैं. ग्राम बहुत सुन्दर है, यहाँ पाठशाला स्थापित हो गई. वहांसे चलकर श्री सिद्धक्षेत्र नैनागिरि आ गये. पाठशाला के लिये, पाँच हजार रुपया का चन्दा हो गया, चन्दा होना कठिन नहीं परन्तु काम करना कठिन है.

वहाँ से बम्हौरी, बारायठा आदि होते हुए हंसेरे ग्राम आ गये. यहां पर हमारी जन्मभूमि के रहने वाले हमारे लंगोटिया मित्र सिंघई हरिसिंहजी आ गए. बाल्य-काल की बहुत सी चर्चा हुई. प्रातःकाल मड़ावारा पहुँच गए. मड़ावरामें मनुष्योंमें परस्पर जो मनोमालिन्य था वह भी दूर हो गया. यहां तीन दिन रह कर श्रीयुत स्वर्गीय सेठ चन्द्रभानजी के सुपुत्रके आग्रहसे साढूमल आ गया. सैदपुर से महरौनी आया यहां मेरे आनेके दो दिन पूर्व कुछ प्रमुख व्यक्तियोंमें भयंकर झगड़ा हो गया था जिससे वातावरण बहुत अशान्त था परन्तु प्रयत्न करनेसे सब प्रकार की शान्ति हो गई. तीन दिन रहने के बाद कुम्हेड़ी पहुँचा. दस मिनट की चर्चामें ही श्री चन्द्रभानजी बरम्या गद्‌गद्‌ होकर बोले कि अपनी सम्पत्तिको चार भागोंमें बाँट दूंगा. दो हिस्से दोनों पुत्रियों और रिश्तेदारों को, एक हिस्सा स्वयं निजके लिये और एक हिस्सा धर्म कार्योंके लिये रखूँगा. हम सबने बरम्याजीके निर्णयकी सराहना की. मध्याह्नके दो बजेसे साढ़ेचार बजे तक एक आमसभा हुई जिसमें भाषणों के अनन्तर बरम्याजीका निर्णय सबको सुनाया गया. लोगोंसे

पता चला कि उनके पास दो तीन लाखकी सम्पत्ति है. रात्रिको एक नवीन पाठशाला का उद्घाटन हुआ.

कुन्देडीके बाद गुढ़ा और नारायणपुर होते हुए श्री अतिशय क्षेत्र अहार पहुँचा. अहार क्षेत्र का प्राकृतिक सौन्दर्य अवर्णनीय है. वास्तवमें पहाड़ों के अनुपम सौन्दर्य, बाग बगीचों, हरे भरे धानके खेतों एवं मीलों लम्बे विशाल तालाब से निकलकर प्रवाहित होने वाले जल प्रवाहोंसे आहार एक दर्शनीय स्थान बन गया है. उस पर संसार को चकित कर देनेवाली पापट जैसे कुशल कारीगरकी कर कलासे निर्मित श्री शान्तिनाथ भगवान्की सातिशय प्रतिमा ने तो वहां के वायुमण्डल को इतना पवित्र बना दिया है कि आत्मामें एकदम शान्ति आ जाती है. यहां की संस्थाको छह हजार रुपया तथा क्षेत्र को पांच सौ रुपयाकी नवीन आय हुई. मेलामें जैन अजैन जनता की भीड़ लगभग दस हजार थी.

वहांसे चलकर पठा आया, और एक दिन बाद पपौराजी आ गया, यहाँसे चलकर बानपुर गया. यहाँ पर गाँवके बाहर प्राचीन मन्दिर है, एक सहस्रकूट चैत्यालय भी है परन्तु गांववालों का उस ओर ध्यान नहीं, यहाँ से चलकर मबई आया, वहांसे चलकर जतारा आया, यह वह स्थान है, जहां पर मैंने श्री स्वर्गीय मोतीलालजी वर्णीके साथ रह कर जैनधर्म का परिचय प्राप्त किया था. यहां पर एक मन्दिरमें प्राचीन काल का एक भोंहरा है. उसमें बहुत ही मनोहर जिन प्रतिमाएँ हैं, जो अष्ट प्रातिहार्य सहित हैं. मुनिप्रतिमा भी यहां पर हैं. यहां दो दिन रहने के बाद श्री स्वर्गीया धर्ममाता चिरोंजाबाईजीके गांव आया, यहां की जनताने बड़े ही स्नेह पूर्वक तीन दिन रक्खा. वहांसे चलकर सतगुवां आया, एक दिन रहा फिर बम्हौरी होता हुआ पृथ्वीपुर आया. वहांसे चलकर बरुआसागर आ गया.

बरुआसागरमें समारोह—

यहाँ की प्राकृतिक सुषमा निराली है. सुरम्य अटवी के बीचों बीच एक छोटी सी पहाड़ी है, उसके पूर्व भागमें बहुत सुन्दर बाग है, उत्तरमें महान् सुरम्य सरोवर है, पश्चिममें सुन्दर जिनालय और दक्षिणमें रमणीक अटवी है. पहाड़ी पर विद्यालय और छात्रावासके सुन्दर भवन बने हुए हैं. स्थान इतना सुन्दर है कि प्रत्येक देखनेवाला प्रसन्न होकर जाता है. जब लोगोंके स्वाभाविक अनुराग ने मुझे आगे जानेसे रोक दिया तब मैंने बरुआसागर के आस पास ही भ्रमण करना उचित समझा. फलतः मैं मरगपुर गया, मगरपुर से दुमदुमा गया और इधर उधर भ्रमण कर पुनः बरुआसागर आ गया.

बाबू रामस्वरूपजी के विषयमें क्या लिखूं ? वे तो विद्यालय के जीवन ही हैं. वर्तमान में उसका जो रूप है वह आपके सत्प्रयत्न और स्वार्थत्याग का ही फल है. आप निरन्तर स्वाध्याय करते हैं, तत्त्व को समझते भी हैं, शास्त्रके बाद आध्यात्मिक भजन बड़ी ही तन्मयतासे कहते हैं. आपकी धर्मपत्नी ज्वालादेवी हैं जो बहुत चतुर और धार्मिक स्वभाव की हैं, निरन्तर स्वाध्याय करती हैं स्वभाव की कोमल हैं. आपका एक नेमिचन्द्र एम० ए० है जो स्वभाव का सरल मृदुभाषी निष्कपट है, विद्याव्यसनी भी है. फाल्गुन शुक्ल वीर नि० २४७४ का अष्टाह्नि का पर्व आ गया. उस समय आपने बड़ी धूमधाम से सिद्धचक्र विधान कराया जिससे धर्म की महती प्रभावना हुई.

इसी अवसर पर बाबू रामस्वरूपजी तथा उनकी सौ० धर्मपत्नी ज्वालादेवीने दूसरी प्रतिमाके व्रत प्रसन्नता पूर्वक लिये और कोयला आदिके जिस व्यापारसे आपने लाखों रुपये व किये थे उसे व्रतोंके अनुकूल न होनेसे सदा के लिये छोड़ दिया.

सब लोगोंको बाबू साहबके इस त्यागसे महान् आश्चर्य हुआ. मैंनेभी मिती फाल्गुन सुदी सप्तमी वी० सं० २४७४ को प्रातःकाल श्री शान्तिनाथ भगवानकी साक्षीमें आत्मकल्याणके लिये क्षुल्लकके व्रत लिये. मेरा दृढ़ निश्चय है कि प्राणीका कल्याण त्यागमें ही निहित है.

इसी अष्टाह्निका पर्वके समय यहांके पार्श्वनाथ विद्यालयका वार्षिक अधिवेशन भी हुआ जिसमें सब मिलाकर २५००० रुपया के लगभग विद्यालयका ध्रौव्यफण्ड होगया. इस प्रकार विद्यालय स्थायी हो गया. मुझे भी एक शिक्षायतनको स्थिर देख अपार हर्ष हुआ. वास्तवमें ज्ञान ही जीवका कल्याण करनेवाला है परन्तु यह पञ्चमकाल का ही प्रभाव है कि लोग उससे उदासीन होते जा रहे हैं. बरुआसागरसे चलकर वेत्रवती नदी पर आये. स्थान बहुत ही रम्य है. साधुओंके ध्यान योग्य है परन्तु साधु हों तब न. हम लोगोंने साधुओंका अनुकरण कर रात्रि बिताई. पश्चात झांसी आये.

सोनागिरि का स्वप्न—

यहांसे चलकर दो दिन बीचमें ठहरते हुए दतिया आगये और यहांसे चलकर श्रीसोनागिरिजी आगये. मन्दिर बहुत ही मनोज्ञ तथा विस्तृत हैं. प्रातःकाल पर्वतके ऊपर बन्दनाको गये. मार्ग बहुत ही स्वच्छ और विस्तृत है. पर्वतके मध्यमें श्री चन्द्रप्रभु स्वामीका महान् मन्दिर बना हुआ है. यहां पर एक पाठशाला भी है परन्तु उस ओर समाजका विशेष लक्ष्य नहीं पाठशालासे क्षेत्रकी शोभा है. आजके दिन पर्वत पर शयन किया. रात्रिको सुन्दर स्वप्न आया जिसमें सर सेठ हुकुमचन्द्रजीसे बातचीत हुई. आपको धोती दुपट्टा लेते हुए देखा, आप पूजनके लिये जा रहे थे. मैंने आपसे कहा कि आप तो स्वाध्यायके महान् प्रेमी हैं

पर इस समय पूजनको जा रहे हैं स्वाध्याय कब होगा ? मेरी भी इच्छा थी कि आपके समागममें पण्डितों द्वारा शास्त्रका मार्मिक तत्त्व विवेचन किया जावे. परन्तु आपको तो पूजन करना है इससे अवकाश नहीं. अच्छा, मैं भी आपकी पूजन देखूंगा और पुण्य लाभ करूंगा. आप सदृश आप ही हैं. सर सेठ साहबने मुसकराते हुए कहा कि मैं पूजन कर अभी तैयार होता हूँ.

मैंने कहा—यह सब हुआ आपने आजन्म पण्डितोंका समागम किया है और स्वयं अनुभव भी किया है. पुण्योदयसे सब प्रकारकी सामग्री भी आको सुलभ है किन्तु क्या आप इस बाह्य विभवको अपना मानते हैं ? नहीं, केवल सरांयका सम्बन्ध है. अथवा.

'ज्यों मेलेमें पंथी जन मिल करें नन्द धरते,
ज्यों तरुवर पर रैन बसेरा पक्षी आ करते.'

सेठजी कुछ बोलना ही चाहते थे कि मेरी निन्द्रा भंग हो गई—स्वप्न टूट गया.

दिल्लीयात्राका निश्चय तथा प्रस्थान—

ग्रीष्मकालका उत्ताप विशेष हो गया था अतः यह विचार किया कि ऐसी तपोभूमिमें रह कर आत्मकल्याण करूं. मनमें भावना थी कि श्री स्वर्णगिरिमें ही चतुर्मास करूं और इस क्षेत्रके शान्तिमय वातावरण में रहूँ. श्री लाला राजकृष्णजी कुछ लोगों को साथ लाये. इन सबने देहली चलनेका हार्दिक अनुरोध किया. इससे जैनधर्मके प्रचारका विशेष लाभ दिखलाया जिससे मैंने देहली चलनेकी स्वीकृति दे दी,

बैशाख वदि ४ सं० २००६ को प्रात.काल सोनागिरिसे चलकर चांदपुर आ गये. यहांसे चार मील चलकर डबरा आ गये.

डबरासे चलकर बीचमें कई स्थानोंपर ठहरे पर कोई विशेष बात नहीं हुई. एक दिन डांगके महावीरके स्थान पर ठहर गये. यहां पर एक साधु महात्मा थे, जो बहुत ही शिष्ट थे. बड़ा ही सौजन्य उन्होंने दिखाया.

डबरा से चलकर क्रमशः लश्कर पहुँचे. यहां पर सर्राफाका जो बड़ा मन्दिर है उसकी शोभा अवर्णनीय है. यह सब होकर भी यहां पर कोई ऐसा विद्यायतन नहीं कि जिसमें बालक धार्मिक शिक्षा पा सकें. चम्पाबागकी धर्मशाला में पहुँचते ही मुझे उस दिनकी स्मृति आ गई जिन दिन कि मैं सर्व प्रथम अध्ययन करनेके लिये बाईजी के पाससे जयपुरको रवाना हुआ था और आकर इसी चम्पाबागमें ठहरा था. जब तक मैं नगर के बाहर शौच क्रियाके लिये गया था तब तक किसी ने ताला खोलकर मेरा सब सामान चुरा लिया था. मेरे पास सिर्फ एक लोटा एक छतरी और छह आना पैसे बचे थे और मैं निराश होकर पैदल ही घर वापिस लौट गया था. यहांसे चलकर बैशाख सुदि पञ्चमी को गोपाचलके दर्शन करनेके लिये गया. गोपाचल क्या है दिगम्बर जैन संस्कृतिका द्योतक सबसे महत्वपूर्ण स्थान है. यहां पर्वतकी भित्तियोंपर विशालकाय जिनबिम्ब कुशल कारीगरोंके द्वारा महाराज डूंगरसिंह के समयमें निर्मित किये गये थे. लाखों रुपया उस कार्यमें खर्च हुआ होगा. पर मुगल साम्राज्य कालमें वे सब प्रतिमाएं टांकीसे खण्डित कर दी गई हैं. कितनी ही पद्मासन मूर्तियां तो इतनी विशाल हैं कि जितनी उपलब्ध पृथ्वीमें कहीं नहीं होंगी. मनमें दुःखभरी सांस लेता हुआ वहांसे चले और ढाई मील चलकर श्री गणेशीलालजी साहब के बाग में ठहर गये. बाग बहुत ही मनोहर और भव्य है. पर्वके बाद श्रावण बदि एकमको वीरशासन जयन्तीका उत्सव समारोहके साथ हुआ. श्रीयुत हीरालालजी और गणेशीलालजी

के प्रबन्धसे वहां मुझे कोई कष्ट नहीं हुआ और गोपाचलके अञ्चलमें मेरे लगभग सात माह सानन्द व्यतीत हुए, मुरारसे अगहन वदि ४ वीरसं० २४७५ को देहली की ओर प्रस्थान किया.

ग्वालियर से आगरा—

अगहन बदी अष्टमी सं० २००५ को एकबजे ग्वालियरसे चल कर बारसको मोरेना पहुँचे, पहुँचते ही एकदम स्वर्गीय पं० गोपाल दासजीका स्मरण आगया. यह वही महापुरुष हैं जिनके आंशिक विभवसे आज जैन जनता में जैन सिद्धांतका विकास दृश्य हो रहा है. सिद्धान्त विद्यालयके भवनमें ठहरे, यह विलक्षणता यहाँ ही देखने में आई कि जलाभिषेकके साथ-साथ भगवान् के शिर ऊपर पुष्पों का भी अभिषेक कराया गया. पुष्पोंका शोधन प्रायः नहीं देखने में आया. यहाँ की जनता का बहुभाग इस पूजन प्रक्रिया को नहीं चाहता, यहाँ पर सिद्धान्त विद्यालय बहुत प्राचीन संस्था है. इसकी स्थापना स्वर्गीय श्री गुरु गोपालदास जी ने की थी.

मोरेनामें ३ दिन रहने के बाद धौलपुर की ओर चल दिये. मार्गमें एक ग्रामके बाहर धर्मशाला थी उसमें ठहर गये. धर्मशाला का जो स्वामी था उसने सब प्रकार से सत्कार किया. उसकी अन्तरङ्ग भावना भोजन करानेकी थी परन्तु यहांकी प्रक्रिया तो उसके हाथका पानी पीना भी आगम विरुद्ध मानती है. जिसे जैन धर्मकी श्रद्धा हो और जो शुद्धता पूर्वक भोजन बनावे ऐसे त्रिवर्णका भोजन मुनि भी कर सकता है. परन्तु यहां तो रूढ़िवाद की इतनी महिमा है कि जैन धर्म का प्रचार कठिन है.

धर्मशालासे चलकर तीसरे दिन धौलपुर पहुँच गये. मन्दिर में प्रवचन हुआ जो जनता थी वह आ गई. मनुष्यों की प्रवृत्ति सरल है, जैनी हैं यह अवश्य है परन्तु ग्रामवासी हैं, अतः जैन

धर्मका स्वरूप नहीं समझते. यहां के राजा बहुत ही सज्जन हैं. वन में जाते हैं और रोटी आदि लेकर पशुओं को खिलाते हैं. राजाके पहुँचने पर पशु स्वयमेव उनके पास आ जाते हैं. देखो दया की महिमा कि पशु भी अपने हितकारीको समझ लेते हैं. यदि हम लोग दया करना सीख लें तो क्रूरसे क्रूरसे जीव भी शान्त हो सकता है.

धौलपुर से ५ मील चलकर बिरौदा में रात्रि को उपदेश दिया. जनता अच्छी थी. यदि कोई परोपकारी धर्मात्मा हो तो नगरोंकी अपेक्षा ग्रामोंमें अधिक जीवोंको मोक्षमार्गका लाभ हो सकता है. यहांसे मगरौल तथा एक अन्य ग्राममें ठहरते हुए राजाखेड़ा पहुँच गये. यहां पर एक जैन विद्यालय है. कई जैन मन्दिर हैं, अनेक गृह जैसवाल भाइयों के हैं. बड़े प्रेमसे सबने प्रवचन सुना यथायोग्य नियम भी लिये.

राजाखेड़ामें तीन दिन ठहरकर आगराके लिए प्रस्थान कर दिया. बीचमें दो दिन ठहरे. जैनियोके घर मिले, बड़े आदर से रक्खा तथा संघके मनुष्योंको भोजन दिया, श्रद्धापूर्वक धर्मका श्रवण किया. धर्मके पिपासु जितने ग्रामीण जन होते हैं उतने नागरिक मनुष्य नहीं होते. ग्रामोंमें शिक्षा ऐसी हो जिससे मनुष्यमें मनुष्यताका विकास आ जावे. यदि केवल धनोपार्जन की ही शिक्षा भारतमें रही तो इतर देशों की तरह भारत भी पर को हड़पनेके प्रयत्नमें रहेगा और जिन व्यसनों से मुक्त होना चाहता हैं उन्हीं का पात्र हो जावेगा, मार्गमें जो ग्राम मिले उनमें बहुतसे क्षत्रिय तथा ब्राह्मण ऐसे मिले जो अपने को गोलापूरब कहते हैं. हमारे प्रान्तमें गोलापूरब जैनधर्मभी पालते हैं परन्तु यहां सर्व गोलापूरब शिव, कृष्ण तथा रामके उपासक हैं. सभी लोगों ने सादर धर्मश्रवण किया किन्तु वर्तमानके व्यवहार इस तरह

सीमित हैं कि किसीमें अन्यके साथ सहानुभूति दिखानेकी क्षमता नहीं. इसीसे सम्प्रदायवादकी वृद्धि हो रही है.

राजाखेड़ा से ६ मील चलकर एक नदी आई उसे पार कर निर्जन स्थानमें स्थित एक धर्मशालामें ठहर गये. पौष मास था, सर्दी का प्रकोप था. प्रातःकाल सामायिक कर वहां से चल दिये. एक ग्राम में पहुँच गये, सबने बहुत आग्रह किया कि एक दिन यहां ही निवास करिये. हम लोग भी तो मनुष्य हैं हमको भी हमारे हितकी बात बताना चाहिये.

वहांसे चलकर एक ग्राममें सायंकाल पहुँच गये और प्रातः काल ३ मील चलकर एक दूसरे ग्राममें पहुँच गये. यहाँ पर आगरासे बहुतसे मनुष्य आ गये. सामायिक करनेके अनन्तर सर्व जन समुदायने आगराके लिये प्रस्थान कर दिया. दो मील जाने के बाद सहस्रों मनुष्योंका समुदाय मिला, गाजे-बाजेके साथ छीपीटोलाकी धर्मशालामें पहुँच गये. तीसरे दिन श्री महावीर इंटर कालेजका उत्सव था गाजे-बाजेके साथ वहां गये. उत्सव में अच्छे अच्छे मनुष्योंका समारोह था. आज शिक्षाका प्रचार अधिक है परन्तु पारमार्थिक दृष्टि की ओर ध्यान नहीं. पहले समय में शिक्षा का उद्देश्य आत्महित था परन्तु वर्तमानकी शिक्षाका उद्देश्य अर्थार्जन और कामसेवन है. तदनन्तर गाजे बाजेके साथ अन्य जिन मन्दिरोंके दर्शन करते हुए बेलनगञ्जकी जैन धर्मशालामें ठहर गये. यहाँ पर एक सभा हुई जिसमें जनता का समारोह अच्छा था. श्वेताम्बर साधु भी अनेक आये थे. साम्यरसके विषय में व्याख्यान हुआ. विषय रोचक था, अतः सबको रुचिकर हुआ.

यहां एक दिन स्वप्नमें स्वर्गीया बाई भागीरथ जी की आज्ञा हुई—'हम तो बहुत समयसे स्वर्गमें देव हैं. यदि तू कल्याण

चाहता है तो इस संसर्गको छोड़. तेरी आयु अधिक नहीं, शान्ति से जीवन बिता. हम तुम्हारे हितैषी हैं. हम चाहते हैं कि तुम्हें कुछ कहें परन्तु आ नहीं सकते. तुमसे जन्मान्तरका स्नेह है. अभी एक बार तुम्हारा हमारा सम्बन्ध शायद फिरभी हो. यदि कल्याण मार्ग की इच्छा है तो सर्व उपद्रवोंका त्याग कर शान्त होनेका उपाय करो. परकी निन्दा प्रशंसाकी परवाह न करो.' यहां रहनेका लोगोंने आग्रह बहुत किया, हमने मथुरा प्रस्थान कर दिया.

आगरा से मथुरा—

आगरासे चलकर सिकन्दराबाद आगये. अकबर बादशाह का मकबरा देखने गये उसमें अरबी भाषामें सम्पूर्ण मकबरा लिखा गया है. मुसलमान बादशाहोंमें यह विशेषता थी कि वे अपनी संस्कृतिके पोषक वाक्योंको ही लिखते थे. जैनियोंमें बड़ी-बड़ी लागतके मन्दिर हैं परन्तु उनमें स्वर्णका चित्राम मिलेगा. जैनधर्मके पोषक आगम वाक्योंका लेख न मिलेगा. यदि इस मकबरामें पठन पाठनका काम किया जावे तो हजारों छात्र अध्ययन कर सकते हैं. इतने कमरोंमें अकारादि वर्णोंकी कक्षासे लेकर एम० ए० तककी कक्षा खुल सकती है, यहीं पर एक क्षत्रिय महोदय भी मिले. आप डाक्टर थे और कवि भी. रात भर आप के रुनकता ग्राममें रहे. ठाकुर साहबका अभिप्राय था कि एक दिन यहां निवास किया जावे तथा हमारे गृह पर आप पधारें, हमारे कुटुम्बीजन आपका दर्शन कर लेवें तथा वहीं पर आपका भोजन हो तब हमारा गृह शुद्ध होवे. परन्तु हृदयकी दुर्बलता और विचारों ने 'यह न होने दिया. यहांसे चले तो ठाकुर साहब बराबर जिस ग्राममें हमने निवास किया वहां तक आये तथा कहने लगे—'क्या यही जैनधर्म है ? जिस धर्ममें प्राणी मात्रके कल्याणका उपदेश है आप लोगों

ने अभी उसके मर्मको समझा नहीं. हमें दृढ़ विश्वास है कि धर्मका अस्तित्व प्रत्येक जीवमें है आप पैदल यात्रा कर रहे हैं इसलिये उचित तो यह था कि जहां पर जाते वहां आम जनता में धर्मका उपदेश करते. जो मनुष्य उसमें रुचि करते वहां एक या दो दिन रहकर उन्हें भोजनादि प्रक्रियाकी शिक्षा देते तथा उनके गृह पर भोजन करते तब जैनधर्मका प्रचार होता वर्णीजी! आपसे मेरा अति प्रेम हो गया है इसका कारण आपकी सरलता है परन्तु खेद है कि लोगोंने इसका दुरुपयोग किया तथा आपसे जो हो सकता था वह न हुआ. इसमें मूल कारण आपकी भीरु प्रकृति इतनी है कि मैं इनके यहां भोजन करने लगूँगा तो लोग मुझे क्या कहेंगे? यह आपकी कल्पना निःसार है, लोग क्या कहेंगे? हजारों मनुष्य सुमार्ग पर आजावेंगे. आजकल अहिंसा तत्त्वकी ओर लोगोंकी दृष्टि झुक रही है सो इसका मूल कारण यह है कि अहिंसा आत्माकी स्वच्छ पर्याय है. अहिंसा किसी एक जाति या एक वर्ण विशेष का धर्म नहीं है.'

इतना कह कर वह तो चले गये, हम निरुत्तर रह गये. दूसरे दिन आनन्द से श्री जम्बूस्वामी की निर्वाण भूमि पहुँच गये. संघका वार्षिकोत्सव था जिसके सभापति श्रीमान् सर सेठ हुकमचन्द्रजी साहब इन्दौरवाले थे. आपने भाषण देते हुए कहा—

बात कहन भू पग धरन करण खड्ग पद धार,
करनी कर कथनी करें ते विरले संसार.'

जैनसंघकी रक्षाके लिये आपने २५००० पचीस हजार रुपया का दान किया. उपस्थित जनताने भी यथाशक्ति दान दिया. इसी अवसर पर विद्वत्परिषद्की कार्यकारिणीकी बैठक भी थी

विचारणीय विषय थे मानवमात्रको दर्शनाधिकार, प्राचीन दस्सा शुद्धि आदि. जिन पर उपस्थित विद्वानोंमें पक्ष विपक्षको लेकर काफी चर्चा हुई परन्तु अन्तमें निर्णय कुछ नहीं हो सका. मथुरासे चलते-समय पद्मपुराणमें वर्णित मथुरापुरीका प्राचीन वैभव एक बार पुनः स्मृतिमें आ गया. यहां पर मधु राजाका शत्रुघ्नके साथ युद्ध हुआ. शत्रुघ्नने छलसे उसके शस्त्रागारको स्वाधीन कर लिया. अस्त्रादिके अभावमें राजा मधु शत्रुघ्नसे पराजित हो गया किन्तु गजके ऊपर स्थित जर्जरित शरीरवाले मधुने अनित्यत्वादि अनुप्रेक्षाओंका चिन्तन कर दिगम्बर वेषका अवलम्बन किया. उसी समय शत्रुघ्नने आत्मीय अपराध की क्षमा माँगी—हे प्रभो ! मुझ मोही जीवने जो आपका अपराध किया वह आपके तो क्षम्य है ही, मैं मोहसे क्षमा माँग रहा हूँ.

मथुरा से अलीगढ़—

मथुरासे चलकर वसुगाँव में ठहर गये. यहांसे हाथरस पहुँचे. नये मन्दिरमें सभा हुई. बाहरसे आये हुए विद्वानोंके व्याख्यान मनोरञ्जक थे. थोड़ा-सा समय हमने भी दिया. व्याख्यान श्रवण कर मनुष्योंके चित्त द्रवीभूत हो गये. हाथरससे सासनी आये. जिस समय श्री जिनेन्द्रदेवका रथ निकल रहा था उस समय यहांके प्रत्येक जातिवालोंने श्री जिनेन्द्रदेवको भेंट की. कोई जाति इससे मुक्त न थी. सर्व ह। जनताने श्री महावीर स्वामीकी जय बोली. यवन लोगोंने ४० रुपया भेंट किया तथा ब्राह्मण एवं वैश्योंने भगवानकी आरती उतारी. कहां तक कहें चर्मकारोंने २०० रुपया की भेंट की. खेद इस बातका है, हमने मान रक्खा है कि धर्मका अधिकार हमारा है. वह कुछ बुद्धिमें नहीं आता. धर्म वस्तु तो किसीकी नहीं, सर्व आत्मा धर्मके पात्र हैं, बाधक कारण जो हैं उन्हें दूर करना चाहिये. आज रात्रिको पुनः बाबा भागीरथजी का दर्शन हुआ. आपने कहा—

'क्या चक्रमें फँस अपनी शक्तिका दुरुपयोग कर रहे हो ? आत्माकी शान्ति पर पदार्थोंके सहकारसे बन्धनमें पड़ती है और बन्धनसे ही चतुर्गतिके चक्रमें यह जीव भ्रमण करता है. हम क्या कहें ? तुमने श्रद्धाके अनुरूप प्रवृत्ति नहीं की. त्याग वह वस्तु है जो त्यक्त पदार्थका विकल्प न हो तथा त्यक्त पदार्थके अभावमें अन्य वस्तुकी इच्छा न हो. नमकका त्याग मधुरकी इच्छा बिना ही सुन्दर है.' माघ वदी ६ को अलीगढ़ गये. गाजे-बाजेके साथ मन्दिरमें गये. आनन्दसे दर्शन कर मन्दिरकी धर्मशालामें ठहर गये. अलीगढ़ श्री स्वर्गीय पण्डित दौलतराम जी जन्मस्थान है. आपका पाण्डित्य बहुत ही प्रशस्त था, यहां सार्वजनिक सभा हुई मेरा भी व्याख्यान हुआ कि आत्मा अपने ही अपराधसे संसारी बना है और अपने ही प्रयत्नसे मुक्त हो जाता है. जब यह आत्मा मोही रागी द्वेषी होता है तब स्वयं संसारी हो जाता है तथा जब राग द्वेष मोहको त्याग देता है तब स्वयं मुक्त हो जाता है.

अलीगढ़ से मेरठ—

अलीगढ़से माघ सुदी को प्रातः १० बजे खुरजा पहुँच गये. खुर्जा आते ही उस ज्योतिषी भविष्यवाणी भी याद आ गई जिसने कहा था कि तुम वैशाखके बाद खुर्जा न रहोगे. खुर्जा में तीन दिन रह कर चल दिये. रात्रि होते होते एक ग्राममें पहुँच गये. यहाँ जिसके गृहमें निवास किया था वह क्षत्रिय था. रात्रिमें उनकी मांने मेरे पास एक चद्दर देखकर बड़ी ही दया दिखलाई. बोली—बाबा ! शरदी बहुत पड़ती है, रात्रिको नींद न आवेगी, मेरे यहां नवीन सोड (रजाई) रक्खी है, आप उसे लेकर रात्रिको सुख पूर्वक सो जाइये और मैं दूध लाती हूँ उसे पान कर लीजिये, मैंने कहा—मां जी ! मैं यही वस्त्र ओढ़ता हूँ तथा रात्रिको कुछ खान पान नहीं करता हूँ. बुढ़िया मां

बोली—अच्छा, प्रातःकाल मेरे यहां भोजन कर प्रस्थान करें. प्रातःकाल चलने लगे तो बूढ़ी मां आ गई और बोली कि क्या हो रहा है? हमने कहा—मां जी! जा रहे हैं. वह बोली तुम्हारी जो इच्छा सो करो किन्तु २) ले जाओ इनके फल लेकर सब लोग व्यवहारमें लाना तथा पुत्र से बोली—बेटा! घरके तांगामें इनका सामान भेज दो, मार्ग में हम लोग बुढ़िया माँकि सौजन्य पूर्ण व्यवहारकी चर्चा करते रहे. उसका बेटा महावीर राजपूत २ मील तक पहुँचाने आया और मेरे बहुत आग्रह करने पर वापिस लौटा. मेरे मनमें आया कि यदि ऐसे जीवों को जैनधर्म का यथार्थ स्वरूप दिखाया जाय तो बहुत जनता का कल्याण होवे.

खुर्जासे ४ मील चलकर बुलन्दशहर आ गये और वहाँ वालोंने शिष्टाचार के साथ हमें मन्दिरजीकी धर्मशालामें ठहरा दिया. मन्दिर में शास्त्र स्वाध्याय किया—मनुष्य जन्म का लाभ अति कठिन है, संयम का साधन इसी पर्यायमें होता है, संसार नाशका साक्षात् कारण जो रत्नत्रय है वह हो सकता है. मनुष्य ही महाव्रतका पात्र हो सकता है. ऐसे निर्मल मनुष्य जन्म को पाकर पञ्चेन्द्रियों के विषयमें लीन हो खो देना बुद्धिका दुरुपयोग है. अतः जहां तक बने आत्मतत्त्वकी रक्षा करो. प्रवचनके बाद बुलन्दशहरसे चले, मार्ग में दूसरे दिन एक वैष्णव धर्मको माननेवाली महिला आई और उसने बहुत से फल समर्पण किये. बहुत ही आदर से उसने कहा कि हमारा भारतवर्ष-देश आज जो दुर्दशापन्न हो रहा है उसका मूल कारण साधु लोगोंका अभाव है. प्रथम तो साधुवर्ग ही यथार्थ नहीं और जो कुछ है वह अपने परिग्रहमें लीन है. कोई उपदेश भी देते हैं तो तमाखू छोड़ो, भाँग छोड़ो, रात्रि में मत खाओ... यह उपदेश नहीं देते, क्योंकि वे स्वयं इन व्यसनोंके शिकार रहते हैं. यथार्थ उपदेश

के अभावमें ही देश का नैतिक चरित्र निर्मल होनेकी जगह मलिन हो रहा है. मेरी आप से नम्र प्रार्थना है कि आप अपनी पैदल यात्रा में प्राणीमात्र के लिये धर्मका उपदेश श्रवण करावें.

महिला चली गई और हृदय के अन्दर विचारोंका एक संघर्ष छोड़ गई. वहां से गुलावटी होते हुये हापुड़ आ गये' बागमें ठहर गये, मन्दिर में दो दिन प्रवचन सुन मनुष्य प्रसन्न हुये, हापुड़से मेरठ की ओर प्रस्थान कर दिया. कैली, खरखोंदा होते हुये मेरठ से इसी ओर २ मील दूरी पर एक बाग में ठहर गये. यहां बहुत जनसंख्या आकर एकत्र हो गई और गाजे बाजेके साथ मेरठ ले गई. लोगोंने महान् उत्साह प्रकट किया. अन्तमें श्री जैन बोर्डिङ्ग में ठहरगये. लोगोंने सहारनपुर गुरुकुलके लिये यथाशक्य सहायता दी. गुरुकुल संस्था उत्तम है परन्तु लोगोंकी दृष्टि उस ओर नहीं. मेरठमें चलकर फाल्गुन बदी ८ सं० २००५ को ३ बजे खतौली आये. लोगोंने मार्गमें चांदीके फूल बिखेरे. मैं तो इसमें कोई लाभ नहीं मानता. खतौलीमें प्रायः सभी सज्जन हैं. जैन कालेजमें प्रवचन था. मैंने भी कुछ कहा—

'आशाका त्याग करना ही सुखका मूल कारण है. जिन्होंने आशा जीत ली उन्होंने करने योग्य जो था वह कर लिया, आशाका विषय इतना प्रबल है कि कभी भी पूर्ण नहीं हो सकता.' एक दिन भैंसी गये, यहां पर १ चर्मकार है. उसकी प्रवृत्ति धर्मकी ओर है. पार्श्वनाथका चित्र रक्खे है और उसकी भक्ति करता है. यहांसे गंधारी, तिसना, वटावली और वसूमा होते हुए हस्तिनागपुर आगये. आनन्दसे श्रीजिनराजका दर्शन किया. यहां शान्ति, कुन्थु और अरहनाथ भगवानके गर्भ, जन्म तथा तप कल्याणक हुए थे. कौरव पाण्डवोंको भी राजधानी यही थी.

अकम्पनाचार्य आदि सात सौ मुनियोंकी रक्षा भी यहां हुई थी तथा रक्षाबन्धनका पुण्य पर्व भी यहींसे प्रचलित हुआ था. यहांके प्राचीन वैभव और वर्तमानकी निर्जन अवस्था पर दृष्टि डालते हुए जब विचार करते हैं तो अतीत और वर्तमानके बीच भारी अन्तर अनुभवमें आने लगता है.

देहली के लाला हरसुखरायजी के बनवाये मन्दिरमें श्रीशान्तिनाथ स्वामीका बिम्ब अतिरम्य है. एक दिन स्त्री समाजके सुधारके अर्थ भी व्याख्यान हुआ. मैंने कहा कि यदि मनुष्य चाहे तो स्त्रीसमाजका सहज कल्याण हो सकता है. यदि यह समाज मर्यादासे रहे तो कल्याण पथ दुर्लभ नहीं. सबसे प्रथम तो ब्रह्मचर्य पाले, स्वपतिमें संतोष करे तथा पुरुष वर्गको उचित है कि स्वदारमें सन्तोष करे. पुरुष तथा स्त्रीवर्ग अपनी इच्छाओं पर नियन्त्रण करे. लगभग बीस आदमियों ने ब्रह्मचर्य व्रत लिया, छोटे-छोटे बालकोंने रात्रि भोजन त्याग किया.

फागुन शुक्ला १२ सं० २००५ को मध्यान्होपरान्त १ बजे से गुरुकुलका उत्सव हुआ. प्रायः अच्छी सफलता मिली. हस्तिनागपुरका वर्तमान वातावरण अत्यन्त शान्तिपूर्ण है. यहां गुरुकुल जितना अच्छा कार्य कर सकता है उतना अन्यत्र नहीं. जैनसमाज को उचित है कि यहां पर १ विद्यालय खोलें जिसमें शरणार्थी लोगोंके बालकोंको अध्ययन कराया जावे तथा १ औषधालय खोला जावे जिसमें आम जनताको औषध बांटी जावे. चैत्र बदी ३ सं० २००५ को हस्तिनागपुरसे चलकर गणेशपुर मवाना, बसूमा, मोरापुर, ककरौली, होते हुए तिस्सा आ गये. मध्यान्हको आमसभा हुई. एक ब्राह्मणने जो कि मद्यपान करता था जीवन पर्यन्तके लिये मद्यपान छोड़ दिया, १ मुसलमान भी जीवघात छोड़ गया तथा एक चमारने मदिरा छोड़ दी. यहांसे कवाल, मंसूरपुर, बहलना होते हुए चैत्र बदी १४ को मुजफ्फर-

नगर आगये. वहां २००० आदमियोंका जुलूस निकला. २ तोला धूल फांकनेमें आई होगी. दिनके दो बजेसे सभा थी. उसमें बहुतसे नर-नारी आये. गुरुकुलकी अपील की १८ हजार रु० चन्दा हो गया. चैत्र सुदी ६ सं० २००६ को मुजफ्फरनगरसे चलकर रोहाना होते हुए फुटेसरा पहुँच गये. यहाँ मुसलिम समाजका बिशाल कालेज है जिसमें उनके उन्नतम ग्रन्थ पढ़ाये जाते हैं, २००० छात्र उसमें शिक्षा पाते हैं. बहुत ही सरल इनका व्यवहार है, बहुत मधुरभाषी हैं.

चैत्र सुदी १२ को सहारनपुर आगये. सहारनपुरके बाहर हजारों मनुष्योंका जमाव हो गया. बड़ी सजधजके साथ जुलूस निकाला. अगले दिन जैन बागमें प्रवचन हुआ, मनुष्योंकी भीड़ बहुत थी, तदपेक्षा स्त्री समाज बहुत था. दो बी. ए. लड़कों ने यह प्रतिज्ञा ली कि विवाहमें रुपया नहीं मांगेंगे. दो ने यह नियम लिया कि जो खर्च होगा उसमें से एक पैसा प्रति रुपया विद्यालय को देवेंगे. कई मनुष्योंने विवाहमें कन्या पक्षसे याञ्चा न करनेका नियम लिया. यहाँ १०—११ दिन रहे. सभी दिनोंमें समागम अच्छा रहा. बैशाख बदी १० को सरसावा आ गये. यहां १ घटनासे चित्तमें अति क्षोभ हुआ और यह निश्चय किया कि परका समागम आदि सब व्यर्थ है. बैशाख बदी १२ को वीरसेवामन्दिरका १३ वां वार्षिकोत्सव हुआ. आगामी दिन कन्या विद्यालयका वार्षिकोत्सव हुआ.

बैशाख बदी १३ को जगाधरी, आ गये. सब समाजने स्वागत किया. प्रवचनमें ब्राह्मण भी बहुत आये. जैनधर्मकी पदार्थ निरूपणकी शैलीसे बहुत प्रभावित हुए. कई मानवोंने ब्रह्मचर्य व्रत लिया तथा स्त्री समाजने महीन वस्त्रोंके परिधानका त्याग किया. जगाधरीसे चलकर रत्नपुर होते हुए कुतुबपुरी आ पहुँचे. २ बजे आमसभा हुई. यहां पर जो ठाकुर राणा थे

उन्होंने शिकार छोड़ दिया तथा मदिरा का भी त्याग कर दिया. ग्रामके अन्य प्रतिष्ठित लोगोंने भी मांस मदिराका त्याग किया. यहांसे समस्तपुर, नकुड़ होते हुए अम्बाड़ा आ गये. धर्मशाला में कई महाशयोंने जो कि हरिजनोंमें थे, मदिराका त्याग किया. कई महाशयोंने मांसका त्याग किया. अम्बाड़ा से इसलामपुर आ गये मार्गमें १ पठानने ६ आम उपहारमें दिये. १ जैनी भाई लेनेको प्रस्तुत नहीं हुए. मैंने कहा कि अवश्य लेना चाहिये. आखिर यह भी तो मनुष्य हैं. इनके भी धर्मका विकास हो सकता है. इसलामपुरसे रामनगर आये. जैनियों की अपेक्षा अन्य मनुष्योंने बड़े स्नेहसे धर्मके प्रति जिज्ञासा प्रकट की तथा उनके चित्तमें मार्गका विशेष आदर हुआ. नानौता आ गये. २ बजे बाद उत्सव हुआ. कई सहस्र मनुष्य उत्सवमें आये. कीर्तन किया गया नानौतासे तीतरों, कच्चीगढ़ी, पक्कीगढ़ी होते हुए शामली आये. प्रातःकाल पूर्व एकघटना हुई स्वप्नमें बाबा भागीरथ जीको दिगम्बर मुद्रामें देखा. मैंने कहा—'महाराज ! आप दिगम्बर हो गये ? आप तो यहां पञ्चम गुणस्थानवाले श्रावक थे ? यहांसे स्वर्ग गये, देव पर्याय पाई. फिर यह मुद्रा कहां पाई ?' उन्होंने कहा—'भाई गणेशप्रसाद ! तुम बड़े भोले हो. मैं तुम्हारे समझानेके लिये आया हूं. यद्यपि मै अभी सागरों पर्यन्त आयु भोग कर मनुष्य होऊँगा तब दिगम्बर पदका पात्र बनूँगा, परन्तु तुमको कहता हूँ कि तुमने जो पद अंगीकार किया है उसकी रक्षा करना. व्रत धारण करना सरल है, परन्तु उसकी रक्षा करना कठिन है. बाह्यमें १ चद्दर और २ लंगोटी रखना. एक बार पानी पीना कठिन नहीं तथा आजन्म निर्वाह करना कोई कठिन नहीं. किन्तु आभ्यन्तर निर्मलता होना अति कठिन है.'

कांदलामें ग्रामके सबसे बड़े प्रसिद्ध मौलवीसाहबने २ आम भोजनके लिये दिये. कांदलासे चलकर गंगेरु, किट्ठल

छपरौली, नगला, बावली होते हुए अषाढ़ बदी ५ को बड़ौत आ गये. बड़ी शानसे स्वागत किया. कालेज भवनमें बहुत भीड़ थी. दूसरे दिन प्रातःकाल प्रवचन हुआ, भीड़ बहुत थी. बड़ौत में ६ दिन लग गये. बड़ौतसे बड़ौली, मसूरपुर, बागपत, टटेरी-मण्डी होते हुए खेखड़ा आ गये. इसमें बाबा भागीरथजी प्रायः निवास करते थे. २०० घर जैनियोंके हैं, यहांसे बड़ेगांव, टीला, शहादरा होते हुए राजकृष्णजी के बागमें ठहर गये.

४२

दिल्लीकी भूल भुलैयामें

आषाढ़ सुदी ८ सं० २००६ को एक विशाल जुलूसके साथ दिल्लीके सुप्रसिद्ध लाल मन्दिर में आ गये. जनता बहुत थी फिर भी प्रबन्ध सराहनीय था. यहीं पर लाल मन्दिरकी पञ्चा-यतने अभिनन्दन पत्र समर्पित किया मैंने भी अपना अभिप्राय जनता के समक्ष व्यक्त किया—'त्याग से ही कल्याण मार्ग सुलभ है. त्याग के बिना यह जीव चतुर्गतिरूप संसारमें अनादिकाल से भ्रमण कर रहा है, आदि. अनाथाश्रम के भवन में ठहराया गया ! मुरार से लेकर यहां तक सात माहके निरन्तर परिभ्रमण से शरीर शान्त हो गया था तथा चित्त भी क्लान्त हो चुका था, इसलिये यहां इस मञ्जिल पर आते ही ऐसा जान पड़ा मानो भार उतर गया हो.

वर्तमानमें स्वतन्त्र भारतकी राजधानी होनेसे दिल्लीकी शोभा अनूठी है. यहांकी जन संख्या २२ लाख से कम नहीं है. जिसमें

जैनियों की जनसंख्या पच्चीस हजारसे कम ज्ञात नहीं होती. यहां अनेक जैन श्रीमन्त, राजमन्त्री तथा कोषाध्यक्ष हो गये हैं. जैन संस्कृति के संरक्षक अनेक जैन मन्दिर समय-समय पर बनते रहे हैं. वर्तमानमें जैनियोंके २६ मन्दिर और ४-५ चैत्यालय हैं. ३–४ मन्दिरोंमें अच्छा विशाल शास्त्रभण्डार भी है. वर्तमान में लाल मन्दिर सबसे प्राचीन है, उसका निर्माण शाहजहां के राज्य काल में हुआ था. दूसरा दर्शनीय ऐतिहासिक मन्दिर 'नया मन्दिर' राजा हरसुखराय का है. इस मन्दिरमें पच्चीकारीका बहुत बारीक और अनूठा काम है जो कि ताजमहलमें भी उपलब्ध नहीं होता. वि० सं० १८५७ में इसे बनवाना शुरू किया था और सात वर्षके कठोर परिश्रमके बाद वि० सं० १८६४ में बनकर तैयार हुआ था. उस समय इस मन्दिरकी 'लागत लगभग सात लाख रुपया आई थी जब कि कारीगरको चार आना और मजदूर को दो आना प्रतिदिन मजदूरीके मिलते थे.

मन्दिरमें प्रवेश करते ही दर्शकको मुगलकालीन १५० वर्ष पुरानी चित्रकलाके दर्शन होते हैं. मूर्तियोंमें स्फटिक, नीलम और मरकतकी मूर्तियां भी विद्यमान हैं. सरस्वती भवनमें प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश और हिन्दी आदिके १८०० के लगभग हस्त लिखित ग्रन्थ तथा २०० के लगभग हिन्दी संस्कृतके गुटकों का संकलन है. इन ग्रन्थोंमें सबसे प्राचीन ग्रन्थ वि० सं० १४८६ का लिखा हुआ है. ५०० से अधिक मुद्रित ग्रन्थ भी संगृहीत हैं.

पावन दशलक्षण पर्व—

दशलक्षण पर्व आ गया. जैन समाज में दशलक्षण पर्वका महत्त्व अनुपम है. भारतमें सर्वत्र जहाँ जैन रहते हैं वहां इस समय यह पर्व समारोहके साथ मनाया जाता है. पर्वका अर्थ

तो यह है कि इस समय आत्मामें समाई हुई कलुषित परिणति को दूरकर उसे निर्मल बनाया जाय पर लोग इस ओर ध्यान नहीं देते. बाह्य प्रभावनामें ही अपनी सारी शक्ति व्यय कर देते हैं.

हरिजन मन्दिर प्रवेश आन्दोलन

इसी समय समाज में हरिजन मन्दिर प्रवेश आन्दोलन जोर पकड़ रहा था. कुछ लोग यह कहने लगे 'कि हरिजनों को मन्दिर प्रवेशकी आज्ञा मिलनेसे धर्म विरुद्ध काम हो जायगा, इसके विरुद्ध कुछ लोगोंका यह कहना रहा कि यदि हरिजन शुद्ध और स्वच्छ होकर धार्मिक भावनासे मन्दिर आना चाहते हैं तो उन्हें बाधा नहीं होना चाहिये. मन्दिर कल्याणके स्थान हैं और कल्याणकी भावना लेकर यदि कोई आता है तो उसे रोका क्यों जाय ? इस चर्चा को लेकर एक दिन मैंने कह दिया कि हरिजन संज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तक मनुष्य हैं. उनमें सम्यग्दर्शन प्राप्त करने की सामर्थ्य है, सम्यग्दर्शन ही नहीं व्रत धारण करने की भी योग्यता है. यदि कदाचित् काललब्धि वश उन्हें सम्यग्दर्शन या व्रतकी प्राप्ति हो जाय तबभी क्या भगवान के दर्शनसे वञ्चित रहे आवेंगे ? समन्तभद्राचार्यने तो सम्यग्दर्शन सम्पन्न चाण्डालको भी देव संज्ञा दी है पर आज के मनुष्य धर्मकी भावना जागृत होने पर भी उसे जिन दर्शन-मन्दिर प्रवेशके अनधिकारी मानते हैं.···मेरे इस वक्तव्यको लेकर समाचार पत्रोंमें लेख प्रतिलेख लिखे गये. अनेकोंको हमारा वक्तव्य पसन्द आया. अनेकोंकी समालोचनका पात्र हुआ पर अपने हृदयका अभिप्राय मैंने प्रकट कर दिया. मेरी तो श्रद्धा है कि संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीव सम्यग्दर्शनके अधिकारी हैं यह आगम कहता है. सम्यग्दर्शनके होनेमें वर्ण और जातिविशेषकी आवश्यकता नहीं.

हम लोग इतने स्वार्थी हो गये कि विरले तोयहाँ तक कह देते हैं कि यदि इनका सुधार हो जायगा तो हमारा कार्य कौन करेगा ? लोक में अव्यवस्था हो जायगी, अतः इनको उच्च धर्मका उपदेश ही नहीं देना चाहिये. जगत्में इतना स्वार्थ फैल गया है कि जिनके द्वारा हमारा सभी व्यवहार बन रहा है उन्हींसे हम घृणा करते हैं.

देखो, विचारो, जो मनुष्य संज्ञी है यदि उसे संसारसे अरुचि हो तथा धर्म साधन करनेकी उसकी भावना जागृत हो तो उसे कोई मार्ग भी तो होना चाहिये. मन्दिर एक आलम्बन है. उससे वञ्चित रहा, आप स्वयं उससे बोलना नहीं चाहते, वाङ्मय आगम है उसके पढ़नेका अधिकारी नहीं, अतः स्वाध्याय नहीं कर सकता, आप सुनाना नहीं चाहते तब वह तत्त्वज्ञानसे वञ्चित रहेगा, तत्त्वज्ञानके बिना संयमका पात्र कैसे होगा और संयमके बिना आत्माका कल्याण कैसे कर सकेगा ? इस तरह आपने भगवानका जो सार्वधर्म है उसकी अवहेलना की. धर्म प्राणी मात्रका है उसका पूर्ण विकास मनुष्य पर्यायमें ही होता है, अतः चाहे चाण्डाल हो अथवा महान दयालु हो, धर्मश्रवणके अधिकारी दोनों ही हैं. अतः जाति अभिमानका परित्यागकर प्राणी मात्र पर दया करो, जिनके आचरण मलिन हैं उन्हें सदाचारकी शिक्षा दो.

नम्र निवेदन—

भादों सुदी पूर्णिमाके दिन, दिल्लीसे निकलनेवाले हिन्दुस्तान दैनिक पत्रमें यह लेख छपा हुआ दृष्टिगोचर हुआ कि वर्णी गणेशप्रसाद शूद्र लोगोंके मन्दिर प्रवेशके पक्षमें हैं...अस्तु, हम किसी पक्ष में नहीं, किन्तु यह अवश्य कहते हैं कि धर्म आत्मा की परिणति विशेष है और उसका विकास संज्ञी पञ्चेन्द्रियमें

आरम्भ हो जाता है. जिन्हें हरिजन कहते हैं इनके भी व्रत प्रतिमा हो सकती है. ये बारह व्रत पाल सकते हैं, धर्म की भी अकाट्य श्रद्धा इन्हें हो सकती है. हरिजनोंमें उत्पत्ति होनेसे वह इसका पात्र नहीं यह कोई नहीं कह सकता. वे निन्द्यकार्य करते हैं इससे सम्यग्दर्शनके पात्र न हों यह कोई नियामक कारण नहीं ? क्योंकि उच्च गोत्र-वाले भी प्रातःकाल शौचादि क्रिया करते हैं तथा यह कहो कि उस कार्यमें हिंसा बहुत होती है इससे वे सम्यग्दर्शनादिके पात्र नहीं तब मिलवालोंके जो हिंसा होती है-हजारों मन चमड़ा और चर्बीका उपयोग होता है तदपेक्षा तो उनकी हिंसा अल्प ही है, अतः हिंसाके कारण वे दर्शनके पात्र नहीं यह कहना उचित नहीं. यदि यह कहा जाय कि भोजनादिकी अशुद्धताके कारण वे दर्शन के पात्र नहीं तो प्रायः इस समय बहुत ही कम ऐसे मनुष्य मिलेंगे जो शुद्ध भोजन करते हैं, अतः यह निर्णय समुचित प्रतीत होता है कि जो मनुष्य धर्मकी श्रद्धा रखता हो वह भी जिनदेव के दर्शनका पात्र हो सकता है. यह ठीक है कि उसके व्यवहार में शुद्ध वस्त्रादि होना चाहिये तथा मद्य मांस मधुका त्यागी होना चाहिये. व्यवहारधर्मकी यह बात है.

निश्चयधर्मका सम्बन्ध आत्मासे है. उसका तो यहां पर विवाद ही नहीं है, क्योंकि उसके पालनके प्रत्येक संज्ञी जीव पात्र हो सकते हैं. धर्म प्रत्येक प्राणीका प्राण है. आगममें शूद्रके क्षुल्लक पर्याय हो सकती है ऐसा विधान है तब क्या शूद्र लोग उसे आहार नहीं दे सकते ? यह समझमें नहीं आता. यदि आहार दे सकते हैं तो श्रीजिनेन्द्रदेवके दर्शन अधिकारी न हों यह बुद्धि में नहीं आता. केवल हठवाद को छोड़कर अन्य युक्ति नहीं.

दिल्लीके शेष दिन—

आसौज वदी ४ सं० २००६ को मेरा जयन्ति उत्सव था जिसमें उद्योगमन्त्री भी पधारे थे. आपने समयानुकूल अच्छा भाषण दिया. अनेक लोगोंने श्रद्धाञ्जलियां दी जिन्हें सुनकर मुझे बहुत संकोच उत्पन्न हुआ. मैंने तो उत्सव में यही कहा— 'संसार के प्राणी मात्र पर दया करो. स्पृश्यास्पृश्य की चर्चा लोग करते है पर जैनधर्म कब कहता है कि तुम अस्पृश्योंको नीच समझो. तुम्हीं लोग तो अस्पृश्योंको जूंठन खिलाते हो और यहां बड़ी-बड़ी बातें बनाते हो. नियम करो कि हम अस्पृश्योंको अपने जैसा भोजन देंगे फिर देखो अपने प्रति उनका हृदय कितना पवित्र और ईमानदार रहता है. हृदयपर हृदयका असर पड़ता है. आप धोबीका धुला कपड़ा उठानेमें दोष समझते हैं पर शरीरपर चर्बीसे सने कपड़े बड़े शौकसे धारण करते हैं. क्या यही जैनधर्म है? जैनधर्म पवित्रताका विरोधी नहीं पर घृणाको वह कषाय अतएव हेय समझता है. क्या कहें लोग बाह्य आचारमें तो बालकी खाल निकालते हैं पर अन्तरङ्गको शुद्ध करनेकी ओर ध्यान नहीं देते. पर मेरे मनमें जो बात थी वह व्यक्त कर दी. मैं तो इस पक्षका हूँ कि प्राणीमात्रको धर्म-साधनका अधिकार है, पञ्च पाप त्यागनेका अधिकार प्रत्येक मनुष्यको है, क्योंकि जब उसकी आत्मा बुद्धिपूर्वक पाप करती है तब उसे छोड़ भी सकती है.' दिल्लीमें हरिजन विषयक चर्चा हमारे अन्तरङ्गकी परीक्षा रही. जयन्तीका उत्सव समाप्त हुआ, लोग अपने-अपने घर गये.

आसौज सुदी ८ का दिन था. दरियागंजमें शान्तिसे स्वाध्याय कर रहा था कि एक प्रतिष्ठित व्यक्तिने सुनाया कि— आचार्य शान्तिसागरजीने कहा है कि यदि वर्णीका मत हरिजनके

विषयमें हमारे मन्तव्यानुकूल नहीं तब वे इसमें मौन धारण करें, यदि कुछ बोलेंगे तब उनके हक्कमें अच्छा न होगा अर्थात् उनको जैन दिगम्बर मतानुयायी अपने सम्प्रदायबलसे पृथक् कर देवेंगे.' इसका तात्पर्य यह है कि दिगम्बर जैन उन्हें आदर की दृष्टिसे न देखेंगे. मैंने यह विचार किया कि मनुष्योंकी दृष्टिसे कुछ कल्याण तो होता नहीं और न मनुष्योंकी दृष्टिमें आदर पानके लिये मैंने वीतराग जिनेन्द्रका धर्म स्वीकार किया है. धर्म आत्मा की परिणति है, उसे कोई रोक नहीं सकता. एक दो नहीं सब मिलकर भी मेरी वीतराग धर्मसे श्रद्धा को दूर नहीं कर सकते. लौकैषणाकी मुझे अभिलाषा नहीं है. मैंने विचार किया कि अच्छा हुआ एक अभ्यन्तर परिग्रहसे मुक्त हुए.

हम दिल्लीमें आनन्दसे ३ माह २४ दिन रहे, सर्व प्रकारकी सुविधा रही. यहांपर जनतामें धर्म श्रवणका अच्छा उत्साह रहा. समय-समयपर अनेक वक्ताओंका यहां समागम होता रहता था. दिल्ली भारतकी राजधानी होनेसे व्याख्यान सभाओंमें मनुष्य संख्या पुष्कल रहती थी. कार्तिक सुदी २ को दिनके २ बजे दिल्लीसे प्रस्थान कर दिया. मार्गमें अत्यन्त भीड़ थी, लोगों को विशेष अनुराग था. सहस्रों स्त्री पुरुषोंके अश्रुपात आ गया. मोहकी महिमा अपरम्पार है. बहुतसे मानव तो बहुत ही दुःखी हुए चार माहके संपर्कने मनुष्योंके मनको मोहयुक्त कर दिया. इसीलिये पृथक् होते समय उन्हें दुःखका अनुभव हुआ.

चाहत जो मन शान्ति सुख तजहु कल्पना जाल ।
व्यर्थ भरम के भूत में क्यों होते बेहाल ॥ १ ॥
यह जग की माया विकट जो न तजोगे मित्र ।
तो चहुँगत के बीच में पावोगे दुख चित्र ॥ २ ॥

४३

नगर-नगर में, डगर-डगर में

शाहादरामें दिल्ली से ५० नर नारी आ गये. वही रागका अलाप, कोई अन्य बात नहीं थी. बहुत मनुष्योंका कहना था कि आप दिल्ली लौट चलें, जो कहो सो कर देवें. पर हमको तो कुछ करवाना नहीं, भूलभुलैयामें फँसकर क्या करता ? यहां से चलकर गाजियाबाद आये. यहां पर एक वर्णी शिक्षा मन्दिर की स्थापना हुई. यहांसे बेगमाबाद, मुरादनगर, मोदीनगर होते हुए मेरठ पहुँच गये. श्री लाला फिरोजीलालजी दिल्ली से आये. बहुत उदार और योग्य हैं. आपका धर्मप्रेम सराहनीय है. यहांसे तोपखाना, छोटेमुहाना होकर दूसरे दिन प्रातःकाल श्री हस्तिनापुर आ गया. गुरुकुलका नवीन भवन बनकर तैयार था अतः मगसिर बदी २ को ६ बजे उसका उद्घाटन हुआ. मगसिर बदी ३ को गणेशपुर आ गये.

इटावा की ओर—

यहां से मवाना, छोटे मुहाना, तोपखाना, फफूँदा, खरखौदा, कौनी, हापुड़, गुलावटी, बुलन्दशहर, मामन, मरिपुर, नगली, मवाना, भरतरी, अलीगढ़, पहाड़ी, अकराबाद, गोपीबाजार, सिकन्दराराऊ, रतवानपुर, भदरवास, पिलुआ, एटा, छिछैना, मलावन, टटऊ, कुरावली, मैनपुरी, अंडसी, करहल होते हुये पौष सुदी ५ को जसवन्तनगर आगये. यहां पर जनताने मनःप्रसार कर स्वागत किया. बाहरसे भी बहुतसे मनुष्य आये थे. पौष सुदी ६ को बड़े वेग से ज्वर आ गया, ८ बजे तक बड़ी बेचैनी रही उसीमें नींद आ गई. एक बार खुली अन्तमें कुछ शान्ति आई परन्तु पैरोंमें बातकी बहुत वेदना रही. दोनों पैर सूज गये. पैरों की

वेदनाका बहुत वेग बढ़ गया परन्तु असन्तोष कभी नहीं आया. ज्वर भी यदा कदा आ ही जाता था. इसलिए लोग पाटे पर बैठाकर इटावा ले आये.

इटावा और उसके अञ्चलमें—

यहां गाड़ीपुराकी धर्मशालामें ठहरे. स्थान अच्छा है. मन्दिर भी इसीमें है. आठ दशदिन बड़ी व्यग्रतामें बीते. दस दिन बाद जिनेन्द्रके दर्शन किये. स्वर्गीय ज्ञानचन्द्रजी गोलालारेकी धर्मपत्नी धनवन्ती देवीने ७५०००) पचहत्तर हजार रुपया जैन पाठशाला के अर्थ प्रदान किया. माघ शुक्ल ५ सोमवार दिनांक २३ जनवरी१९५० को उसका मुहूर्त था, उद्घाटन मेरे हाथोंसे हुआ. पाठशालाका नाम श्री ज्ञानधन जैन संस्कृत पाठशाला रक्खा गया.

२६ जनवरीका दिन आ गया. आजसे भारतमें नवीन विधान लागू होगा अतः सर्वत्र उत्साहका वातावरण था. श्रीयुत महाशय डा० राजेन्द्रप्रसादजी विहारनिवासी इसके सभापति होंगे. आप आस्थामय उत्तम पुरुष हैं. भारतको स्वतन्त्रता मिली परन्तु इसकी रक्षा निर्मल चारित्रसे होगी. यदि हमारे अधिकारी महानुभाव अपरिग्रहवाद को अपनावें तथा अपने आपको स्वार्थकी गन्धसे अदूषित रक्खें तो सरल रीतिसे स्वपरका भला कर सकते हैं. यहां नीलकण्ठ नामक स्थान है जिसके कूपका जल अत्यन्त स्वास्थ्यप्रद है. यहां रहते हुए मैंने उसीका जल पिया. एकान्त शान्त स्थान है. अधिकांश मैं दिनका समय यहीं व्यतीत करता था. फाल्गुनका मास लग गया और ऋतु में परिवर्तन दिखने लगा. भिण्डसे बहुत से मनुष्य आये और उन्होंने भिण्ड चलनेका आग्रह किया, अतः फागुन कृष्ण ५ को डेढ़ बजे प्रस्थान किया.

उदी, बरही, फूफ, दीनपुरा, होते हुए भिण्ड पहुँच गये. मध्याह्न दो बजे से नसियामें सभा हुई जन संख्या अच्छी थी. यहाँ कभी गोलसिंघारोंके मन्दिरमें और कभी चैत्यालयमें प्रवचन होता था जनता अच्छी आती थी. नौ-दस दिन यहां रहनेके बाद इटावाकी नशियाँ में आ गये, इटावाके अञ्चलमें भ्रमण कर यही अनुभव किया कि सभी मनुष्योंके धर्मकी आकांक्षा रहती है तथा सबको अपना उत्कर्ष भी इष्ट है परन्तु मोहके नशामें अन्धे कैसी दशा हो रही है यही अकल्याणका मूल है. मोह एक ऐसी मदिरा है कि जिसके नशामें यह जीव स्व को भूल परको अपना मानने लगता है. चैत्र कृष्ण ३ संवत् २००६ को प्रातःकाल यहां उदासीनाश्रम की स्थापना हो गई.

हरिजन मन्दिर प्रवेश आन्दोलन

जब से हरिजन मन्दिर प्रवेशकी चर्चा चली कुछ लोगोंने अपने स्वभाव या पक्ष विशेषकी प्रेरणासे हरिजन मन्दिर प्रवेश के विधि निषेध साधक आन्दोलनोंको उचित-अनुचित प्रोत्साहन दिया. कुछ लोगोंको जिन्हें आगमके अनुकुल किन्तु अपनी धारणाके प्रतिकूल विचार सुनाई दिये उन्होंने मेरे प्रति जो कुछ मनमें आया ऊटपटाग कह डाला. इससे मुझे जरा भी रोष नही हुआ. एक महाशयने तो जैनमित्रमें यहां तक लिखा दिया कि तुम्हारा क्षुल्लक पद छीन लिया जावेगा, मानों धर्मकी सत्ता आपके हाथोंमें आ गई हो. यह 'संजद' पद नहीं जो हटा दिया. मेरा हृदय यह साक्षी देता है कि मनुष्य पर्यायवाला चाहे वह किसी जातिका हो कल्याणमार्गका पात्र हो सकता है. शूद्रभी सदाचारका पात्र है.

मुझे धमकी दी कि पीछी कमण्डलु छीन लेवेंगे, छीन लो, सब अनुयायी मिल जाओ, चर्या बन्दकर दो परन्तु जो हमारी श्रद्धा धर्म

में है क्या उसेभी छीन लोगे ? मेरा हृदय किसीकी बन्दर घुड़की से नही डरता. मेरे हृदयमें दृढ़ विश्वास है कि अस्पृश्य शूद्र सम्यग्दर्शन और व्रतों का पात्र है. अस्पृश्य शूद्रादिके मन्दिर आने से मन्दिरमें अनेक प्रकारके विघ्न नहीं लाभ ही होगा. जो हिंसादि पाप संसारमें होते हैं यदि वह अस्पृश्य शूद्र, जैन धर्मको अङ्गीकार करेंगे तो वह महापाप अनायास कम हो जावेंगे.

पाप त्यागकी महिमा है, उत्तम कुलमें जन्म लेनेसे उत्तम हो गये यह दुराग्रह छोड़ो. उत्तम कुलकी महिमा सदाचारसे है दुराचार से नहीं. नीच कुलीन मलिनाचारसे कलंकित हैं, इन पापोंसे यदि वे परे हो जावें तब भी आप क्या उन्हें अस्पृश्य मानेंगे ? वे यदि किसी आचार्य महाराजके सानिध्यको पाकर पापोंका त्याग कर देवें तो क्या वे साधु नहीं हो सकते ? अतः सर्वथा किसीका निषेध कर अधर्मके भागी मत बनो. हम तो सरल मनुष्य हैं जो आपकी इच्छा हो सो कह दो आप लोग ही जैनधर्मके ज्ञाता और आचरण करनेवाले रहो परन्तु ऐसा अभिमान मत करो कि हमारे सिवाय अन्य कोई कुछ नहीं जानता.

पीछी कमण्डलु छीन लेवेंगे यह आचार्य महाराजकी आज्ञा है सो पीछी कमण्डलु तो बाह्य चिह्न हैं इनके कार्य तो कोमल वस्त्र तथा अन्य पात्रसे हो सकते हैं. पुस्तक छीनने का आदेश नहीं दिया इससे प्रतीत होता है कि पुस्तक ज्ञानका उपकरण है वह आत्माकी उन्नतिमें सहायक है उसपर आपका अधिकार नहीं जैन दर्शनकी महिमा तो वही आत्मा जानता है जो अपनी आत्माको कषायभावोंसे रक्षित रखता है. अस्तु, हरिजन विषयक यह अन्तिम वक्तव्य देकर मैं इस ओर से तटस्थ हो गया.

वैशाख शुदी ३ अक्षय तृतीयाका दिन था, मैंने कहा कि आजका दिन महान, पवित्र और उदारताका दिन है. आज श्री आदिनाथ तीर्थंकर को श्रेयान्स राजाने इक्षुरसका आहार दिया था. आज बङ्गाल तथा पञ्जाब आदिके जो मनुष्य गृहविहीन होकर दु:खी हो रहे हैं उन्हें सहायता पहुँचावें. जिनके पास पुष्कल भूमि है उसमें गृहविहीन मनुष्योंको बसावें तथा कृषि करनेको देवें, जिनके पास मर्यादासे अधिक वस्त्रादि हैं वे दूसरों को देवें. मैं तो यहां तक कहता हूँ कि आप जो भोजन ग्रहण करते हैं उसमेंसे भी कुछ अंश निकालकर शरणागत लोगोंकी रक्षामें लगा दो.

विद्वत्परिषद् का साहस—

अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्वत् परिषद्की कार्य-कारिणी समिति बुलानेका भी विचार स्थिर हुआ. सर्व सम्मति से इसके लिये ज्येष्ठ शुक्ल ५ सं० २००७ का दिन निश्चय किया गया. विद्वत्परिषद् की कार्यकारणीकी बैठक हुई. धवल सिद्धांत के ६३ वें सूत्र में 'संजद पद आवश्यक है' इस विषयको लेकर निम्न प्रकार प्रस्ताव पास हुआ—

'फाल्गुन शुक्ला ३ वीर निर्वाण सं० २४७६ को गजपन्थामें आचार्य श्री १०८ शांतिसागरजी महाराज द्वारा की गई जीवस्थान सत्प्ररूपणाके ६३ वें सूत्रसे ताड़पत्रीय मूल प्रतिमें उपलब्ध 'संजद' पदके निष्कासनकी घोषणापर विचार करनेके बाद भारतवर्षीय दि० जैन विद्वत्परिषद्की यह कार्यकारिणी जून सन् ४७ में सागर में आयोजित विद्वत्सम्मेलनके अपने निर्णयको दुहराती है तथा इस प्रकारसे ताम्रपत्रीय एवं मुद्रित प्रतियोंमें 'संजद' पद निष्का-सनकी पद्धतिसे अपनी असहमति प्रकट करती है.' बैठक समाप्त होनेपर विद्वान् लोग अपने अपने स्थानपर चले गये.

सच्ची स्वतन्त्रता—

श्रावण शुक्ला २ सं० २००७ को १५ अगस्तका उत्सव नगर में था. 'सदियोंके बाद भारतवर्ष आजके दिन बन्धनसे मुक्त हुआ है' इसलिये प्रत्येक भारतवासीके हृदयमें प्रसन्नताका अनुभव होना स्वाभाविक है. आजके दिन भारतको स्वराज्य मिला, ऐसा लोग कहते हैं पर परमार्थमे स्वराज्य कहाँ मिला ? जब आत्मा परपदार्थके आलम्बनसे मुक्त हो आत्माश्रित हो जावे तब स्वराज्य मिला ऐसा समझना चाहिये. खेद इस बातका है कि इस स्वराज्यकी ओर किसीकी दृष्टि नहीं जा रही है.

पर्यूषण पर्व-

धीरे-धीरे पर्यूषण पर्व आ गया. पर्यूषण सालमें तीन बार आता है—भाद्रपद, माघ और चैत्रमें, परन्तु भाद्रपदके पर्यूषणका प्रचार अधिक है. पर्वके समय प्रत्येक मनुष्य अपने अभिप्राय को निर्मल बनानेका प्रयास करते हैं और यथार्थमें पूछा जाय तो अभिप्राय की निर्मलता ही धर्म है. पर्वके बाद आश्विन कृष्णा प्रतिपदा क्षमावणीका दिन था परन्तु जैसा उसका स्वरूप है वैसा हुआ नहीं. केवल ऊपरी भावसे क्षमा माँगते हैं. एक दूसरेके गले लगते हैं. इससे क्या होनेवाला है ?

आश्विन कृष्ण ४ को मेरे जन्मदिनका उत्सव था, सबने प्रशंसामें चार शब्द कहे और हमने नीची गरदनकर उन्हें सुना. पर्यूषणपर्व सम्बन्धी चहल-पहल भी जयन्ती उत्सवके साथ समाप्त हुई. चतुर्मासकी समाप्तिके बाद मार्गशीर्ष कृष्ण पञ्चमीको इटावा से भिण्डके लिये प्रस्थान किया. जाते समय लोगोंको बहुत दुःख हुआ.

४४

फीरोजाबाद में विविध समारोह

भिण्ड से अनेक ग्रामों में होते हुए माघ शुक्ल ४ सं० २००७ को फीरोजाबाद पहुँच गये. यहां पर श्री आचार्य सूर्यसागरजी महाराजका दर्शन हुआ. आप बहुत ही शान्त तथा उपदेष्टा हैं. आपके प्रवचनसे हमको पूर्ण शान्ति हुई. श्री छदामीलालजीने फीरोजाबादमें बहुत भारी उत्सवका आयोजन किया था. इस प्रान्तका यह वर्तमान कालीन उत्सव सबसे निराला था. क्या त्यागी, क्या व्रती, क्या विद्वान्, क्या सेठ, क्या राजनीतिमें काम करनेवाले—सब लोगोंके लिये मेलामें एकत्रित करनेका प्रयास किया था. मेलाका बहुत अधिक विस्तार था. उत्सवका उद्घाटन उत्तरप्रदेशके तात्कालिक मुख्यमंत्री श्री पन्तजीने किया था. श्री आचार्य सूर्यसागरजी तथा हम लोगोंका नगर प्रवेशका उत्सव माघ शुक्ल ५ सं० २००७ को सम्पन्न हुआ था. बहुत अधिक भीड़ तथा जुलूसकी सजावट थी. माघ शुक्ला ११ को मध्याह्नके बाद १ बजेसे श्री महाराजकी अध्यक्षतामें व्रती सम्मेलनका उत्सव हुआ. जिसमें अनेक विवाद ग्रस्त विषयोंपर चर्चा हुई.

चरणानुयोगके विरुद्ध प्रवृत्ति करनेवाले व्रतियोंको महाराजने शान्त भावसे उपदेश दिया कि जैनागममें व्रत न लेनेको अपराध नहीं माना है, किन्तु लेकर उसमें दोष लगाना या उसे भङ्ग करना अपराध बताया है अतः ग्रहण किये हुए व्रतको प्रयत्न पूर्वक पालन करना चाहिये. मनुष्य पर्यायका सबसे प्रमुख कार्य चारित्र धारण करना ही है इसलिये यह दुर्लभ पर्याय पाकर अवश्य ही चारित्र धारण करना चाहिये. कितने ही त्यागी लोग तीर्थ यात्रादिके बहाने गृहस्थोंसे पैसेकी याचना करते हैं यह मार्ग

अच्छा नहीं है. यदि याचना ही करनी थी तो त्यागका आडम्बर ही क्यों किया ? त्याग का आडम्बर करनेके बाद भी यदि अन्तःकरणमें नहीं आया तो यह आत्मवञ्चना कहलावेगी.

त्यागीको किसी संस्थावादमें नहीं पड़ना चाहिये. यह कार्य गृहस्थोंका है. त्यागी होने पर भी वह बना रहा तो क्या किया ? त्यागीको ज्ञानका अभ्यास अच्छा करना चाहिये आज कितने हो त्यागी ऐसे हैं जो सम्यग्दर्शनका लक्षण नहीं जानते, आठ मूल गुणोंके नाम नहीं गिना पाते. ऐसे त्यागी अपने जीवनका समय किस प्रकार यापन करते हैं वे जानें. मेरी तो प्रेरणा है कि त्यागीको क्रम पूर्वक अध्ययन करनेका अभ्यास करना चाहिये. समाजमें त्यागियोंकी कमी नहीं परन्तु जिन्हें आगमका अभ्यास है ऐसे त्यागी कितने हैं ? अतः मुनि हो चाहे श्रावक, सबको अभ्यास करना चाहिये. आजका व्रतीवर्ग चाहे मुनि हो चाहे श्रावक; स्वच्छन्द होकर विचरना चाहता है यह उचित नहीं है. गुरुके साथ अथवा अन्य साथियोंके साथ बिहार करनेमें इस बातकी लज्जा या भयका अस्तित्व रहता था कि यदि हमारी प्रवृत्ति आगमके विरुद्ध होगी तो लोग हमें बुरा कहेंगे, गुरु प्रायश्चित्त देंगे पर एकाबिहारी होने पर किसका भय रहा ? जनता भोली है इसलिए कुछ कहती नहीं, यदि कहती है तो उसे धर्मनिन्दक आदि कहकर चुप कर दिया जाता है. इस तरह धीरे-धीरे शिथिलाचार फैलता जा रहा है किसी मुनिको दक्षिण और उत्तरका विकल्प सता रहा है तो किसीको वीसपंथ और तेरहपंथका. किसीको दस्सा बहिष्कारकी धुन है तो कोई शूद्र जल त्यागके पीछे पड़ा है. कोई स्त्री प्रक्षालके पक्षमें मस्त है तो कोई जनेऊ पहिराने और कांट में धागा बंधवानेमें व्यग्र है. कोई ग्रन्थमालाओंके संचालक बने हुए हैं तो कोई ग्रन्थ छपवानेकी चिन्तामें गृहस्थोंके घरसे चन्दा मांगते फिरते हैं. किन्हींके साथ

मोटरें चलती हैं तो किन्हींके साथ गृहस्थ जन को भी दुर्लभ कीमती चटाइयां और आसनके पाटे तथा छोलदारियां चलती हैं. त्यागी ब्रह्मचारी लोग अपने लिए आश्रय या उनकी सेवामें लीन रहते हैं. बहती गङ्गामें हाथ धोनेसे क्यों चूकें' इस भावनासे कितने ही विद्वान उनके अनुयायी बन आंख मीच चुप बैठ जाते हैं जहां प्रकाश है वहां अन्धकार नहीं और जहां अन्धकार है वहां प्रकाश नहीं. इसी प्रकार जहां चारित्र है वहां कषाय नहीं और जहां कषाय है वहां चारित्र नहीं. पर तुलना करनेपर किन्हीं-किन्हीं व्रतियोंकी कषाय तो गृहस्थोंसे कहीं अधिक निकलती है. कहने का तात्पर्य यह है कि जिस उद्देश्यसे चारित्र ग्रहण किया है उस ओर दृष्टिपात करो और अपनी प्रवृत्तिको निर्मल बनाओ. उत्सूत्र प्रवृत्तिसे व्रतकी शोभा नहीं.

महाराजकी उक्त देशनाका हमारे हृदयपर बहुत प्रभाव पड़ा. इसके बाद दूसरे दिन श्री भैया साहब राजकुमारसिंह इन्दौरवालों की अध्यक्षतामें जैनसंघ मथुराका वार्षिक अधिवेशन हुआ. दूसरे दिन फिर खुला अधिवेशन हुआ. अनेक प्रस्ताव पास हुए. इसके बाद एक दिन श्री काका कालेलकरकी अध्यक्षतामें हीरक जयन्ती समारोह तथा अभिनन्दन ग्रन्थ समर्पणका समारोह हुआ. विद्वानोंके बाद श्री कालेलकरने हमारे हाथमें ग्रन्थ समर्पण कर अपना भाषण दिया. उन्होंने जैनधर्मकी बहुत प्रशंसा की. साथ ही हरिजन समस्या पर बोलते हुए कहा कि यह स्पर्शका रोग जैनधर्मका नहीं हिन्दू धर्मसे आया है. यदि जैनियोंकी ऐसी ही प्रवृत्ति रही तो मुझे कहना पड़ेगा कि आप लोग नामसे नहीं किन्तु परिणामसे हिन्दू बन जावेंगे. जैनधर्म अत्यन्त विशाल है. उसकी विशालता यह है कि उसमें चारों गतियोंमें जो संज्ञी पञ्चेन्द्रिय प्राणी हैं वे अनन्त संसारके दुखोंको हरने-वाला सम्यग्दर्शन प्राप्त कर सकते हैं. धर्म किसी जातिविशेषका

नहीं. धर्म तो अधर्मके अभावमें होता है. अधर्म आत्माकी विकृत अवस्थाको कहते हैं. जब तक धर्मका विकाश नहीं तब तक सभी आत्माएं अधर्म रूप रहतीं हैं. चाहे ब्राह्मण हो, चाहे वैश्य हो, चाहे शूद्र हो, शूद्रमें भी चाहे चाण्डाल हो, चाहे भंगी हो, सम्यग्दर्शनके होते ही यह जीव किसी जातिका हो पुण्यात्मा जीव कहलाता है अतः किसीको हीन मानना सर्वथा अनुचित है. समारोह समाप्त होनेके बाद आप संध्याकाल हमारे निवास स्थानपर भी आये. मांसाहार आदि विषयोंपर चर्चा होती रही. उत्सव सानन्द सम्पन्न हुआ. प्रस्थानके पूर्व श्री आचार्य महाराज के पास गया तो उन्होंने आशीर्वाद देते हुये कहा कि तेरा अवश्य कल्याण होगा, तू भोला है तुझसे प्रत्येक मनुष्य अनुचित लाभ उठाना चाहता है. तेरी अवस्था वृद्ध है अतः अब एक स्थानपर रहकर धर्म साधनकर, इसीमें तेरा कल्याण है, धर्म निःस्पृहतामें है.

४५

पुनः बुन्देलखण्डमे

फीरोजाबादसे चलकर शिकोहाबाद में ठहर गये. यहां पर मन्दिर बहुत सुन्दर और स्वच्छ है. फाल्गुन कृष्णा ५ को बटेश्वर से वाह आगये तथा मन्दिरकी धर्मशालामें ठहर गये. थकानके कारण ज्वर हो गया. अब शारीरिक शक्ति दुर्बल हो गई, केवल कपायसे भ्रमण करते हैं. सागरमऊ, नदगुवां, होकर अटेर, आ गये. सायंकाल ४ वजे सार्वजनिक सभा हुई, जैन अजैन सभी आये. सबने यह स्वीकार किया कि शिक्षाके बिना उपदेशका कोई असर नहीं होता अतः सर्वप्रथम हमें अपने बालकोंको शिक्षा देना चाहिए. शिक्षाके बिना हम अविवेकी रहते हैं, चाहे जो हमें ठग ले जाता है, हमारा चरित्रनिर्माण नहीं हो पाता है.

यहांसे परतापपुर होकर पुरा आये. सबने अष्टमी चतुर्दशीको ब्रह्मचर्यका नियम लिया. कई ब्राह्मणोंने भी रविवार तथा एकादशीको ब्रह्मचर्य रखनेका प्रण किया. यहांसे लावन, छैकुरी, माँ, बरासो होते हुए असौना आये. ग्रामीण जन बहुत ही सरल व उदार होते हैं. इनमें पापाचारका प्रवेश नहीं होता. ये विषयोंके लोलुपी भी नहीं होते. इसके अनुकूल कारण भी ग्रामवासियों को उपलब्ध नहो होते अतः उनके संस्कार अन्यथा नहीं होते. मगरौल, सौंड़ा, वस्मी, नहला, रामपुरा, सेंतरी, इन्द्रगढ़, भड़ौल, कैती तथा जुजारपुर ठहरते हुए चैत्र कृष्ण १ को सोनागिर आ गये. जनता बहुत एकत्रित थी. चैत्र कृष्ण २ को श्री १०८ विमलसागरजी आये. आप बहुत ही उत्तम विचारके हैं. क्षेत्रकी सानन्द वन्दना की. यह क्षेत्र अत्यन्त रम्य और वैराग्यका उत्पादक है. श्री चन्द्रप्रभुके मन्दिरके सामने सङ्गमर्मर के फर्शसे जड़ा हुआ एक बहुत बड़ा रमणीक चबूतरा है. सामने सुन्दर मानस्तम्भ है. यहाँसे दृष्टिपात करनेपर पर्वतकी अन्य काली-काली चट्टानें बहुत भली मालूम होती हैं. प्रातःकाल सूर्योदय के पूर्व जब लाल-लाल प्रभा सङ्गमर्मरके श्वेत फर्शपर पड़ती है तब बहुत सुन्दर दृश्य दृष्टिगोचर होता है. सोनागिरि में आठ दिन रहा. चैत्र कृष्ण ६ संवत् २००७ को १ बजे श्री सिद्धक्षेत्र स्वर्णगिरिसे दतियाके लिये प्रस्थान कर दिया. शरीर की शक्ति हीन थी किन्तु अन्तरङ्गकी बलवत्तासे यह शरीर इसके साथ चला आया तत्त्वदृष्टिसे वृद्धावस्था भ्रमणके योग्य नहीं. दौलतरामजीने कहा है 'अर्धमृतक सम बूढ़ापनों कैसे रूप लखे आपनों' पर विचार कर देखा तो वृद्धावस्था कल्याण मार्गमें पूर्ण सहायक है. युवावस्थामें प्रत्येक आदमी बाधक होता है. कहता है—भाई! अभी कुछ दिन तक संसारके कार्य करो पश्चात् वीतरागका मार्ग ग्रहण करना. इन्द्रियाँ विषय ग्रहणकी ओर ले

जाती हैं, मन निरन्तर अनाप सनाप संकल्प विकल्पके चक्रमें फँसा रहता है. जब अवस्था वृद्ध हो जाती है तब चित्त स्वयमेव विषयोंसे विरक्त हो जाता है.

तीसरे दिन प्रातः साढ़े ६ बजे चलकर ८ बजे झांसी आ गये श्री जिनालयमें जिनदेवके दर्शन कर चित्तमें शान्ति रसका आस्वादन किया. मूर्ति बहुत ही सुन्दर और योग्य संस्थान विशिष्ट थी. तदनन्तर प्रवचन हुआ जनताने शान्त चित्तसे श्रवण किया. अपनी-अपनी योग्यतानुसार सबने लाभ उठाया. यहीं पर श्री फिरोजीलालजी दिल्लीसे आ गये. आप बहुत ही सरल और सज्जन प्रकृतिके हैं आपके कुटुम्बका बहुत ही उदार भाव है. आपकी धर्मपत्नी तो साक्षात् देवी हैं. आपके यहाँ जो पहुँच जाता उसका आप बहुत ही आतिथ्य सत्कार करते हैं. चैत्र शुक्ल १ विक्रम सं० २००८ को ५ बजे वरुआसागर आ गये. श्री बाबू रामस्वरूप जी द्वारा निर्मापित गणेश बाटिका नामक स्थानपर निवास किया. दूसरे दिन नगरमें आहारके लिये गये. श्री जैन मन्दिर की बन्दना की, अनन्तर आहारको निकले. हृदयमें अनायास कल्पना आई कि आज स्व० पं० देवकीनन्दन जीके घर आहार होना चाहिये. उनके गृहपर कपाट बन्द थे, वहांसे अन्यत्र गये, वहां पर कोई न था, उसके बाद तीसरे घर गये तब वहां स्वर्गीय पण्डितजी की धर्मपत्नी द्वारा आहार दिया गया. इससे सिद्ध होता है कि शुद्ध परिणाममें जो कल्पना की जाती है उसकी सिद्धि अनायास हो जाती है.

चैत्र शुक्ला १० को यहांकी पाठशालाके छात्रोंके यहां भोजन हुआ. बड़े भावसे भोजन कराया. भोजन क्या था ? अमृत था. इसका मूल कारण उन छात्रोंका भावथा. चैत्र शुक्ला १३ को भगवान् महावीर स्वामीके जन्म दिवसका उत्सव था मैंने तो केवल यह कहा कि हमने आत्माको पहिचानकर विकारोंपर विजय प्राप्त

कर ली तो हमारा महावीर जयन्तीका उत्सव मनाना सार्थक है. श्री 'नीरज' आये. आप श्री लक्ष्मणप्रसादजी रीठीके सुपुत्र हैं. आपके पिताका स्वर्गवास होगया. आपके अच्छा व्यापार होता था परन्तु उन्होंने व्यापार त्याग दिया था अब आप प्रेसका काम करते हैं. कवि हैं. हँसमुख हैं, होनहार व्यक्ति हैं. मुझसे मिलनेके लिए आये थे. चि० श्री नरेन्द्रकुमार 'विद्यार्थी' आया था. यह स्वाभिमानी है. जैनधर्ममें दृढ़ श्रद्धा है, उद्योगी है, परोपकारी भी है, लालची नहीं, किसीसे कुछ चाहता नहीं, प्रत्येक मनुष्यसे मेल कर लेना है. अभी आयु विशेष नहीं अतः स्वाभावमें बालकता है. ऐसा बोध होता है कि काल पाकर यह बालक विशेष कार्य करेगा. आजकल विज्ञानका युग है. इसमें जो पुरुषार्थ करेगा वह उन्नति करेगा.

श्रुत पञ्चमी—

ज्येष्ठ शुक्ला पञ्चमी को श्रुतपञ्चमीका उत्सव था. मैंने कहा कि आजका पर्व हमको यह शिक्षा देता है कि यदि कल्याण की इच्छा है तो ज्ञानार्जन करो. ज्ञानार्जनके बिना मनुष्य जन्म की सार्थकता नहीं. आजकल बड़े-बड़े विद्वान् यह उपदेश देते हैं कि स्वाध्याय करो. यही आत्मकल्याणका मार्ग है. धर्म जाननेका उपदेश देंगे, अपने बालकोंको एम. ए. बनाया होगा परन्तु धर्मशिक्षाका मिडिल भी न कराया होगा. अन्यको मद्य, मांस. मधुके त्यागका उपदेश देते हैं पर आपसे कोई पूंछे—अष्ट मूल गुण हैं ? हँस देवेंगे.

त्यागीवर्गको यह उचित है कि जहां जावें वहां पर यदि विद्यालय होवे तो ज्ञानार्जन करें, केवल हल्दी धनिया जीरेके त्यागमें ही अपना समय न बितावें. श्रुतपञ्चमीके दिन हम लोग शास्त्रोंकी सम्भाल करते हैं पर झाड़ पोंछकर या धूप दिखाकर अलमारीमें रख देना ही उनकी सम्भाल नहीं है. शास्त्रके

तत्त्वको अध्ययन अध्यापनके द्वारा संसारके सामने लाना यही शास्त्रोंकी संभाल है. आज जैनमन्दिरोंमें लाखोंकी सम्पत्ति रुकी पड़ी है, जिसका यदि उपयोग होता भी है तो सङ्गमर्मरके फर्श लगवाने तथा सोने चांदी के उपकरणआदि में होता है पर वीतराग जिनेन्द्रकी वाणीके प्रचार हेतु उसका उपयोग करने में मन्दिरोंके अधिकारी सकुचाते हैं, यदि एक-एक मन्दिर एक-एक ग्रन्थ प्रकाशनका भार उठा ले तो समस्त उपलब्ध शास्त्र एक वर्षमें प्रकाशित हो जावें. एक-एक महिलाकी पेटियोंमें बीस २ पचीस २ साड़ियां निकलेंगी पर शास्त्रके नामपर दो रुपयेका शास्त्र भी उसकी पेटीमें नहीं होगा. अच्छे-अच्छे लखपतियोंके घर दस बीस रुपयेके भी शास्त्र नहीं निकलते. क्या बात है ? इस ओर रुचि नहीं. यदि रुचि हो जाय तो शास्त्र सामने आ जावें. जब कभी जल वृष्टि होनेसे ग्रीष्मकी भयंकरता कम हो गई इस लिये बरुआसागरसे प्रस्थान करने का निश्चय किया. आसाढ़ कृष्ण १० सं० २००८ के दिन मध्यान्हकी सामायिकके बाद ज्यों ही प्रस्थान करने को उद्यत हुआ कि बहुतसे स्त्री पुरुष आगये सबकी इच्छा थी कि यहां पर चातुर्मास हो पर मैं एक बार ललितपुरका निश्चय कर चुका था इसलिये मैंने रुकना उचित नहीं समझा. लोगोंके अश्रुपात होने लगा. तब मैंने कहा—क्रोध मान माया लोभ ये चार कषाय ही आत्माके सबसे प्रबल शत्रु हैं. इनसे पिण्ड छुड़ानेका प्रयत्न करो. हमें यहाँ रोककर क्या करोगे. ३ माह रोकनेसे तो यह दशा हो गई कि नेत्रोंसे अश्रुपात होने लगा अब चार माह और रोकोगे तो क्या होगा. स्नेह दुखका कारण है अतः उसे दूर करनेका प्रयास करो. इतना कह कर हम चल पड़े. लोग बहुत दूर तक भेजने आये. आज बरुआसागरसे चल कर नदी पर विश्राम किया.

४६

झांसीके अंचलमें

सूर्यकी सायंकालीन सुनहली किरणोंसे अनुरञ्जित हरी भरी झाड़ियोंसे सुशोभित वेत्रवतीका तट बड़ा रम्य मालूम होता था. सन्ध्याकालीन सामायिकके बाद रात्रिको यहीं विश्राम किया, दूसरे दिन प्रात: ८ बजे बाद नौका चली ६ के बाद नदीके उस पार पहुँच सके. मल्लाह बड़े परिश्रमसे कार्य करते हैं मिलता भी उन्हें अच्छा है परन्तु मद्यपानमें सब साफ कर देते हैं. कितने ही मल्लाह तो दो दो रुपये तककी मदिरा पी जाते हैं अत: इनके पास द्रव्यका संचय नहीं हो पाता. यद्यपि राष्ट्रपति तथा प्रधान मन्त्री आदि इनकी उन्नतिमें प्रयत्नशील हैं परन्तु इनका वास्तविक उद्धार कैसे हो इस पर दृष्टि नहीं. जो लोग वर्तमानमें श्रेष्ठ हैं उनसे कहते हैं कि इनके प्रति घृणा न करो परन्तु जब तक इन लोगों में मद्य माँसका प्रचार है तब तक न तो लोग इनके साथ समानताका व्यवहार करेंगे और न इनका उत्कर्ष होगा. देशके नेता केवल पत्रोंमें लेख न लिख कर या बड़े बड़े शहरोंमें भाषण न देकर इन गरीबोंकी टोलियोंमें आकर बैठें तथा इन्हें इनके हितका मार्ग दिखलावें तो ये सहज ही सुपथ पर आ सकते है. स्वभावके सरल हैं परन्तु अज्ञानके कारण अपना उत्कर्ष नहीं कर सकते.

राज्यकी ओरसे मद्यबिक्री रोकी जावे, गांजा चरस आदिका विरोध किया जावे. इनसे करोड़ों रुपयेकी आय सरकारको होती है परन्तु इनके सेवनसे होनेवाले रोगोंको दूर करनेके लिये अस्पतालोंमें भी करोड़ों रुपये व्यय करना पड़ते हैं, राज्य चाहे तो सब कर सकता है. आषाढ़ कृष्णा १२ सं० २००८ को झांसी

पहुँच गये, मन्दिरमें प्रवचन हुआ. मनुष्य संख्या पर्याप्त थी. धर्मश्रवणकी इच्छा सबको रहती है—सब मनोयोग पूर्वक सुनते भी हैं परन्तु उपदेश कर्तव्य पथमें नहीं आता. इसका मूल कारण वक्तामें आभ्यन्तर आर्द्रता नहीं है.

त्रयोदशीको एक बजे झांसीसे निकल कर ४ बजे बिजौली पहुँच गये. एक डेरीफार्म देखा, महिषी और गायोंकी स्वच्छता देख चित्त प्रसन्नतासे भर गया. आज भारतवर्ष अपनी पूर्व गुण-गरिमासे गिर गया है. जहां देखो वहां पैसेकी पकड़ है, पश्चिमी सभ्यतासे केवल विषय पोषक कार्योंको भारतने अपनाया है. जहां प्रथमावस्थामें मद्य मांस मधुका त्याग कराया जाता था वहाँ अब तीनों अमृतरूपमें माने जाने लगे हैं. अंग्रेजों में जो गुण थे उन्हें भारतने नहीं अपनाया. वह समयका दुरुपयोग नहीं करते थे, उन्होंने भारतवर्षकी महिलाओंके साथ सम्बन्ध नहीं किया. प्राचीन वस्तुओंकी रक्षाकी, विद्यासे प्रेम बढ़ाया, स्वच्छताको प्रधानता दी इत्यादि. मुसलमानोंमें भी बहुतसे गुण हैं. जैसे एक बादशाह भी अपनी जातिके अदना आदमी के साथ भोजनादि करनेमें संकोच नहीं करता. यदि किसीके पास १ रोटी हो और दस मुसलमान आ जावें तो वह एक एक टुकड़ा खाकर संतोष कर लेंगे. नमाजके समय कहीं भी हों वहींपर नमाज पढ़ लेंगे, परस्परमें मैत्री भावना रक्खेंगे, एक दूसरेको अपनाना जानते हैं इत्यादि. परन्तु हमारे देशके लोग किसीसे गुण ग्रहण न कर अधिकांश उसके दोष ही ग्रहण करते हैं

बबीना, घिसोली, कंडसरा होकर पवा क्षेत्रमें आये. यहां पर पृथिवीके १० फुट नीचे जिन मन्दिर है जिसमें काले पत्थरकी ४ मूर्तियाँ हैं. १ मूर्ति आदिनाथ भगवान, १ पार्श्वनाथ भगवान,

तथा १ नेमिनाथ भगवान् की है. सभी प्रतिमाएँ अतिमनोज्ञ चमकदार काले पत्थर की हैं, आदिनाथ भगवान की मूर्ति वि० सं० १३४५ में भट्टारक शुभकीर्तिदेवके द्वारा प्रतिष्ठापित है. तालबहेट जमालपुर होते हुए बाँसी आगये. यह ग्राम किसी समय सम्पन्न रहा होगा. जैनेतर जनता भी आई. उसके समक्ष मैंने सुझाव रक्खा कि यहां १ मिडिल स्कूल हो जावे तो अति उत्तम होगा.

४७

ललितपुरमें

यहांसे देवरान होते हुए ६ बजे ललितपुर पहुँच गये. ललित पुरमें प्रवेश नहीं कर पाये थे कि स्त्रियों और पुरुषोंकी बहुत भारी भीड़ एकत्रित हो गई. आषाढ़ शुक्ला १२ सं० २००८ को संध्या समय ललितपुरमें आकर चार माहके लिए भ्रमण सम्बधी खेद से मुक्त हो गये.

क्षेत्रपालमें चातुर्मास—

आषाढ़ शुक्ला १३ को ४ बजे शामको समारोहके साथ चलकर क्षेत्रपाल आगये. ५ बजे सब स्कूलोंके छात्र आये. उन्हें यहाँ वाले भाइयों ने लड्डू बाँटे. बालक प्रसन्न थे. १००० से ऊपर होंगे. यह अवसर सबके लिये मनोहर था—सब ही प्रसन्न चित्त थे. यदि ऐसे उत्सव जिनमें निज और परका भेद न हो, होते रहें तो नागरिक जनताका पारस्परिक सौहार्द बना रहे.

क्षेत्रपाल ललितपुरका सर्वाधिक मनोरम स्थान है. एक अहातेके अन्दर भव्य मन्दिर हैं, श्री अभिनन्दन स्वामीकी मनोज्ञ

प्रतिमाके दर्शन करनेसे चित्त आल्हादित हो उठता है. यह प्रतिमा यहाँ महोबासे लाई गई थी ऐसा सुना जाता है. मन्दिरों के साथ एक धर्मशाला तथा एक विशाल बाग भी संलग्न है. यहाँ पहले संस्कृत पाठशाला चलती थी जो अब टूट चुकी है. यह स्थान शहरसे १ मील स्टेशनके करीब है. सामने हरा भरा पुष्कल मैदान पड़ा है. ललितपुर स्थान भी बुन्देलखण्ड प्रान्तका प्रमुख नगर है, जैनियोंके सात सौ आठ सौ घर हैं. प्रायः सभी सम्पन्न हैं. श्री अतिशय क्षेत्र देवगढ़ तथा पपौराजीका रास्ता यहाँ से होनेके कारण लोगोंका प्रायः आवागमन जारी रहता है. व्यापारका अच्छा स्थान है. लोगोंमें धर्म-कर्मकी रुचि भी अच्छी है. श्री हुकमचन्द्रजी 'तन्मय' बुखारिया और हरिप्रसादजी 'हरि' अच्छे कवि हैं. इनकी कवितामें माधुर्य तथा ओज रहता है. केन्द्र स्थान होनेसे यहाँ विद्वानों का समागम होता रहता है. प्रातःकालके प्रवचनमें शहरसे १ मील दूर होने पर भी अधिक संख्यामें जनता दौड़ी आती थी.

लोगोंके हृदयमें धर्मके प्रति श्रद्धा है परन्तु उन्होंने जो लीक पकड़ ली है या जिन कार्योंको उन्होंने धर्म मान रक्खा है उससे भिन्न कार्यमें वे अपना योग नहीं देना चाहते. देशमें लाखों मनुष्य अन्नके कष्टसे पीड़ित होने पर भी लोग विवाहादि कार्यों में लाखों रुपया बारूदकी तरह फूंक देनेमें संकोच न करेंगे. परन्तु अन्न-वस्त्र विहीनोंकी रक्षामें ध्यान न देवेंगे. देवदर्शनादि करनेमें समय नहीं मिलता ऐसा बहाना कर देवेंगे परन्तु सिनेमा आदि देखनेमें आँख भले ही खराब हो जावे इसकी परवाह न करेंगे.

इंटर कालेजका उपक्रम—

ललितपुर बुन्देलखण्ड प्रान्तका केन्द्र स्थान है, जैनियोंकी अच्छी बस्ती है और व्यापारका अच्छा स्थान है. फिरभी यहाँ

शिक्षाका आयतन न होना हृदयमें चोट करता रहता था. एक पाठशाला पहले क्षेत्रपालमें थी, जिससे प्रान्तके छात्रोंको लाभ होता था परन्तु अब वह बन्द हो चुकी है. इच्छा थी कि यहाँ पर ज्ञानका एक अच्छा आयतन स्थिर हो तो प्रान्तके बालकोंका बहुत कल्याण हो. आज कल लोगोंकी रुचि अंग्रेजी विद्याकी ओर अधिक है, अतः उसीके आयतन स्थापित करना चाहते हैं. मुझे इसमें हर्ष विषाद नहीं. भाषा उन्नतिका साधन है. यदि हृदयकी पवित्रताको न छोड़ा जाय तो किसी भी भाषासे मनुष्य अपनी उन्नति कर सकता है. मुझे यह जान कर हर्ष हुआ कि भादों तक एक हजार रुपये का चन्दा हो जावेगा और कालेज की स्थापना हो जावेगी. शान्तिसे पर्वके दिन व्यतीत हुये, पर्वके अनंतर जयन्ती उत्सवका आयोजन हुआ. अबतक कालेज खोलने का दृढ़ निश्चय हो गया था और उसकी इस उत्सवमें घोषणाकर दी गई. कालेज का नाम 'वर्णी इन्टर कालेज' रक्खा गया.

फोड़ा और मलेरिया मित्रका शुभागमन—

कार्तिक कृष्णा ११ सं० २००८ को शारीरिक अवस्था यथोचित नहीं रही—एक फोड़ा उठनेके कारण कष्ट रहा. फिर भी स्वाध्याय किया, द्वादशीसे पीड़ा अधिक बढ़ गई अतः स्वाध्यायमें समर्थ नहीं हो सका. इसी फोड़ाके रहते हुए ५ वर्ष बाद हमारे अत्यन्त प्राचीन मलेरिया मित्रने दर्शन दिया. उसने कहा तुम हमको भूल गये. तुमने कितने वादे किये पर एकका भी पालन नहीं किया. उसीका यह फल है कि आज मैंने फिर तुम्हें दर्शन दिया. मलेरिया का प्रबलता तथा फोड़ाकी तीव्र वेदनासे चित्तमें बहुत खिन्नता हुई. उपचारके लिए फोड़ा पर मिट्टीकी पट्टी बांधी पर उससे पीड़ामें रञ्च मात्र भी कमी नहीं हुई. हमारी वेदना देख सब लोग दुःखी थे.

टीकमगढ़से डाक्टर सिद्दीकी साहब आये. फोड़ा देखकर उन्होंने कहा कि फोड़ा खतरनाक है. बिना ऑपरेशनके अच्छा होना असंभव है और जल्दी ऑपरेशन न किया गया तो इसका विष शरीरमें अन्यत्र फैल जानेकी संभावना है. डाक्टरकी बात सुनकर सब चिन्तामें पड़ गये. सब लोगोंने ऑपरेशन करानेकी प्रेरणा की परन्तु मैंने द्रढ़तासे कहा कि कुछ हो मांसभोजीसे मैं ऑपरेशन नहीं कराना चाहता. डाक्टरने मेरी बात सुनी तो उसने बड़ी प्रसन्नतासे कहा कि मैं जीवन पर्यन्तके लिए मांसका त्याग करता हूँ. ऑपरेशनकी तैयारी हुई तो डाक्टर बोला कि ऑपरेशनमें समय लगेगा. बिना कुछ सुँघाये ऑपरेशन कैसे होगा ? मैंने कहा कि कितना समय लगेगा ? उसने कहा कि १५ मिनट. मैंने कहा—आप निश्चिन्ततासे ऑपरेशन कीजिये, सुँघानेकी चिन्ता न करें यह कहकर मैं निश्चल पड़ रहा, १५ मिनटमें ऑपरेशन हो गया. फोड़ाके भीतर जो विकृत पदार्थ था वह निकल गया इसलिये शान्तिका अनुभव हुआ.

फोड़ामें आराम तो ऑपरेशनके दिनसे ही होने लगा था परन्तु घावके भरनेमें एक मासके लगभग लग गया. मार्गशीर्ष ३० को ललितपुरसे जानेका निश्चय कर लिया. इसके एक दिन पूर्व चौधरीजीके मन्दिर में प्रातःकाल जनताका सम्मेलन हुआ. जब ललितपुरसे प्रस्थान करनेका समय आया तब लोग बहुत दुःखी हुए. मैंने कहा—'मोहकी परिणति छोड़ो और शान्तिसे अपना समय यापन करो. कालेजका आपने जो उपक्रम किया है वह प्रशस्त कार्य है. यह आगे बढ़ता रहे ऐसा प्रयास करें. ज्ञान आत्माका धन है. आपके बालक उसे प्राप्त करते रहें यह भावना आपकी होना चाहिये···'इतना कहकर मैं आगे बढ़ गया. बहुत जनता भेजने आयी, जो क्रम-क्रमसे वापिस हो गई.

४८

बुन्देलखण्डकी तीर्थ-यात्रा

पपौरा—

कचरोंदा से बानपुर आये. प्रातःकाल १ मील चलकर महरोनी के मार्गमें जहां क्षेत्रपाल हैं वहाँ जिनेन्द्रदेवके दर्शन किये. स्थान बहुत प्राचीन है परन्तु जैन जनताकी विशेष दृष्टि नही इससे जीर्ण अवस्थामें है. यहाँ पर अहार क्षेत्रकी मूर्तिके सदृश एक विशाल मूर्ति है, यहाँसे टीकमगढ़ पहुँचे. मार्गशीर्ष शुक्ला ५ सं० २००८ को पपौरा गये. समस्त जिनालयोंकी बन्दना की. मेलाका उत्सव था अतः बाहरसे जनता बहुत आई थी. यह क्षेत्र अति उत्तम है परन्तु यहां के लोग उत्साह पूर्वक दान नहीं करते अन्यथा जहां ७५ गगनचुम्बी मन्दिर हैं वहां स्वर्ग लोक की छटा दिखती. इस क्षेत्रकी उन्नति तब हो सकती है जब कोई दानी महाशय एक लक्ष १०००००) लगावे. आजकल नवीन मन्दिर निर्माणकी लोग इच्छा करते हैं पर प्राचीन मन्दिरोंका उद्धार नहीं कराते. नवीन मन्दिर निर्माणमें उनका निर्माताके रूपमें गौरव होता है और प्राचीन मन्दिरोंके उद्धारमें नहीं. यही प्रतिष्ठाकी आकांक्षा लोगोंको इस कार्यकी ओर प्रवृत्त नहीं होने देती. इस क्षेत्रपर एक ऐसा उच्च कोटिका औषधालय होना चाहिये जिससे प्रांतके मानवोंको बिना मूल्य औषधि मिले तथा एक ऐसा विद्यालय हो जिसमें सौ छात्र अध्ययन कर सकें. पठनक्रम नवीन पद्धतिका होना चाहिये जिसमें धर्मका शिक्षण अनिवार्य रहे. चार-पांच दिन पपौरामें निवास किया. परिणाम अत्यन्त उज्वल रहे. यहांसे टीकमगढ़ पहुँच गये. आज यहांके कालेजमें प्रवचन था.

आजकल जो शिक्षापद्धति है उसमें भौतिकवादको खूब प्रोत्साहन मिलता है. साइंसका इतना प्रचार है कि बिना चालकके वायुयान चला जाता है तथा ऐसा अणुबम बनाया है कि जिसके द्वारा लाखों मनुष्योंका युगपद् विध्वंस हो जाता है. किन्तु ऐसा आविष्कार किसीने नहीं किया कि यह आत्मा शान्तिका पात्र हो जावे.

अहार—

टीकमगढ़से पौष कृष्ण ६ को अहार क्षेत्र पहुँच गये. यहाँ एक प्राचीन मन्दिर है, श्रीशान्तिनाथ और कुन्थुनाथ भगवान् की मूर्ति है. अरहनाथ भगवान्की भी मूर्ति रही होगी पर वह उपद्रवियोंके द्वारा नष्ट कर दी गई. उसका स्थान रिक्त है. श्रीशान्तिनाथ भगवान्की मूर्ति बहुत ही सौम्य तथा शान्तिदायिनी है. इसके दर्शन कर श्रवणबेलगोलाके बाहुबली स्वामीका स्मरण हो आता है. यहाँ किसी समय अच्छी बस्ती रही होगी. प्राचीन मूर्तियाँ भी खण्डित दशामें बहुत उपलब्ध हैं. संग्रहालय बनवाकर उसमें सबका संग्रह किया गया है. मुख्य मन्दिरके सिवाय एक छोटा मन्दिर और भी है. पास ही मदनसागर नामका विशाल तालाब है. एक पाठशाला भी है. यदि साधन अनुकूल हों तो यहाँ शान्तिसे धर्मसाधन किया जा सकता है.

द्रोणगिरि—

अहारसे लार आ गये. यहाँ शान्तिनाथ भगवान्की प्रतिमा बहुत मनोहर है. लारसे बड़ेगांव होकर घुवारा आगये. पौष कृष्ण १४ को दोपहर के बाद एक अत्यन्त प्राचीन खड्गासन प्रतिमाका, जो कि काले पत्थर की बहुत ही मनोज्ञ है, अभिषेक हुआ. यहां तीन दिन रहे. घुवारासे भोंहरे ग्राम आ गये. प्रवचनमें ग्रामके ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य आदि सभी लोग आये व सुन कर प्रसन्न

हुए. गोरखपुर आ गये, गांवके सब लोगोंने स्वागत किया. वहांसे चलकर धनगुवां आये. ग्राम साधारण हैपर लोग उत्साही हैं. नरेन्द्रकुमार 'विद्यार्थी' साहित्याचार्य, एम० ए० जो निर्भीक वक्ता व लेखक है, यहीं के हैं. शास्त्रप्रवचन हुआ जिसमें ग्रामके सब लोग सम्मिलित हुये. देहातके लोगोंमें सौमनस्य अच्छा रहता है. यहाँसे चलकर श्री द्रोणगिरि क्षेत्र पर पहुँच गये. बहुत ही रमणीक व उज्वल क्षेत्र है. यहां पहुँचने पर न जाने क्यों अपने आप हृदयमें एक विशिष्ट प्रकारका आह्लाद उत्पन्न होने लगता है. ग्रामके मन्दिरमें श्री ऋषभनाथ भगवान्के दर्शनकर चित्तमें अत्यन्त हर्ष हुआ.

पौष शुक्ला ५ को श्री द्रोणगिरि सिद्धक्षेत्रकी बन्दना की. यद्यपि शारीरिक शक्ति दुर्बल थी तो भी अन्तरङ्गके उत्साहने यात्रा निर्विघ्न सम्पन्न करा दी. यात्राके बाद गुफाके आगे प्राङ्गणमें शान्त चित्तसे बैठे. सामने गाँवका तथा युगल नदियोंका संगम दिख रहा था. दूर दूर तक फैली हुई खेतोंकी हरियाली दृष्टिको बलात् अपनी ओर आकर्षित कर रही थी. द्रोणगिरिमें पं० गोरेलालजी सज्जन व्यक्ति हैं. द्रोणगिरिसे चलकर भगवां गये. यहांसे चलकर बरेठी पहुँचे. द्रोणगिरिके अञ्चलमें भ्रमण कर पुनः द्रोणगिरि आगये. पं० दुलीचन्द्रजी बाजना तथा मलहरासे कई सज्जन शास्त्रसभामें आ गये. धनगुवांसे भी कई सज्जन आये.

पौष शुक्ला १४ को प्रातःकाल मलहरा आ कर गुरुकुलमें ठहर गये. सिंघई वृन्दावनलाल के प्रतापसे यहां गुरुकुल बना और अब वही जनता हायर सेकेन्डरी स्कूल हो गया है. श्री बालचन्द्रजी मलैया जैसे योग्य व्यक्ति इसके अध्यक्ष हैं. श्री नाथूरामजी गोदरे इसके मन्त्री हैं. श्री सिं० हुकमचन्दजी एम. ए., एल. एल. बी. यहां के प्रधानाचार्य हैं आशा है आगे चल कर

यह और भी उन्नति करेगा. यहां १६ दिन रहे. मलहरासे माघ शुक्ला ४ को दरगुवां - हीरापुर होते हुए शाहगढ़ आये. बड़ा ग्राम है, जनसंख्या अच्छी है ? लोगोंमें सौमनस्य भी है. मन्दिरमें प्रवचन हुआ. जनता अच्छी उपस्थित थी यहां २ मन्दिर हैं.

रेशंदीगिरि—

शाहगढ़से बमौरी गये. लोगोंमें धार्मिक रुचि है. एक मन्दिर है. प्रवचन हुआ उपस्थिति अच्छी थी. बमौरीसे १ मील चलकर बेरखेरी आये. यहां एक क्षत्रिय महाशय रहते हैं जो बहुत ही सरल परिणामी हैं. मांसके त्यागी हैं. इनके वंशमें शिकारका भी त्याग है. यहांसे सिद्धक्षेत्र नैनागिरि (रेशन्दीगिरि) आगये. सुन्दरस्थान है पाठशालाके छात्रोंने स्वागत किया. यहां पर्वतपर पार्श्वनाथ समवसरणके नामसे एक विशाल मन्दिरका निर्माण हो रहा है. श्री पार्श्वनाथ भगवानकी शुभ्रकाय विशाल मूर्तिकी प्रतिष्ठा थी. अतः फाल्गुन कृष्णा ३ सं० २००८ से पञ्चकल्याणकका मेला रेशन्दीगिरिजीमें था. नाला पार करके मैदानमें विशाल पण्डाल बनाया गया था. रात्रिको चर्चा बहुत हुई परन्तु लोगोंका कहना था कि यदि वास्तवमें एकीकरण चाहते हो तो इन जातीय सभाओंको समाप्त करो. इन सभाओंने जनताके हृदयमें फूट डालनेके सिवाय कुछ नहीं किया है.

पण्डालकी समस्त व्यवस्था पं० पन्नालालजी सागर सम्हाले हुये थे जिससे समयानुकूल सब कार्य होनेमें रुकावट नहीं होती थी. मेलामें लगभग १५-२० हजार जैन जनता आई होगी. किसीकी कुछ हानि नहीं हुई और न वर्षा आदिका किसीको कुछ कष्ट हुआ. सब सानन्द अपने-अपने घर गये. मैं भी यहां से

चलकर दलपतपुर आगया. फाल्गुन कृष्णा १० को दलपतपुरसे बन्डा आगए दूसरे दिन प्रातःकाल मन्दिरमें शास्त्रप्रवचन हुआ. जनताकी उपस्थिति अच्छी थी यहांसे भड़राना होकर शाहपुर, पहुँच गये. यहां कलशारोहणका उत्सव हो रहा था, रात्रिको पाठशालाका उत्सव हुआ. अपील होने पर १००००) दस हजार का चन्दा हो गया. चैत्र कृष्णा प्रतिपदा के दिन सागरसे सिंघई जी आदि आये और सागर चलनेकी प्रेरणा करने लगे. हमने मना किया परन्तु अन्तमें मोहकी विजय हुई, हम पराजित हुए. सागर जाना स्वीकार करना पड़ा.

४६

सागर के सुरम्य तट पर

चैत्र कृष्णा ३ को १ बजे शाहपुरसे चले. अगले दिन सागर पहुँच गये. रात्रिको स्वागत समारोहके उद्देश्यसे मोराजी भवनमें सभा एकत्रित हुई. यहां आकर कुछ समयके लिये भ्रमण सम्बन्धी आकुलतासे मुक्त हो गये. यहांकी समग्र जनता को लाभ मिल सके इस उद्देश्यसे आठ-आठ दिन समस्त मन्दिरों में प्रवचनका क्रम जारी किया. चैत्र शुक्ला १३ सं० २००६ महावीर जयन्तीका उत्सव था. जनता अधिक थी. समारोह अच्छा हुआ. दूसरे दिन सर्वधर्म सम्मेलनका आयोजन था जिसमें जैन हिन्दू मुसलमान और ईसाई धर्मवालोंके व्याख्यान हुये. अन्तमें मैंने भी बताया कि धर्म तो आत्माकी निर्मल परिणतिका नाम है. काम क्रोध लोभ मोह आदि विकार आत्मा को उस निर्मल परिणतिको मलिन किये हुए हैं. जिस दिन यह

मलिनता दूर हो जायगी उसी दिन आत्मामें धर्म प्रकट हुआ कहलावेगा. किसी कुल या जातिमें उत्पन्न होनेसे कोई उस धर्म का धारक नहीं हो जाता. कुलमें तो शरीर उत्पन्न होता है सो इसे जितने परलोकवादी हैं सब आत्मासे जुदा मानते हैं. शरीर पुद्गल है. उसका धर्म तो रूप रस गन्ध स्पर्श है. वह आत्मामें कहां पाया जाता है ? आत्माका धर्म ज्ञान दर्शन क्षमा मार्दव-आर्जव आदि गुण हैं. ये सदा आत्मामें पाये जाते हैं. आत्माको छोड़कर अन्यत्र इनका सद्भाव नहीं होता.

इतना तो सब मानते हैं कि इस समय संसारमें कोई विशिष्ट ज्ञानी नहीं. विशिष्ट ज्ञानीके अभावमें लोग अपने-अपने ज्ञानके अनुसार पदार्थको समझनेका प्रयास करते हैं. सर्वज्ञ (विशिष्ट ज्ञानी) के अभावमें लोग अपने-अपने ज्ञानके दीपक जलाते हैं. फिर भी एक सूर्य संसारका जितना अंधकार नष्ट कर देता है उसको पृथ्वीके छोटे बड़े सब दीपक भी मिल कर नष्ट नहीं कर सकते. ज्ञान थोड़ा हो, इसमें हानि नहीं परन्तु मोह मिश्रित ज्ञान हो तो वह पक्ष खड़ा कर देता है. यही कारण है कि इस समय उपलब्ध पृथ्वीपर नाना धर्म, नाना मत-मतान्तर प्रचलित हैं. यह कलिकालकी महिमा है. इस कालका यही स्वभाव है. आज लोगोंमें इतनी तो समझ आई है कि विभिन्न धर्मवाले एक स्थानपर बैठकर एक दूसरेके धर्मकी बात सुनते हैं, सुनाते हैं. जैनधर्मका अनेकान्तवाद तो इसीलिये अवतीर्ण हुआ है कि वह सब धर्मोंका सामञ्जस्य कर सके.

समय यापन—

श्री १०८ मुनि आनन्दसागरजी भी विहार करते हुए सागर पधारे. सागरमें बालचन्द्र मलैया श्रद्धालु जीव हैं. सम्पन्न होने पर भी कोई प्रकारका व्यसन आपको नहीं. आपने सागरसे २ मील

दक्षिणमें तिली ग्राममें एक विस्तृत तथा सुन्दर भवन बनवाया है. पूजाके लिये चैत्यालय भी निर्माण कराया है. एकान्त प्रिय होनेसे अधिकांश आप वहीं पर रहते हैं. आपका आग्रह कुछ दिनके लिये अपने बागमें ले जानेका हुआ. मैंने स्वीकृत कर लिया अतः बैशाख शुक्ला १३ को वहां गया, बहुत ही रम्य स्थान है. सभी तरहके सुभीते हैं. यदि कोई यहां तत्त्व विचार करना चाहे तो कोई उपद्रव नहीं. तीन दिन यहां रहा.

महिलाश्रम की आवास-व्यवस्था—

कण्डया वंशमें श्री ताराचन्द्रजीका एक विस्तृत मकान, जो कि इतवारा बाजारमें था, बिकनेवाला था. लोगोंने सुझाव रक्खा कि यह मकान महिलाश्रमके लिये खरीद लिया जाय क्योंकि महिलाश्रम अभी तलाबके मन्दिरके पीछे किरायेके मकानमें है, जहां संकीर्णता बहुत है तथा मच्छरोंकी अधिकता है. मकानकी कीमत २२०००) बाईस हजारके लगभग थी. महिलाश्रमके पास इतना फण्ड नहीं कि जिससे वह स्वयं खरीद सके. सागरमें सिंघई कुन्दनलालजी एक सहृदय तथा आवश्यकताका अनुभव करनेवाले व्यक्ति हैं. उन्होंने पिछले समयमें महिलाश्रमको ११०००) ग्यारह हजार नकद दान दिये थे. उन्होंने कहा कि यदि महिलाश्रमकी कमेटी ग्यारह हजार रुपये हमारे पहलेके मिला दे तो मैं ग्यारह हजार और देता हूँ. इन बाईस हजारसे उक्त मकान खरीद लिया जावे. 'भूखेको क्या चाहिये ? दो रोटियां' वाली कहावतके अनुसार महिलाश्रमकी कमेटी ने उक्त बात स्वीकार कर ली जिससे २२ हजार रुपयोंमें उक्त मकान खरीद कर सिंघेन दुर्गाबाईके नामसे महिलाश्रमको सौंप दिया गया. ग्रीष्मावकाशके बाद जब आश्रम खुला तब वह अपने निज के मकानमें पहुँच गया. इस मकानमें इतनी

पुष्कल जगह है कि यदि व्यवस्थित रीतिसे बनाई जावे तो ५०० छात्राएँ सानन्द अध्ययन कर सकती हैं. आसाढ़ शुक्ला १४ के दिन सागरमें चातुर्मासका नियम ग्रहण किया श्रावण कृष्णा १० सं० २००६ को समाचार मिला कि डालमियांनगरमें श्रावण कृष्णा ८ सोमवारकी रात्रिको १२ बजकर १५ मिनटपर श्री सूर्यसागर जी महाराजका समाधिपूर्वक देहावसान होगया. समाचार सुनते ही हृदयपर एक आघात सा लगा. आप एक विशिष्ट आचार्य थे, फीरोजाबादके साक्षात्कारके अनन्तर तो आपमें हमारी अत्यन्त भक्ति होगई थी. इसके पहले जब आपकी रुग्णावस्थाके समाचार श्रवण किये थे तब मनमें आया था कि एक बार उनके चरणोंमें पहुँचकर उनकी वैयावृत्त्य करें परन्तु बाह्य त्याग के संकोचमें पड़ गये. हमारा मनोरथ मनका मनमें रह गया. श्री १०८ मुनि आनन्दसागरजीके नेत्रोंसे तो अश्रुधारा बहने लगी क्योंकि आपने उन्हींसे दीक्षा ली थी. मुनिमहाराज तथा हमने आज उपवास रक्खा. कटरामें मन्दिरके सामने शोकसभा हुई जिसमें बहुत भारी जनता आई. विद्वानोंने समाजको उनका परिचय कराया तथा उनका गुणगानकर उनके प्रति श्रद्धाञ्जलि अर्पित की. हम शान्तिसे समय यापन करते रहे.

आत्मा का कल्याण तो अन्तरङ्ग परिणामों की निर्मलता से होता है. नारकी निरन्तर दुःखमय स्थान में हैं. वहां का परिकर निरन्तर दुःख दायक है फिर भी परिणामों की गति विचित्र है वहां भी अनन्त संसार के नाशक सम्यग्दर्शन के पात्र होते हैं. यह तो संज्ञी जीव हैं अवधिज्ञानी हैं; निगोद का जीव सहज विशुद्धता द्वारा मनुष्य होकर मोक्ष का पात्र हो जाता है.

प्रतिवर्ष पहली अगस्त को श्री तिलक महात्मा (लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक) की पुण्य स्मृति में लोग उनका अन्तिम दिवस मनाते हैं. यह वह महापुरुष है जिसने

भारतवर्ष को स्वाधीनता का पाठ पढ़ाया. उन्होंने केवल स्वाधीनता का पाठ नहीं पढ़ाया, परलोक की शुद्धि के लिये गीता का मराठी भाषा में भाष्य भी बनाया और उसमें यह सिद्ध किया कि गृहस्थावस्था में भी यदि निष्काम कर्म करें तब भी आत्मा संसार बन्धन से मुक्त हो सकता है. अन्त में यही सिद्धान्त तो प्रसन्नता का दाता है कि पर पदार्थ से स्नेह छोड़ो यही उपादेय है.

आश्विन कृष्ण ४ को मेरा जयन्ती उत्सव मनाया गया. लोगों ने सदा की तरह हमारी प्रशंसा के गीत गाये पर हम गर्दन नीची किये यही सोचते रहे कि ऐसी कोई वस्तु नहीं देखी जाती है जो आत्मा को शान्तिप्रद हो. ५ वर्ष की अवस्था से ७८ वर्ष की अवस्था तक जो संसारी मनुष्यों का व्यवहार हो रहा है हमने सब किया, अर्थात यथाशक्ति पुण्य और पाप के जो कार्य थे किये परन्तु शान्ति का लेश भी न आया. अशान्ति क्या है और शान्ति क्या है ? यह भी ज्ञान में नहीं आता कि जो कार्य करने की आकांक्षा हृदय में उत्पन्न होती है उसी समय एक व्यग्रता होती है और उसके मिटने पर शान्ति आती है.

५०

बिहार की ओर बिहार

पौष शुक्ल ३ को यह निश्चय किया कि अन्तिम जीवन श्री पार्श्वप्रभु के चरण कमलों के सानिध्य में ही पूर्ण करना उत्तम होगा. अनादि काल से परावलम्बन में बिताया अब तो जिनके द्वारा मोक्षमार्गका विकास हुआ है उनका निर्वाण क्षेत्र ही

स्वावलम्बन में सहकारी हो. यद्यपि शरीर शक्ति हीन है तथापि श्री पार्श्वप्रभु में इतना अनुराग है कि वह पूर्ण बल प्रदान करने में निमित्त होंगे. ईसरी स्थान ही इस समय समाधि मरण के लिये उपयुक्त है. पार्श्व प्रभु की निर्वाण भूमि है तथा अनादि से वहां तीर्थङ्कर प्रभु निर्वाण को गये हैं. सदा धार्मिक मनुष्यों का समागम है.

सागर से सतना—

पौष शुक्ल ११ को सागरसे ईसरी के लिये प्रस्थान कर दिया. गंभीरिया में निवास किया. वहां एक भूतपूर्व जमींदार ने सत्कार करने में पूर्ण योग दिया. खेद इस बात का है कि हम लोग उनको अपनाते नहीं. धर्म को अपनी सम्पत्ति मान रक्खी है, प्रकृति की जो देन है उसे अपनी समझ रक्खी है. जैसे वायु का सेवन प्राणीमात्र के लिये है वैसे ही धर्म का सेवनभी प्राणिमात्र के लिये है. यहां से बम्होरी आये तो यहां भी सागर से बहुत से लोग आये. क्या कहें ? आत्मा अनादि काल से इस मोह के वशीभूत होकर दुःख का पात्र बन रहा है. और वही अंगीकार करता है. यहां से डंगासरे, पड़रिया, सासा, शाहपुर, टड़ा, सुजनीपुर, बौतिराई होते हुए दमोह आ गये. धर्मशाला में प्रवचन हुआ हजारों नरनारियों की भीड़ थी. यहां से माघ शुक्ल १५ को श्री कुण्डलपुरजी आ गये. दूसरे दिन मेले का अन्तिम दिवस था. लगभग ५ हजार नर-नारी होंगे ? धर्म की अच्छी प्रभावना तथा क्षेत्र को अच्छी आय हुई. लोगों में जागृति हुई. प्रायः जनता धर्म पिपासु है. तन्यमता के साथ बड़े बाबा (भगवान महावीर) के गीत गाने में आनन्द मग्न महिलाओं की कण्ठश्री से गुञ्जित तालाब और पर्वत राज के अञ्चल में सुनाई पड़ता था—

"वन्दत कटें करम के जाल, लाल ! कुण्डलपुर क्षेत्र सुहावने"

मेला विघट गया. यहां से फाल्गुन कृष्ण २ को प्रस्थानकर बरट, हिनौती, कुम्हारी, भरतला होते रीठी पहुँच गये. समारोह के साथ स्वागत हुआ. स्नानादिके अनन्तर देव दर्शन किया. यहां की जनता पिपासु है. सुकवि श्री 'नीरज' जी की यही जन्मभूमि है. चि० श्री भागचन्द्र विद्यार्थी भी यहीं का रहने वाला है. यह छात्र सुबोध तथा सदाचारी है. विनयी है. यहांसे फाल्गुन कृष्ण १० को प्रस्थान कर मझगुवां होते हुए कटनी पहुँच गए. दूसरे दिन प्रातःकाल प्रवचन हुआ, बहुत जनता एकत्रित हुई. यहां की पाठशाला तथा श्री कुण्डलपुर क्षेत्र को पर्याप्त सहायता मिली. यहांसे कैलवारा, झुकेही, पकरिया. अमदरा, घुनवारा, भदनपुर, पोंडी होते हुये फाल्गुन शुक्ल ७ को मैहर आ गये. यहां दो दिन रहे. प्रवचन में जनता अच्छी आई. श्री राघवेन्द्र सिंह बिरमै वाले ठाकुर साहबसे धार्मिक वार्ता हुई. आप निरपेक्ष हैं. यद्यपि आप वैष्णव सम्प्रदायके हैं तथापि जैनधर्म से प्रेम है यहां से नरौरा, बरइया होते हुये फाल्गुन शुक्ल १० को अमरपाटन आ गये. यहां के मन्दिर में एक प्राचीन मूर्ति बहुत ही मनोज्ञ है. लोगोंमें धार्मिक उत्साह अच्छा है. एक पाठशाला भी है जिसमें जैन अजैन छात्र ज्ञान लाभ लेते हैं. यहां दो दिन रहने के पश्चात् बड़खुरा, कनयारी होते हुये इटमाँ नदीके तीर पर एक धर्मशालामें ठहर गये. रात्रि को श्री नीरज जी के द्वारा यह जानकर बड़ा खेद हुआ कि श्री चम्पालाल जी सेठी आदि को मोटर से चोट लग गयी. यहां से फाल्गुन शुक्ल १२ को सतना आ गये. श्री चम्पालालजी आदि को देखा बहुत चोट लगी थी. मनमें एक विकल्प बार बार उठा कि इस सब उपद्रव में निमित्त कारण हम ही थे. यहां प्रवचनमें जन समुदाय अच्छा रहा. स्थानीय पाठशाला के लिए (४०००) का चन्दा हो गया. लोग उदार हैं.

रामवनमें एक दिन—

यहाँ से चैत्र कृष्ण ६ को चलकर माधोगढ़ होते हुये ७ को रामवन आये. यहाँ एक रम्य बाग है, एक स्वस्तिक के आकार की वापिका 'मानस-सर' के नाम से बहुत सुन्दर है उसके चारों ओर घाटों और मन्दिरों का निर्माण हो रहा है. यहांके व्यवस्थापक श्री शारदाप्रसाद बहुतही धार्मिक प्रकृतिके लगनशील विद्वान् व्यक्ति हैं, रामवन में आपकी बहुत सी योजनाएँ हैं. एक छोटीसी टेकरी पर एक कुटिया बनी है. कुटियाके नीचे तलघर है. उसमें अच्छा प्रकाश है, उष्णकालके लिए बहुत उपयोगी है. यहां पर हनुमानजी का मन्दिर है. रामनाम मंदिरमें २७ करोड़ रामनाम लिखे रखे गये हैं, एक अरब की योजना है. चित्तमें आया कि इस स्थानपर ही रह जावें परन्तु हम लोगोंने अपनी वृत्ति इतनी संकुचित बना रक्खी है कि जैन जनता ही हमारी है, हम जैन जनता के हैं. प्रत्येक विषयमें हम लोग संकोच करते हैं. तीर्थों को अपना मानते हैं, मन्दिरोंको अपना मानते हैं. वास्तवमें तीर्थ पृथक कोई वस्तु नहीं. यहाँ शान्तिका परम अनुभव हुआ.

रामवनसे प्रयाग—

दूसरे दिन यहां से चलकर करही, वेला होते हुये चैत्र कृष्ण १० को रीवा आ गये. मन्दिरमें श्री शान्तिनाथ स्वामीके दर्शन किये मूर्ति बहुत ही सुन्दर है जिसके दर्शनसे हृदय में यह भावना हुई कि शान्ति का मार्ग तो बाह्य और आभ्यन्तर परिग्रह का त्याग है. दो दिन बाद वहांसे चलकर रामऊन, बिलवा, मनगुवां, डबडबा, मऊगञ्ज, हनुमना, भैसोड़, लुहरियादर, ड्रामिलगञ्ज, बरौधा होते हुये चैत्र शुक्ल १२ सं० २०१० को मिर्जापुर पहुँच गये. दूसरे दिन महावीर जयन्ती उत्सव बड़े उत्साह के साथ

सम्पन्न हुआ. यहां श्री धर्मचन्द्रजी छात्र बी. काम. साहित्य रत्न बनारस से आये. यह शाहगढ़ निवासी हैं. अत्यन्त विनयी और सदाचारी हैं. यहां से बैशाख कृष्ण ३ को प्रयाग आगये.

प्रयागसे काशी—

यहां एक दिन रह कर महराजगञ्ज, रूपापुर, राजातालाब आदि होते हुये बैशाख कृष्ण ६ को काशी आ गये. भेलूपुरकी धर्मशालामें ठहर गये. यह वही भेलूपुर है जहां बाईजी का रहना था. यहीं रहकर हमने पहले विद्याभ्यास किया था, बैशाख कृष्ण १४ को विद्यालय का वार्षिकोत्सव हुआ. उत्सवमें ४ बजे श्री आनन्दमयी माता पधारीं. आप शान्तिमयी हैं. प्राय: सभी के आनन्द में निमित्त हो जाती हैं. दूसरे दिन श्री आनन्दमयी माता के यहाँ गये. बहुत ही सुन्दर भवन था. आश्रम बहुत ही भव्य है. अनेक साधु और साध्वी निर्मल परिणामों वाले थे. यहीं पर क्रम-विकास पर व्याख्यान हुआ. अन्तमें आनन्दमयी माताने यह कहा कि अपना पराया भेद छोड़ो. यहां सन्मति जैन निकेतन तथा काशी हिन्दू विश्व-विद्यालय भी गये. जितने दिन यहाँ रहे प्रवचन में जनताने अच्छे उत्साह से भाग लिया. प्र० बैशाख शुक्ल ३ को सारनाथ गये. वहां से द्वि० बैशाख कृष्ण २ को काशी आ गये.

काशी से गया—

दूसरे दिन प्रस्थान कर मोगल सराय, सय्यदराजा, कर्मनाशा जहानाबाद, शिवसागर, सासाराम होते हुए द्वि० बैशाख शुक्ल ४ को डालमियां नगर आगये. श्री सम्मति निकेतन के अर्थ साहु

शान्तिप्रसाद जी ने १३ कमरे दुहरे करा देने का बचन दिया. और १००) माह छात्रावास चलाने को कह दिया. आप बहुत ही उदार मानव हैं. तथा निरपेक्ष त्याग करते हैं. द्वि. बैशाख शुक्ला १२ को यहांसे चलकर जोगिया, औरंगाबाद, औरा, शिवगंज, चित्रशाली, रफीगंज, डबुहा, गुराड्रू, सलेमपुर और परैया होते हुए जेष्ठ कृष्ण ३० को गया पहुँच गये. बड़े ठाठ-बाट से स्वागत हुवा. जैनभवन में ठहर गये. आषाढ़ कृष्ण २ को ईसरी के लिये प्रस्थान किया. गया से ५ मील ही चले कि वर्षा के कारण पुनः गया आना पड़ा. इससे हमको बड़ा खेद हुआ.

५१

संत बिनोवा से भेंट

'श्रावण कृष्णा १० को प्रातःकाल सन्त बिनोवा जी भावे आये. ५ बजे आये १५ मिनिट ठहरे. आप बहुत ही शान्त स्वाभाव के हैं. आपका भाव अत्यन्त निर्मल है 'सभी प्राणी सुख के पात्र हों. कोई दुख का अनुभव न करे.' मैत्री भावना उत्कृष्ट आप में पाई जाती है. 'दुःखानुत्पत्यभिलाषो मैत्री' यही तो उसका लक्षण है. बचन से पाठ तो सब करते हैं, कार्य में परिणत करना बिरले महापुरुषों का काम है. धर्म की परिभाषा प्रत्येक व्यक्ति करता है किन्तु उस रूप प्रवृत्ति करना किसी महापुरुष के द्वारा ही होता है. भाद्रपद शुक्ल ३ को टाउनहाल में बिनोवा भावे की जयन्ती थी. हम भी गये. इस अवसर पर हमने कहा—

बन्धुवर !

आज एक महापुरुष की जयन्ती है. विचार करके देखो उनकी यह महापुरुषता क्या भूमि दान दिला देते हैं, इससे है. नहीं, अरे ! जब भूमि तुम्हारी चीज ही नहीं तब दिलाने का प्रश्न ही नहीं आता. उन्होंने एक पुस्तक में लिखा है—'भूमि तो भगवान की है' तो तुम्हारी कैसे हुई ? और जो तुम्हारी नहीं उसका दान कैसा ? सबसे भारी बात तो यह है कि मैं उनके गुणों से मोहित हूँ. मेरे ध्यान में यह बात आई कि उन्होंने पञ्चेन्द्रिय के विषयों को लात मार कर अपनी ओर ध्यान दिया. यह भूमि दान तो आनुसङ्गिक है. संसार के भोगों को जिसने छोड़ दिया वही महापुरुष है, उसीकी प्रशंसा है. ऐसे महापुरुष से ऐसा छोटा सा काम कराना इससे अधिक भारत की कङ्गाली और क्या होगी ! जिनसे मोक्षमार्ग मिलता है उन्हें संसार मार्ग में लगाओ. मैं तो समझता हूँ यह कोई चीज नहीं है. तुम्हारी यह मूर्च्छा त्याग कराते हैं, अरे हमारा अगर कोई चोट्टापन मिटादे तो इससे बड़ा उपकारी और कौन होगा ?

बिनोवा जी से कहो कि बाबा जी ! अब आप वृद्ध हो गये, धर्म ध्यान करो. जान तो गये भूदान करना है और सबके सब एक ही दिन में कर डालो एक बात हम कहते है किसान तो दान करते सो ठीक ही है. हम सबके लायक दान बताते हैं, जो भीख मांगकर खाते हैं वे भी दान दे सकते हैं. ऐसा करने से अनेक यूनिवर्सिटी हो जांय, विद्यालय हो जांय. खाने पहिनने में जो खर्च हो प्रति रुपया एक पैसा दान दो, सब भारतवर्ष में गरीबी मिट जाय. एक पैसा प्रति रुपया ही दो अधिक नहीं. उसमें कोई व्यतिक्रम नहीं होना चाहिये. जो भीख मांगकर लायगा वह भी तो पेट भर खायगा अतः वह भी एक रोटी द सकता है.

हमारा तो यही कहना है कि तुम सब विनोबा जी के गुणों का कुछ न कुछ अंश लेकर जाओ. जैसा उन्होंने त्याग किया वैसा करो. दान करो, चाहे न करो, पर लोभ छोड़कर जाओ. लोभ उनके पास नहीं है अतः लोभ छोड़कर जाओ. विनोबा जी दूसरों के दुःख से दुःखी होकर कि यह भारत के किसान हैं, गरीब हैं, दुःखी हैं, इसीसे वे अपना दुःख दूर करने को प्रयत्नशील हैं. इन गरीबों को दो रोटियां देना चाहते हैं. करुणा उत्पन्न हुई उसी के दूरी करणार्थ यह भूमिदान प्रथा है. हमतो चाहते हैं ऐसा महापुरुष चिर- काल तक सानन्द जीवे.

गया में पर्यूषण पर्व—

भाद्रपद शुक्ल ५ को परम पावन पर्यूषण पर्व प्रारम्भ हो गया. लोगों में अपूर्व उत्साह था. यह १० दिन ऐसे पवित्र होते हैं जिनमें ऐसा कोई जैन न होगा जो संयम की रक्षा न करता हो. प्रायः इन दिनों में गृहस्थजन १० दिन नियमसे ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हैं. भोजन मर्यादा का करते हैं. सचित्त पदार्थ भक्षण नहीं करते. शुद्ध घृत और दुग्ध भोजन में लाते हैं. बाजार का बना हुआ पकान्न पेड़ा आदि नहीं खाते. घर का पिसा आटा उपयोग में लाते हैं. दसों दिन मन्दिरों में उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग, आकिञ्चन्य और ब्रह्मचर्य इन दस धर्मों तथा तत्त्वार्थ सूत्र का प्रवचन श्रवण करते हैं. लोगोंने १० दिन मन्दिरों में धर्म ध्यान में अपना अधिकांश समय व्यतीत किया.

आश्विन कृष्ण ४ को मेरा जयन्ती उत्सव था. बाहर से बहुत महानुभाव आये थे. आश्विन कृष्ण ५ को टाउन हालकी सार्वजनिक सभा में गये. अहिंसा तत्वपर व्याख्यान थे. प्रायः सभीने अहिंसा से ही विश्वशान्ति सम्भव बतलाई.

गांधी जयन्ती समारोह—

२ अक्तूबर को स्थानीय पुस्तकालय में गांधी जयन्ती उत्सव था. जनसंख्या अच्छी थी, ५०० तो महिलाएँ ही होंगी. हम लोगों का भी निमन्त्रण था. गांधी जी एक अद्वितीय त्यागी पुरुष थे, जो काम वह करते थे निष्कपट भावसे करते थे. इसीसे जनता पर उनका पूर्ण प्रभाव था. यही कारण था कि इतना प्रभावशाली ब्रिटेन भी उनके प्रभाव में आ गया तथा बिना किसी शर्त के भारत को त्याग कर स्वदेश चला गया. इतना त्याग करना भी एक महती अपूर्व घटना जगत में नहीं देखी जाती. भारत में पहले ब्रिटिश (अंगरेजों) की सत्ता थी. सभी जनता उनके व्यवहार से असन्तुष्ट थी, कांग्रेस के गीत गाती थी, दैव योग से गांधी जी के प्रयत्न से भारत का भाग्य विकास हुआ और भारत में स्वराज्य हो गया.

कार्तिक कृष्ण ७ को नालन्दा बौद्ध विश्व विद्यालय के अधिष्ठाता मिलने आये. बहुत ही शिष्ट थे. आप का जैन दर्शन में अनुराग है. आपकी अन्तरङ्ग इच्छा है कि नालन्दा में भी जैन दर्शन के अध्यापनादि कार्य हों और इस हेतु एक जैन विद्यालय खोला जावे तब परस्पर आदान प्रदान होने से धर्म का वास्तव पता हो सकता है तथा तुलनात्मक अध्ययनका भी अवसर छात्रों को मिल सकता है.

इस तरह गया का चातुर्मास सानन्द सम्पन्न हुआ. विद्वानों का खूब समागम रहा, लोगोंको धार्मिक लाभ भी अच्छा मिला.

५२
पार्श्व प्रभु की चरण-शरण में

हृदय में गिरिराज के दर्शन करनेकी उत्कट उत्सुकता थी इसलिये कार्तिक सुदी २ सं० २०१० रविवारको १ बजे गयासे प्रस्थान कर हरिओ, मस्कुरा, जिन्दापुर, कर्मेणी, डोभी, भदैया, कादुदाग, भलुआ, चौपारन, रामपुर, भोंडी, विन्दा होते हुए झूमरीतलैया आ गये. यहाँ १५ दिन लग गये.

अगहन वदी ११ सं० २०१० को १ बजे प्रस्थान कर चिगलावर, जयनगर तथा फरसाबादमें ठहरते हुए त्रयोदशीके दिन सरिया (हजारीबाग रोड) आ गये. यहाँ से मुन्सरिया, चौधरीबांद होते हुए अगहन सुदी ३ संवत् २०१० को प्रातः ८½ बजते-बजते ईसरी पहुँच गये. चित्तमें बड़ा हर्ष हुआ. एक बार यहाँ आकर पुनः परिवर्तन करनेके लिये निकल पड़ा था और उस चक्रमें फँस १० वर्ष यत्र तत्र भटकता रहा. शरीर में शक्ति नहीं थी फिर भी भटकना पड़ा. आज पुनः श्रीपार्श्व प्रभुकी निर्वाण भूमि के समीप आ जाने से हृदय में जो आनन्द हुआ वह शब्दोंके गोचर नहीं. यहाँ के समस्त त्यागियों तथा परिकरके अन्य लोगों को भी महान् हर्ष हुआ.

देखते देखते ईसरीमें बहुत परिवर्तन हो गया है. यहाँ आनेपर मुझे ऐसा लगने लगा जैसे 'भारहीनो बभूव'—शिरसे भारी भार उतर गया हो. यहाँ बाहरसे अनेक विद्वान तथा विशिष्ट महानुभाव यदा कदा आते रहते हैं. यहाँका प्राकृतिक दृश्य भी नयनाभिराम है. पास ही हरे भरे गिरिराजके दर्शन होते हैं. श्रीपार्श्व प्रभुका निर्वाण स्थान अपनी निराली शोभा से दर्शकोंको अपनी ओर अकर्षित करता रहता है. आकाशको चीरती हुई गिरिराज की हरी भरी चोटियाँ कभी तो धूमिल

घनघटा से आच्छादित हो जाती हैं और कभी स्वच्छ-अनावृत दिखाई देती हैं. प्रातःकाल के समय पर्वतकी हरियालीपर जब दिनकरकी लाल लाल किरणें पड़ती हैं तब एक मनोहर दृश्य दिखाई देता है. लम्बी चौड़ी चट्टानें और वृक्षोंकी शीतल छायाएं ध्यान के लिये बलात् प्रेरणा देती हैं. धर्म साधनकी भावनासे यहाँ चारों तरफकी जनता सर्वदा आती रहती है. श्रीगिरिराजकी वन्दनाका हृदयमें बहुत अनुराग था अतः अगहन सुदी १० को मधुवनके लिये प्रस्थान किया. द्वादशीको प्रातः वन्दनार्थ गिरिराज पर गये. भक्तिसे भरे नर-नारी पुण्य पाठ पढ़ते हुए पर्वतपर चढ़ रहे थे. जिस स्थान से अनन्तानन्त मुनिराज कर्मबन्धन काटकर निर्वाण धामको प्राप्त हुए उस स्थान पर पहुँचने से भावोंमें सातिशय विशुद्धता आ जाय इसमें आश्चर्य नहीं. शुक्लपक्ष था अतः चारों ओर स्पष्ट चांदनी छिटक रही थी. मार्गके दोनों ओर निस्तब्ध वृक्षपंक्ति खड़ी थी. श्रीकुन्थुनाथ भगवान्की टोंकपर पहुँच गये. सूर्योदय कालकी लाल लाल आभा वृक्षोंकी हरीभरी चोटियोंपर अनुपम दृश्य उपस्थित कर रही थी. क्रम क्रमसे समस्त टोंकोंकी वन्दनाकर १० बजे श्रीपार्श्वनाथ भगवानके निर्वाण स्थानपर पहुँच गये. वन्दना पूर्ण होनेपर हृदयमें अत्यन्त हर्ष हुआ, श्रीसमन्तभद्रस्वामीने पार्श्वनाथ भगवानका जो स्तोत्र लिखा है उसे पढ़कर चित्तमें शान्ति आई. यहीं मध्याह्नकी सामायिककर दिनके ३½ बजे मधुवन वापिस आ गये. भक्तिका प्राबल्य देखो कि स्त्रियां तथा आठ आठ वर्ष के बच्चे भी १८ मीलका पहाड़ी मार्ग चलकर भी खेदका अनुभव नहीं करते. जो स्त्रियां अन्यत्र २ मील चलनेमें भी कष्टका अनुभव करती हैं वे यहाँ १८ मीलका लम्बा पहाड़ी मार्ग एक साथ चलकर भी कष्टका अनुभव नहीं करती. यहाँसे पुनः ईसरी वापिस आ गये.

५३

राष्ट्रपति से साक्षात्कार

ईसरीमें सम्वत् २०१२ सन् १९५५ के अप्रैलके अन्तिम सप्ताहमें बिहार राज्य ग्राम पञ्चायतका चतुर्थ अधिवेशन था. उसके उद्घाटनके लिए भारतवर्षके राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसादजी आये थे. जैन हाईस्कूलके मैदानमें आपका भाषण हुआ. आप प्रकृतिके सरल तथा श्रद्धालु व्यक्ति हैं. साक्षात्कार होनेपर आपने बहुत ही शिष्टता दिखलाई. मैंने आपसे कहा कि जिस बिहार प्रान्त में भगवान महावीर तथा महात्मा बुद्ध जैसे अहिंसा के पुजारियोंने जन्म लिया वही बिहार आपका प्रान्त है और इसी प्रान्तमें मांस तथा मद्यके सेवनकी प्रचुरता देखी जाती है. इस मांस, मद्य-सेवनसे गरीबोंकी गृहस्थी उजड़ रही है. उनके बाल-बच्चोंको पर्याप्त अन्न और वस्त्र नहीं मिल पाता. निर्धन अवस्था के कारण शिक्षाकी ओर भी उनकी प्रगति नहीं हो पाती इसलिए ऐसा प्रयत्न कीजिये कि जिससे यहाँके निवासी इन दुर्व्यसनोंसे बचकर अपना भला कर सकें. आप जैसे आस्थावान् राष्ट्रपतिको पाकर भारतवर्ष गौरवको प्राप्त हुआ है.

उत्तरमें उन्होंने कहा कि हमें भी यही इष्ट है. हम ऐसा प्रयत्न कर रहे हैं कि बिहार ही क्यों भारतके किसी भी प्रदेशमें मद्यपान आदि न हो. पूज्य गाँधीजीने मद्य-निषेध को प्रारम्भ किया है और हम उनके पदानुगामी है परन्तु खेद इस बातका है कि हम द्रुतगतिसे उनके पीछे नहीं चल पाते हैं.

५४

स्याद्वाद विद्यालयकी स्वर्ण जयन्ती

श्री स्याद्वाद विद्यालय बनारस जैन समाजकी प्राचीन एवं महोपकारिणी संस्था है. ५० वर्ष से जैन समाजमें संस्कृत विद्या-का प्रचार इस विद्यालयसे हो रहा है. सैकड़ों विद्वान् इस विद्यालयमें पढ़कर तैयार हुए हैं अतः संस्कृत विद्याका प्रचार केन्द्र यह विद्यालय अपना बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है. पं० कैलाश चन्द्रजी इसके प्रधानाध्यापक हैं. यथार्थमें आप विद्यालयके प्राण हैं. आपके द्वारा ही वह व्यवस्थितरूपसे चला आ रहा है.

इस विद्यालयका स्वर्ण जयन्ती महोत्सव मधुवनमें श्री साहु शान्तिप्रसादजी कलकत्ता की अध्यक्षतामें अच्छी तरह सम्पन्न हुआ. जनता इतनी अधिक आई कि मधुवनकी तेरहपन्थी, बीसपन्थी तथा श्वेताम्बर कोठीकी सब धर्मशालाएँ ठसाठस भर गयीं. ऊपरसे डेरा-तम्बुओंका प्रबन्ध करना पड़ा.

माघ वदी १४ सम्वत् २०१२ को श्री ऋषभ निर्वाण दिवसका उत्सव मनाया गया. रात्रिमें वर्णी जयन्तीका आयोजन था, दूसरे दिन स्याद्वाद विद्यालयका स्वर्ण जयन्ती महोत्सव हुआ. विद्यालयका परिचय देते हुए उसके अबतकके कार्यकलापोंका निर्देश श्री पं० कैलाशचन्द्रजीने किया. साहुजीने अपना भाषण दिया तथा भाषणमें ही विद्यालयको चिरस्थायी करनेकी अपील समाजसे कर दी. समाजने हृदय खोलकर विद्यालयको सहायता दी विद्यालयको लगभग डेढ़ दो लाखकी आय हो गई.

उत्सव समाप्त होनेपर मैं प्रातःकाल श्री पार्श्व प्रभुकी वन्दना करनेके लिए गया. श्री विद्यार्थी नरेन्द्र तथा श्री 'नीरज' साथ थे. पार्श्वप्रभु की चरण-शरण में अनुपम शान्तिका अनुभव हुआ. रथयात्रा आदि कार्य शान्तिसे सम्पन्न हुए. हम सायंकाल मधुवनसे ईसरी आगये. मेला भी यथाक्रमसे विघट गया.

५५

आचार्य नमिसागरजी का समाधिमरण

आचार्य श्री नमिसागरजी महाराज महातपस्वी थे. आपकी आकांक्षा थी कि हमारा समाधिमरण वर्णी गणेशप्रसादके सान्निध्यमें हो. इस आकांक्षासे प्रेरित होकर आप देहलीसे मधुवन तकका लम्बा मार्ग तयकर श्री पार्श्वप्रभुके पादमूलमें पधारे थे. आप निर्द्वन्द्व-निरीह वृत्तिके साधु थे. संसारके विषम वातावरणसे दूर थे. आत्मसाधना ही आपका लक्ष्य था. ७० वर्षकी आपकी अवस्था थी फिर भी दैनिक चर्यामें रञ्चमात्र भी शिथिलता नहीं आने देते थे.

श्री सम्मेदशिखरजीकी यात्रा कर आप ईसरी आ गए जिससे सबको प्रसन्नता हुई. वृद्धावस्थाके कारण आपका शरीर दुर्बल हो गया तथा उदरमें व्याधि उत्पन्न हो गई जिससे आपने १२-१०-१६५६ शुक्रवारको समाधिका नियम ले लिया. आपने सब प्रकारके आहार और औषधिका त्याग कर केवल छाछ और जल ग्रहण करने का नियम रक्खा. महाराज तेरहपन्थी कोठीमें ठहरे थे. मैं आपके दर्शनके लिए गया. चलते-चलते मेरी श्वास भर आई. यह देख महाराज बोले—आपने क्यों कष्ट किया ? आप तो हमारे हृदयमें विद्यमान हैं.

अनन्तर सबकी सम्मतिसे उन्हें उदासीनाश्रममें ले आये और सरस्वतीभवनमें ठहरा दिया. इस समय आपने अपने ऊपरसे झुंगी हटवा दी तथा खुले स्थानमें पलाल पर शयन किया. जब अन्तिम दो दिन रह गये तब आपने छाँछका भी परित्याग कर दिया, केवल जल लेना स्वीकृत रक्खा. कार्तिक वदी ३ सं० २०१३ को १० बजे आपने तीन चुल्लू जलका आहार लिया. हम सामायिकमें बैठना ही चाहते थे कि इतनेमें समाचार मिला

कि महाराजका स्वास्थ्य एकदम खराब हो रहा है. हम उसी समय उनके पास आये. हमने पूछा कि महराज ! सिद्ध परमेष्ठीका ध्यान है ? उन्होंने हूँकार भरा और उसी समय उनके प्राण निकल गये. सबके हृदय शोकसे भर गये. रात्रिमें शोक-सभा हुई जिसमें मैंने श्रद्धाञ्जलि भाषणमें लोगोंसे यही कहा कि महाराज तो आत्मकल्याण कर स्वर्गमें कल्पवासी देव होगये. अब उनके प्रति शोक करनेसे क्या लाभ है ? शोक तो वहाँ होना चाहिये जहाँ अपना स्नेहभाजन व्यक्ति दुःखको प्राप्त हो. अब तो हम सबका पुरुषार्थ इस प्रकारका होना चाहिये कि जिससे जन्म-मरणकी यातनाओंसे बचकर हमारा आत्मा शाश्वत सुखका पात्र होसके.

५६

गणेश विद्यालयकी स्वर्ण जयन्ती

सत्तर्कसुधातरङ्गिणी पाठशाला सागर पहले सत्तर्क विद्यालयके नामसे प्रसिद्ध हुई, अब गणेश दि० जैन संस्कृत विद्यालय के नामसे प्रसिद्ध है. इस संस्थाने बुन्देलखण्ड प्रान्तमें काफी कार्य किया है. ५० वर्ष पूर्व जहाँ मन्दिरोंमें पूजा और विधान बाँचनेवाले विद्वान् नहीं मिलते थे वहाँ अब धवल-महाधवल जैसे ग्रन्थराजोंका अनुवाद और प्रवचन करनेवाले विद्वान् विद्यमान हैं. जहाँ संस्कृतके ग्रन्थ बाँचनेमें लोग दूसरेका मुख देखते थे वहाँ आज संस्कृतमें गद्य पद्य रचना करनेवाले विद्वान् तैयार हो गये हैं.

एक छोटीसी पाठशाला वृद्धि करते करते आज विशाल महाविद्यालयका रूप धारण कर समाजमें कार्य कर रही है. किसी समय इसमें ५ विद्यार्थी थे पर अब इसमें २०० छात्र भोजन पाते

हुए विद्याध्ययन करते हैं. एक पहाड़ीकी उपत्यिकामें विद्यालय-का सुन्दर और स्वच्छ भवन बना है उसीमें संस्कृत विभाग तथा हाई स्कूल इस प्रकार दोनों विभाग अपना कार्य संचालन करते हैं. संस्कृतमें प्रारम्भसे शास्त्री आचार्य तक तथा हाईस्कूल-में एन्ट्रेस तक पढ़ाई होती है.

इस संस्थाको भी कार्य करते हुए बहुत वर्ष हो गये थे इस-लिए इसके आयोजकोंने भी मधुवनमें इसकी स्वर्णजयन्ती मनाने-का आयोजन किया.

इसी बीच श्री कानजी स्वामी भी श्री गिरिराजकी वन्दनार्थ ससंघ पधार रहे थे जिससे लोगोंमें उक्त अवसर पर पहुँचनेकी उत्कण्ठा बढ़ रही थी. फाल्गुन सुदी १२-१३ सं० २०१३ उत्सव के दिन निश्चित किये गये. इस उत्सवमें बहुत जनता एकत्रित हुई. सब धर्मशालाएँ भर चुकीं और उसके बाद कमेटीको सैकड़ों डेरे तम्बुओंका भी प्रबन्ध करना पड़ा.

गणेश विद्यालयवालोंने मुझे उत्सवका अध्यक्ष बना दिया. उत्सवके प्रारम्भमें विद्यालयमें अबतक पढ़कर निकलनेवाले स्नातकों (छात्रों) की ओरसे ५२ स्वर्णमुद्राएँ विद्यालयकी सहायता के लिए हमारे सामने रखी गईं. विद्यालयके ५२ वर्षका कार्य-परिचय जनता के समक्ष उसके मन्त्री श्री नाथूराम गोदरे ने रक्खा. ५०-६० हजार रुपयेके वचन मिल गये. फुटकर सहायता भी लोगोंने बहुत दी. उत्सवका कार्यक्रम दो दिन चलता रहा और जनता बड़ी प्रसन्नतासे उसमें भाग लेती रही. उत्सव समाप्त होने पर पार्श्व प्रभुके दर्शनार्थ गिरिराज पर गये. पार्श्वप्रभुकी चरण-शरण में पहुँचने पर ऐसा आभास होने लगा जैसे पथ भ्रान्त पथिक अपने अभीष्ट स्थान पर पहुँच गया हो.

५७
दो सन्तों से मिलन

श्री कानजी स्वामी—

श्री कानजी स्वामी फागुन सुदी ५ वि० सं० २०१३ को संघ सहित मधुबन आ गये थे. प्रसन्नमुख तथा विचारक व्यक्ति हैं. आप प्रारम्भमें स्थानकवासी श्वेताम्बर थे परन्तु श्री कुन्दकुन्दस्वामीके ग्रन्थों का अवलोकन करनेसे दिगम्बर धर्मकी ओर आपकी दृढ़ श्रद्धा हो गई जिससे आपने स्थानकवासी श्वेताम्बर धर्म छोड़कर दिगम्बर धर्म धारण कर लिया. न केवल आपने ही किन्तु अपने उपदेशासे सौराष्ट्र तथा गुजरात प्रान्तके हजारों व्यक्तियोंको भी दिगम्बर जैन धर्ममें दीक्षित किया है. आपकी प्रेरणासे सोनगढ़ तथा उस प्रान्त में अनेक जगह दिगम्बर जैन मन्दिरोंका निर्माण हुआ है. आपके प्रवचन प्राय: निश्चय धर्मकी प्रमुखता लेकर होते हैं.

आचार्य श्री तुलसीजी—

अगहन सुदी ८ वि० सं० २०१६ को अणुव्रत आन्दोलनके प्रवर्तक आचार्य श्री तुलसी जी ससंघ उदासीन आश्रममें आये. आपके संघमें अनेक विद्वान् साधु थे. सभी अच्छे विचारोंके थे. आचार्य श्री तुलसी जी भद्र परिणामवाले साधु हैं. आपके विचार उत्तम हैं. वास्तव में अगर अणुव्रत आन्दोलन सफल हो जाय तो लोग सच्चरित्र होकर आत्मकल्याण के मार्ग पर चलने लगें. यही अणुव्रत तो महाव्रतों की नीव हैं.

मैं तो यही चाहता हूँ—'हे भगवन् ! संसारका कोई भी प्राणी दुखी न रहे. सभी अपने योग्य कल्याण-मार्ग पर चलें, सभी सच्चे सुख को प्राप्त करें.'